होनेसे यह सर्वमान्य दिगंबरजैनाचार्यप्रणीत ग्रंथोंके आधारसे यह जैन-ज्योतिष ग्रंथ एकत्रित किया हैं ।

मिथ्यात्वी अन्यमती ग्रंथोंके आधारसे जो शुभाशुभ फल बतलाया गया है उसमेंसे कुछ वाक्य यहां उद्धृत किये जाते हैं ।--

प्रयाणको शुभाशुभवार—

(ज्योतिषसार पृ० १७४)

अर्के क्लेशमनर्थकं च गमने सोमे च बंधुप्रिये ॥
चांगारेऽनलतस्करज्वरभयं प्राप्नोति चार्थं बुधे ॥
क्षेमारोग्यसुखं करोति च गुरौ लाभश्चशुक्रे शुभो ॥
मंदे बंधनहानिरोगमरणान्युक्तानि गर्गादिभिः ॥ २२ ॥

अर्थात् —रविवारको गमन करनेसे मार्गमें क्लेश और अनर्थ प्राप्त होता है. सोमवारको बंधु और प्रियदर्शन; मंगलको अग्नि, चोर व ज्वरभय बुधको द्रव्य लक्ष्मी प्राप्ति.·गुरुवारको क्षेम आरोग्य, सुख प्राप्ति; शुक्रवारको लाभ शुभफलकी प्राप्ति; शनिवारको बंधन, हानि, रोग, मरण प्राप्त होता है ।

प्रयाणमें उक्त नक्षत्र—

(ज्योतिषसार पृ० १७३)

हस्तेंदुमैत्रश्रवणाश्विनितिष्यपौष्णश्रविष्ठाश्च पुनर्वसुश्च ॥
प्रोक्तानि धिष्ण्यानि नव प्रयाणे त्यक्त्वा त्रिपंचादिमसप्ततारा: ।१५

अर्थात्–हस्त, मृगशीर्ष, अनुराधा, श्रवण, अश्विनी, पुष्य, रेवती घनिष्ठा, पुनर्वसु ये नक्षत्र गमनमें उक्त हैं, परंतु ३, ५, १, ७ तारा गमनमें त्यागना.

मध्यम नक्षत्र.

उत्तरा रोहणी चित्रा मूलमार्द्रा तथैव च ॥
जलोत्तरा भाद्रविश्वे प्रयाणे मध्यमाः स्मृताः ॥ १८ ॥

अर्थात्-रोहिणी, उत्तरा, मूल, चित्रा, आर्द्रा, पूर्वाषाढा, उत्तराभाद्रपदा, उत्तराषाढा ये नक्षत्र प्रस्थानमें मध्यम जानना.

वर्ज्य नक्षत्र-

पूर्वात्रयं मघा ज्येष्ठा भरणी जन्म कृत्तिका ॥
सार्पे स्वाती विशाखा च गमने परिवर्जयेत् ॥ १९ ॥
एकविंशतयोऽग्नेस्तु भरण्याः सप्तनाडिकाः ॥
एकादश मघायाश्च त्रिपूर्वाणां च षोडश ॥ २० ॥
विशाखासार्पचित्राणां रौद्रस्वात्योश्चतुर्दश ॥
आद्यास्तु घटिकास्त्याज्याः शेषांशे गमनं शुभं ॥ २१ ॥

अर्थात्—तीनों पूर्वा, मघा, ज्येष्ठा, भरणी, जन्मनक्षत्र, कृत्तिका, आश्लेषा, स्वाती, विशाखा ये नक्षत्र प्रयाणमें त्यागना; परंतु संकट समयमें तीनों पूर्वाकी १६ घडी, मघाकी ११ घडी, ज्येष्ठा संपूर्ण, भरणी ७ घडी, कृत्तिकाकी २१ घडी जन्मनक्षत्र संपूर्ण, आश्लेषा, विशाखा, चित्रा, स्वाती, आर्द्रा इन नक्षत्रकी आदिकी १४ घडी त्यागके प्रयाण करना।

" ज्योतिःशास्त्रफलं पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते "

अर्थात्—पौराणिक ज्योतिषीलोग कहते है कि—गणितज्योतिष तो केवल शुभाशुभ निर्णय ही के लिये है।"

(सिद्धांतशि० गोला० पृ० २२ श्लो० २६)

लग्ने च क्रूरभवने क्रूरः पातालगो यदा ॥
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जीवति बालकः ॥ १ ॥

अर्थात्—क्रूर ग्रहका लग्न होय और ४ स्थानमें क्रूर ग्रह होय, १० स्थानमें भी क्रूर होय तो उस बालकका जीवन बड़ा कष्टसे जानना।'

(ज्योतिषसार भाषा पृ० ७३

सप्तमे भुवने भानोर्मध्यस्थो भूमिनन्दनः ॥
राहुर्व्यये तथैवापि पिता कष्टेन जीवति ॥ २ ॥

अर्थात्— सप्तस्थानमें सूर्य होय और बारहवे स्थानमें राहु होय और इनके मध्यस्थानमें मंगल होय तो पिता बहुत कष्टसे बचे !

(ज्योतिषसार भाषा पृ० ७३)

अष्टमस्थो यदा राहुः केंद्रे चंद्रश्चनीचंगः ॥
तस्य सद्यो भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ ३ ॥

अर्थात्—अष्टमस्थानमें राहु और केंद्रमें नीचका चंद्रमा होय तो बालक उसी वक्त मृत्यु पावे इसमें कुछ संदेह नहीं–

(ज्यो० सा० पृ० ७३)

चतुर्थे च यदा राहुः षष्ठे चंद्रोष्टमेऽपि वा ॥
सद्य एव भवेन्मृत्युः शंकरो यदि रक्षति ॥ १ ॥

अर्थात्—जन्म समयमें चतुर्थ स्थानमें राहु ६ अथवा चंद्रमा ८ होय तो बालक तत्काल मृत्यु पावेगा; शंकर रक्षाकरे तो भी बचेगा नहीं.

(ज्यो० सा० पृ० ७२)

सूर्यात्रिकोणास्तगौ मंदारौ पापभगौ जन्मनि पिताबद्धः ॥
चंद्रेंगे मन्देन्त्ये पापदृष्टे कारागारे जन्म ॥ २ ॥

अर्थात्–जन्मलग्नमें सूर्यसे नवम, पंचम वा सप्तम स्थानमें पापग्रहकी राशिपर शनि मंगल होवे तो उस बालकका पिता कैदमें समझना चाहिये ॥ चंद्रमा लग्नमें होवे और शनि बारहमें होवे और इनपर पापग्रहकी दृष्टि होवे तो उस बालकका जन्म कारागार (जेलखाना) में हुवा जानना ॥ २ ॥ (ज्योतिषसार भाषा पृ० ६१)

ऐसे अन्यमति मिथ्यात्वी शास्त्रोंके आधार लेकर केई जैनीभाईने यात्रार्थ प्रयाण किया था। केई वर्षों पहले नातेपुते गाँवके (ता० मालशिरस जि० सोलापूर) अंदाज पचीस तीस जैनी श्रीसम्मेदशिखरजीके यात्रार्थ उत्तम सुमुहूर्त देखकर निकले थे, पीछे लौटते बखत सब बीमार होकर आये दो चार आदमी रेलमेंहि मर गये और मकानमें पोहोचनेपर कुछ दिन पीछे और भी दो चार मर गये। शोलापुरके जैनी दसाहूमड तलकचंद हरीचंद प्रेमचंद गुजरायमें सिद्धक्षेत्र तारंगाजीके पहाडपर मंदिरजीकी प्रतिष्ठा करनेकेलिये अन्यमति प्रख्यात ज्योतिषियोंके पास सुमुहूर्त देखकर घरसे निकले थे परंतु उनके हाथसे वहां प्रतिष्ठा हुई नहीं, प्रतिष्ठा होनेके पहिले आठ दस दिन रास्तेमें ही मर गये।

श्रीतीर्थक्षेत्र शत्रुंजय पालिठाणामें मंदिरप्रतिष्ठा करनेकेवास्ते शोलापूरसे सेठ रावजी कस्तुरचंद अन्यमति प्रसिद्ध ज्योतिषोंके पास सुमुहूर्त देखकर घरसे निकले थे प्रतिष्ठाके समय भट्टारक गुणचंद्र और भट्टारक कनककीर्ति इनमें वहां झगडा हुवा सो पालीठाणाके फौजदारने मिटाया और सेठ रावजी कस्तुरचन्दका जवान पुत्र वहां ही मर गया।

और भी शोलापुरके शेठ फतेचंद वस्ता गांधी केसरीयाजीके यात्रार्थ जानेके समय अन्यमति प्रसिद्ध ज्योतिषियोंके पास सुमुहूर्त देखकरही घरसे निकले थे। शोलापुर स्टेशनसे दो स्टेशनपर माढा गांव है वहां अपने सगेसोयरेको मिलनेके वास्ते उतरे थे परन्तु वहां खूनके गुन्हेमें वे पकडे गये पोलिस उनको पूनेको लेगये वहां उनको जन्मकालापानीकी सजा हो गई और आखरको वहां ही उनका देहावसान होगया।

पूनेके रा. बालगंगाधर तिलक बी. ए. एल्. एल्. बी. जिनकूं राजद्रोहके गुन्हे बाबद सजा हुई थी यह बात मि. व्हालेंटाइन चिरोल

नामक एक अंग्रेजने अपने पुस्तकमें प्रसिद्ध की थी, उनके ऊपर बाल-गंगाधर टिळकने अपनी अन्नुनुक्सानी हुई ऐसा दावा बिलायतके *प्रीव्हीकौंसिलमें दाखल किया था. वह दावा चलानेके वास्ते जब* तिलकसाहब पूनेसे निकले उस वखत अन्यमति प्रख्यात ज्योतिषियोंने उनको कहा था कि–" तुम दावा जीतोगे " परन्तु मि. तिलकने दावा जीता नहीं वे हार गये, यह बात उन्होंने पूनेके अखबारवालोंको लिखी *ऐसा उस वखतके पूनेके ज्ञानप्रकाशपरसे मालुम होता है।* मि. तिलकने उस वखत उन ज्योतिश्शास्त्रीयोंको उद्देशकर अंग्रेजी अखबारोंमें लिखा *था की–*"व्हेअर आर दोज ॲस्ट्रा लॉजर्स हू प्रेडिक्टेड माय सक्सेस्"!

ऐसे ही— महात्मा गांधीजी ता० १२ नोव्हेंबर १९३० को *जेलखानेसे मुक्त होनेवाले हैं ऐसे बहुतसे अन्यमति ज्योतिष लोगोंने* भाषित किया हुवा अखबारोंमें उस वखत प्रगट हुवा था, लेकिन आज ता० १२ जानेवारी १९३१ हो गयी तो भी उनकी मुक्तता नहीं हुयी !

इस ही प्रकार अन्यमतके वसिष्ठ ऋषि जो रामचन्द्रजीके परम गुरु समझते हैं उन्होंने जिस दिन शुभमुहूर्तपर रामचंद्रजीको राज्याभिषेक करनेको ठहरा था, लेकिन उस दिन रामचन्द्रजीको राज्याभिषेकके बदले वनवास ही भोगना प्राप्त हुवा ! इस आशयका अन्यमत ग्रन्थमें ऐसा उल्लेख है—

कर्मणो हि प्रधानत्वं किं कुर्वन्ति शुभा ग्रहाः ॥
वसिष्ठो दत्तलग्नश्च रामः किं भ्रमते वनम् ! ॥ १ ॥

इससे ऐसा तर्क होता है कि---रामचन्द्रजीके गुरु वसिष्ठाचार्य इनकी *योग्यता अन्यमतमें* बडी भारी मानी गई है व वे बडे विद्वान् माने गये हैं तो ऐसे रामचन्द्रजीके परम पवित्र श्रेष्ठ गुरु वसिष्ठाचार्य इस फलज्योति.शास्त्रमें निष्णात न थे क्या ? अथवा यह फलज्योति.शास्त्र

ही असत्य है ? यहां यह किसकी गल्ती समझना ? इन बातोंका योग्य खुलासा निःपक्षपाती विद्वान् अवश्य करें ?

मुम्बईसे मद्राससे कलकत्तासे व पंजाबसे जो रेलगाडी निकलती हैं उसमें बैठनेवाले लोग वैधृति, व्यतिपात अमावास्या, मृत्युयोग, दग्धयोग यमघंटयोग ऐसे कुमुहूर्तपर निकलते हैं व वे भी इच्छित स्थलकूं खुषीसे पहुचते हैं। और उनमें बैठे हुए हजारों प्यासिंजर्स अनेक स्टेशनपर उतरकर आनंदसे अपने अपने मकानोंमें जाते हैं।

कोई दफे अमृतसिद्धियोग सरीखे सुमुहूर्तपर निकली हुई रेलगाडी अकस्मात् होनेसे गिर जाती है इस वखत अन्दर बैठे हुये प्यासिंजर्स मृत्युमुहमें पडते हैं या जखमी भी होते हैं। ऐसे समयमें सुमुहूर्त या तिथि उनको सहाय करते नहीं. इसी तरह सुमुहूर्त प्रयाण समयमें देखने की आवश्यकता नहीं है ऐसा सिद्ध होता है।

कोई इसम कुयोगपर मरण पाया हो तो उस वखत—" पंचक किंवा सप्तक " उसको लगे हुये जान गेंहूके आटाके पांच या सात पुतले बनाकरके वे उस मेतके बराबर रखकर जलानेके अन्यमती मिथ्यात्वी ज्योतिषी कहते हैं। लेकिन ऐसा करना पाप है ऐसें जैनशास्त्रोंमें कहा है। कितने उपाध्येलोग भी ऐसे प्रसंगमें—जिन भगवानकी मूर्तीका पंचामृतसे अभिषेक करना कहते हैं परंतु ऐसा भी करनेको जैनज्योतिषमें कहा नहीं हैं उपाध्ये लोग अपने स्वार्थकेलिये ऐसे कहते हैं।

अन्यमती मिथ्यात्वी ज्योतिषशास्त्रोंमें वधुवरोंके घटित देखनेको कहा है उसमें—गण, नाडी, योनि, वैर योनि, प्रीति षडाष्टक, पापडीमंगल, मृत्युषडाष्टक, चुंदडी मंगल वगैरह अनेक प्रकार वधुवरोंके जन्मनक्षत्रोंसे देखते हैं उस वखत वधुवरोंके गुण अठारहसे ज्यादा छत्तीस तक आनेसे वह घटित पसंत करते हैं। इस प्रकार उत्तम घटित जुले हुये वे

दांपत्य इनमेंसे बहोत स्त्रियां विधवा हुई देखनेमें आती हैं। और बहोत-से पुरुष भी विधुर हुये ऐसे देखनेमें आते है।

ईससे अन्यमति मिथ्यात्वी लोगोंके ज्योतिषशास्त्रोंसे यह घटित देखना व्यर्थ है ऐसा कहना पडता.

स्वयंवरके समय यह घटित देखना शक्य ही नथा, वहां एकत्रितहुये राजे उसमेंसे जो वर उस राजकन्याके दिलको आयगा वह ही पसंतकरके उसके गलेमें माला डालती है। जैनज्योतिषमें घटित देखनेको कहा नहीं. इससे कितने कलियुगी पंडित कहते हैं कि-सब जैनशास्त्र तुमने देखा है क्या? दूसरे कितने कहते है- हाल अन्यमति ज्योतिष सरिखा जैनज्योतिष ग्रंथ उपलब्ध होने बाद हम तुमको बतावेंगे। ऐसा कह कर हालही अन्यमति मिथ्यात्वी ज्योतिषग्रंथोंके ऊपर विश्वास रखनेको कहते हैं व ब्राह्मणोंके और अपने ग्रंथ एकही हैं उनमें समन्वय करना चाहिये ऐसे कहते हैं याने किसी प्रकारसे अन्यमति ब्राह्मणोंके ग्रंथ जैनलोकोंमें घुसड देना यह उनकी इच्छा दीखती है.

केई पंडितलोक निमित्तशास्त्रमें अन्यमति मिथ्यात्वीका ज्योतिषशास्त्र घुसड देना चाहते हैं। परंतु इस बारेमें आदिनाथ पुराण पर्व ४१ में जो लिखा है सो इस मुजब—

> तदुपज्ञं निमित्तानि (दि) शाकुनं तदुपक्रमम् ॥
> तत्सर्गो ज्योतिषां ज्ञान तं मतं तेन तन्नयम् ॥१४७॥

इन दो श्लोकोंका अर्थ पं. दौलतरामजी अपने आदिपुराण वचनिका पर्व ४१ पत्र ७८६ में ऐसा लिखते है—

" अर निमित्तशास्त्र, शकुनशास्त्र ताहीके भाषे अर ताहीका भाख्या ज्योतिषशास्त्र ये तीनूं शास्त्र याहीके प्ररूपे सो सब शास्त्रनिके पाठी याही गुरु जानि आराधते भए ॥ १४७ ॥ "

इससे सिद्ध होता है कि—निमित्तशास्त्र अलग है और ज्योतिषशास्त्र अलग है और शाकुन शास्त्र भी अलग है। हमने जो जैनज्योतिष इस ग्रंथमें बताया है वोहि ज्योतिष भरतचक्री जानते थे। निमित्तशास्त्र यह ज्योतिषशास्त्रसे अलग है इसमें कोई संदेह नहीं.

केई पंडित जिनवाणीमें अन्यमति ज्योतिषी ग्रंथ घुसड देना चाहते हैं उसमेंका एक भास्कराचार्यने बना हुवा सिद्धांत शिरोमणि नामका ग्रंथ है उसमें गोलाध्याय नामका एक प्रकरण है उसमें पृथ्वी गोलाकार है और घूमती है ऐसा कहा है सो ऐसा लिखना जैनधर्मसे बिलकुल विरुद्ध है. जैनशासनमें दो सूर्य और दो चंद्र बताये हैं इसका भी खण्डन सिद्धांत शिरोमणिमें किया है सो इस मुजब है—

अन्यमतके ज्योतिषशास्त्र—

भास्कराचार्य सिद्धान्त शिरोमणेः गोलाध्यायः।

भास्कराचार्यकृत सिद्धान्तशिरोमणि उसमेंका यह गोलाध्याय है, इस ग्रंथके पृ. २७ में लिखा है सो इस मुजब—

"द्वौ द्वौ रवीन्दू भगणौ च तद्वदेकान्तरौतावुदयं व्रजेताम्
यदब्रुवन्नेवमनम्बराद्या ब्रवीम्यतस्तान् प्रति युक्तियुक्तं ॥ ८ ॥

अर्थात्–जैन लोग कहते हैं कि दो सूर्य, दो चंद्रमां, दो शशिचक्र प्रभृति हैं जिन दो २ मेंसे एक के भीतर दूसरेका उदय होता है इसका उत्तर मैं कहता हूं ॥ ८ ॥

भूः खेऽधः खलु यातीति बुद्धिर्बौद्ध ! मुधा कथम् ॥
जाता यातन्तु दृष्ट्वापि खेयत्क्षिप्तं गुरुक्षितिम् ॥ ९ ॥

अर्थात्–हे बौद्ध ! जिस समय किसी वस्तुको फेंकने हो तो फेंकने समय वह वस्तु पुनः पृथ्वीमें गिरती है, इसको देखते हुए और पृथ्वीको

गुरुपदार्थ जानते हुए भी पृथ्वी शून्यमें नीचेको पतित होती है, ऐसा भ्रममूलक विश्वास क्यों करते हो ? ॥ ९ ॥

किं गुण्य तव वैगुण्यं यो वृथा कृथाः ॥
मार्केंदूना विलोक्यान्हा ध्रुवमत्स्यपरिभ्रमम् ॥ १० ॥

अर्थात्–जब ध्रुव नक्षत्रका परिभ्रमण प्रतिदिन देखते हो तो चंद्रमा, सूर्यादिकी दो २ व्यर्थ कल्पना क्यों करते हो? एक क्या तुम्हारे वैगुण्यमें न गिना जावे ? ॥ १० ॥

यदिसमामुकुरोदरसन्निभाभगवतीधरणीतरणिः क्षितेः ॥
उपरिदूरगतोऽपिपरिभ्रमन्किमुनरैरमरैरिव नेक्ष्यते ॥ ११ ॥

अर्थात्–यदि यह पृथ्वी दर्पणोदरकी नाई समतल होती तो इसके ऊपर और दूर भ्रमण करनेसे सूर्य क्यों देव और मनुष्योंको दृष्ट होगा ? ॥ ११ ॥

यदि निशाजनकः कनकाचलः किमुतदन्तरगः स न दृश्यते ॥
उदगयं ननु मेरुरथांशुमान् कथमुदेति च दक्षिणभागके ॥ १२ ॥

अर्थात्—यदि कनकाचलही रात्रि होनेमें कारण होता है तो सूर्यके भीतर जानेपर वह पहाड क्यों नहीं दीखता ? मेरु उत्तरगोलमें अदृश्य है तो सूर्य किस प्रकार दक्षिणगोलमें दृश्य होगा ? ॥ १२ ॥

भूपंजरस्य भ्रमणालोकादाधारशून्याकुरिति प्रतीतिः ॥
स्वस्थं न दृष्टश्च गुरुक्षमातः खेऽधः प्रयातीति वदन्ति बौद्धाः ॥७॥

अर्थात् – भूमण्डलके भ्रमणको देखकर पृथिवीका आधार रहितता होना बोध होता है एवं पृथिवीके अलग होकर शून्यमें किसी गुरुपदार्थको अपने आप ठहरते नहीं देखकर बौद्ध लोग कहते हैं कि पृथिवी आकाशके नीचेकी और जाती है ॥ ७ ॥ ”

(सिद्धांत शि० गोलाध्याय पृ. २७)

यदि भास्कराचार्यादि अन्यमति सिद्धांत शिरोमणि आदि ग्रंथोंमें जैनमतके सिद्धांतका खंडन किया हुवा देखनेमें आता है तो ऐसें अन्यमति मिथ्यात्वियोंके ग्रंथोंपर जैनी कैसा विश्वास रक्खेगा ! विश्वास रखनेसे समयमूढताका दोष उसको लगेगा यह स्पष्ट है.

बृहद्द्रव्य संग्रहके संस्कृत टीकाकार श्री ब्रह्मदेवजी—" जीवादीसद्दहणं० " इस गाथाके नीचे समयमूढताका लक्षण पृ० १५१ में लिखते हैं—

" अथ समयमूढत्वमाह— । अज्ञानिजनचित्तचमत्कारोत्पादकं ज्योतिष्कमंत्रवादादिकं दृष्ट्वा वीतरागसर्वज्ञप्रणीतसमयं विहाय कुदेवागमलिंगानां भयाशास्नेहलोभैर्धर्मार्थं प्रणामविनयपूजापुरस्कारादिकरणं समयमूढत्वमिति । "

अर्थात्—अब समयमूढ मानें शास्त्र अथवा धर्ममूढताको कहते हैं । अज्ञानी लोगोंके चित्तमें चमत्कार (आश्चर्य) उत्पन्न करनेवाले जो ज्योतिष अथवा मंत्रवाद आदिको देख कर; श्रीवीतराग सर्वज्ञ द्वारा कहा हुवा जो समय (धर्म) है उसको छोडकर मिथ्यादृष्टिदेव, मिथ्या आगम और खोटा तप करनेवाले कुलिंगी इन सबका भयसे, वांछासे, स्नेहसे और लोभके वशसे जो धर्मकेलिये प्रणाम, विनय, पूजा, सत्कार आदिका करना उस सबको समयमूढता जानना चाहिये ।

इसपरसे सिद्ध होता है कि—अन्यमति ज्योतिषशास्त्र मंत्रतंत्रशास्त्र इनोंपर भरोसा रखना नहीं, फक्त सर्वमान्य दिगंबर जैनाचार्यप्रणीत जैनशास्त्रोंपर ही भरोसा रखना सो ही सच्चा जैनी कहा जायगा ।

केई जैनीपंडित कहते हैं कि—" प्रभातके समय सूर्यका ताप बहोत कम लगता है और दोपहरको बडा प्रखर लगता है व शामको बहोत कम लगता है इससे सूर्यग्रहके किरणोंमें तीव्रता और मंदता सिद्ध

होती है ऐसेही सभी ग्रहोंके संबंधमें जानना चाहिए " इसका उत्तर हम ऐसा देते हैं–प्रभात कालकी गरमी और दोपहरकी गरमी व शामके वखतकी गरमीमें तफावत रहाही करता है। प्रभात समय सब प्राणियोंको समानत गरमी कम लगती है व दोपहरके समय सब प्राणियोंको गरमी समानत अधिक लगती है फिर शामके वखत वह गरमी कम हो जाती है। मेषराशीवालेको गरमी अधिक लगती है. वहही गरमी वृषभ-राशीवालेको कम लगती ऐसा कभी नहीं हो सकता.

देहलीमें धूपकालके वैशाख मासमें ११२ एकसौ बारह डिग्री गरमी रहती है, श्रावण मासमें ८० अस्सी डिग्री और पौष मासमें ६० साठ डिग्री अंदाज रहती है सो सभी प्राणियोंको समान जानी जाती हैं वैसेही हरएक जगेमें अलग अलग प्रमाणसे गरमी गिनी जाती है परंतु मेष आदि राशीवालेको अधिक और वृषभादि राशी वालेको गरमी कमती लगती है ऐसा जाननेमें आता नहीं है, सभीको थंडी या गरमी समान भासती है, अभ्यासके सबबसे केई लोग थंडी गरमी जादा सहन करते हैं केई कम सहन करते हैं। सरदी गरमीका बोजा मेष वृषभादि राशी ऊपर लादना निरर्थक है।

ये जैनी पंडित ब्राह्मणोंके शास्त्रको अपनाया करते हैं, ब्राह्मणोंका ज्योतिषशास्त्र और जैनज्योतिष शास्त्रमें कोई भी सूरतसे समन्वय करना चाहते हैं माने मिला देना चाहते हैं उनको लगता हैं कि–ब्राह्मणोंका ज्योतिषशास्त्र जैनियोंने नहीं लिया तो जैनियोंका ज्योतिषशास्त्र अधूरा रहजायगा; परंतु समझना चाहिये कि–निर्ग्रंथाचार्यके रचेहुये प्रामाणिक ग्रंथोंके शिवाय अन्यमतिशास्त्र सब शास्त्राभास है। वे सब समयमूढता उपजावनेवाले हैं और मिथ्यात्व तरफ खेंच-नेवाले है। इस वास्ते मिथ्यात्वसे बचनेका उपाय जैनियोंने अवश्य करना चाहिये। जैनधर्ममें मिथ्यादर्शन सबसे बडा पाप है उसको छोडा

बिगर धर्मका मूल हाथमें लगता नहीं. कहा भी है— " मिथ्यात्वादिमलीसमं यदि मनो बाह्येपि शुद्धोदकैः ।। धौतं किं बहुशोपि शुद्धयति सुरापुर प्रपूर्णो घटः ।। " मिथ्यात्वसे मलिन हुवा अंतकरण सम्यक्त्व बिगर शुद्ध होता नहीं जैसे मद्यसे भरा हुवा घडा बाहरसे बार बार शुद्ध जलसे धोनेपर भी वह शुद्ध नहीं हो जाता उसके अंदरका सभी मद्य बाहर गिरा देनेसे ही शुद्ध होगा वैसा ही तीन मुढता अष्ट मद रहित सम्यक्त्व होनेसे सत्यार्थ धर्मका मार्ग मिलता है. इससे सबसे पहले मिथ्यात्वका त्याग करना चाहिये तभी सत्यार्थ जैनागमपर अपनी श्रद्धा लगती है ।

प्रकाशक

होती है ऐसेही सभी मर्होंके सबधमें जानना चाहिए " इसका उत्तर हम ऐसा देते हैं–प्रभात कालकी गरमी और दोपहरकी गरमी व शामके वखतकी गरमीमें तफावत रहाही करता है। प्रभात समय सब प्राणियोंको समानत गरमी कम लगती है व दोपहरके समय सब प्राणियोंको गरमी समानत अधिक लगती है फिर शामके वखत वह गरमी कम हो जाती है। मेषराशीवालेको गरमी अधिक लगती है वहही गरमी वृषभ-राशीवालेको कम लगती ऐसा कभी नहीं हो सकता.

देहलीमें धूपकालके वैशाख मासमें ११२ एकसौ बारह डिग्री गरमी रहती है, श्रावण मासमें ८० अस्सी डिग्री और पौष मासमें ६० साठ डिग्री अदाज रहती है सो सभी प्राणियोंको समान जानी जाती हैं वैसेही हरएक जगेमें अलग अलग प्रमाणसे गरमी गिनी जाती है परतु मेष आदि राशीवालेको अधिक और वृषभादि राशी वालेको गरमी कमती लगती है ऐसा जाननेमें आता नहीं है, सभीको थंडी या गरमी समान भासती है, अभ्यासके सबबसे केई लोग थंडी गरमी जादा सहन करते हैं केई कम सहन करते हैं। सरदी गरमीका बोजा मेष वृषभादि राशी ऊपर लादना निरर्थक है।

ये जैनी पंडित ब्राह्मणोंके शास्त्रको अपनाया करते हैं, ब्राह्मणोंका ज्योतिषशास्त्र और जैनज्योतिष शास्त्रमें कोई भी सूरतसे समन्वय करना चाहते हैं माने मिला देना चाहते हैं उनको लगता हैं कि–ब्राह्मणोंका ज्योतिषशास्त्र जैनियोंने नहीं लिया तो जैनियोंका ज्योतिषशास्त्र अधूरा रहजायगा; परतु समझना चाहिये कि–निर्ग्रंथाचार्यके रचेहुये प्रामाणिक ग्रंथोंके शिवाय अन्यमतिशास्त्र सब शास्त्राभास है। वे सब समयमूढता उपजावनवाले है और मिथ्यात्व तरफ खेंच-नेवाले है। इस वास्ते मिथ्यात्वसे बचनेका उपाय जैनियोंने अवश्य करना चाहिये। जैनधर्ममें मिथ्यादर्शन सबसे बडा पाप है उसको छोडा

बिगर धर्मका मूल हाथमें लगता नहीं. कहा भी है– " मिथ्यात्वादिमलीसमं यदि मनो बाह्येपि शुद्धोदकैः ॥ धौतः किं बहुशोपि शुद्ध्यति सुरापुर.प्रपूर्णो घटः ॥ " मिथ्यात्वसे मलिन हुवा अंतकरण सम्यक्त्व बिगर शुद्ध होता नहीं जैसे मद्यसे भरा हुवा घडा बाहरसे बार बार शुद्ध जलसे धोनेपर भी वह शुद्ध नहीं हो जाता उसके अंदरका सभी मद्य बाहर गिरा देनेसे ही शुद्ध होगा वैसा ही तीन मूढता अष्ट मद रहित सम्यक्त्व होनेसे सत्यार्थ धर्मका मार्ग मिलता है. इससे सबसे पहले मिथ्यात्वका त्याग करना चाहिये तभी सत्यार्थ जैनागमपर अपनी श्रद्धा लगती है ।

प्रकाशक.

श्रीमान् पंडितप्रवर संघई पन्नालालजी दूनीवाले इनके " विद्वज्जनबोधक " पुस्तकसे और
श्रीमान् पंडित पन्नालालजी गोधा उदासीन इनके चिट्ठीपरसे
ऋषि दिगंबर जैनाचार्य प्रणीत

प्रामाणिक ग्रंथोंकी यादी ।

नंबर	आचार्योंके नाम.	विक्रमसंवत	ग्रंथोंके नाम.	ग्रंथ संख्या.
१	श्रीपुष्पदंत, भूतबलि, वृषभाचार्य		श्रीधवल, महाधवल, जयधवल	३
२	श्रीकुंदकुंदाचार्य	२७	पंचास्तिकाय, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, रयणसार, अष्टपाहुड.	१३
३	श्रीजयसेनाचार्य-वसुविंदाचार्य	६०	प्रतिष्ठापाठ.	१
४	श्रीउमास्वामि आचार्य	७६	तत्वार्थसूत्र.	१
५	श्रीसमंतभद्राचार्य	१२५	देवागम, रत्नकरंडश्रावकाचार, स्वयंभूस्तोत्र, युक्त्यनुशासन.	४
६	श्रीमाघनंदि आचार्य	१२६	वन्देतान् •—जयमाला.	१
७	श्रीशिवायनाचार्य		भगवति आराधना.	१
८	श्रीपूज्यपाद स्वामि	४००	थोस्सामि० इत्यादि स्तोत्र, सर्वार्थसिद्धि, जैनेंद्रव्याकरण, समाधिशतक.	४
९	श्रीप्रभाचंद्राचार्य	४५३	प्रमेयकमलमार्तंड, न्यायकुमुदचंद्रोदय.	२
१०	श्रीवीरनंदि आचार्य	५५६	आचारसार, चंद्रप्रभकाव्य.	२

नंबर	आचार्योंके नाम.	विक्रमसंवत्.	ग्रंथोंके नाम.	ग्रंथ संख्या.
११	श्रीमाणिक्यनंदि आचार्य	५९९	परीक्षामुख	१
१२	श्रीनेमिचंद्रसिद्धांत चक्रवर्ति	७३५	त्रिलोकसार, गोमट्टसार, लब्धिसार, क्षपणसार, द्रव्यसंग्रह.	५
१३	श्रीमानतुंगाचार्य	७५६	भक्तामरस्तोत्र.	१
१४	श्रीअभयनंदि आचार्य	७७५	गोमट्टसार टीका, वृहज्जैनेन्द्र व्याकरण.	२
१५	श्रीचामुण्डराय	७९५	चारित्रसार.	१
१६	श्रीवट्टकेर स्वामि		मूलाचार.	१
१७	श्रीअकलंकदेव आचार्य	८५६	वृहत्त्रयी (३), लघुत्रयी (३), अष्टशती, राजवार्तिक.	८
१८	श्रीजिनसेनाचार्य	८७२	वृहत्आदिपुराण.	१
१९	श्रीगुणभद्राचार्य	८७५	उत्तरपुराण, आत्मानुशासन, जिनदत्तचरित्र.	३
२०	श्रीकार्तिकेय स्वामि		कार्तिकेयानुप्रेक्षा.	१
२१	श्रीयोगींद्रदेव आचार्य		परमात्मप्रकाश, योगसार.	२
२२	श्रीविद्यानंदि आचार्य (पात्रकेसरी)	८८१	अष्टसहस्री, आप्तपरीक्षा, प्रमाणपरीक्षा, पत्रपरीक्षा, श्लोकवार्तिक.	५
२३	श्रीवादिराज आचार्य	९४८	एकीभावस्तोत्र.	१
२४	श्रीअमृतचन्द्राचार्य	९६२	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, तत्त्वार्थसार, नाटकत्रयी (३)	५
२५	श्रीमल्लिषेणाचार्य	९६९	सज्जनचित्तवल्लभ.	१

नंबर	आचार्योंके नाम.	विक्रमसंवत्.	ग्रंथोंके नाम.	ग्रंथ संख्या.
२६	श्रीअमितगति आचार्य	१०२५	श्रावकाचार, सुभाषितरत्नसंदोह, धर्मपरीक्षा, योगसार.	४
२७	श्रीशुभचंद्राचार्य	१०५०	ज्ञानार्णव.	१
२८	श्रीकेशववर्णी	१२२७	गोमटसारलघुटीका.	१
२९	श्रीधर्मभूषण		न्यायदीपिका.	१
३०	श्रीपद्मनंदि आचार्य		पद्मनन्दिपंचविंशति.	१
३१	श्रीकुंदकुंदाचार्य		कल्याणमन्दिर स्तोत्र.	१
३२	श्रीअनंतवीर्याचार्य		प्रमेयचंद्रिका	१
३३	श्रीसकलकीर्ति आचार्य	१५००	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार, सार्थचतुर्विंशतिका, धर्मप्रश्नोत्तर, मूलाचारप्रदीपक, सिद्धान्तसारदीपक, सद्भाषितावलि, सुकुमारचरित्र, शांतिनाथपुराण, पार्श्वनाथपुराण, वर्धमानपुराण.	१०
३४	श्रीवादिचंद्राचार्य		ज्ञानसूर्योदयनाटक.	१
३५	श्रीपुज्यपादस्वामि		इष्टोपदेश.	१
३६	श्रीनेमिचंद्रभण्डारी		उपदेशसिद्धान्त रत्नमाला.	१
			श्रावकप्रतिक्रमण, और अकलंकाष्टक.	२
				२५

ज्योतिषवासी देवताओंके वर्णन.

श्रीमत्पूज्यपाद विरचित—

सर्वार्थसिद्धि चतुर्थाऽध्याय.

॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥

(श्रीमदुमास्वामिकृत)

टीका—ज्योतिस्स्वभावत्वादेषां पंचानामपि ज्योतिष्का इति सामान्यसंज्ञा अन्वर्था ॥ सूर्यादयस्तद्विशेषसंज्ञा नामकर्मोदयप्रत्ययाः ॥ सूर्याचंद्रमसाविति पृथग्ग्रहणं प्राधान्यख्यापनार्थं ॥ किंकृतं पुनः प्राधान्यं ? प्रभावादिकृतं ॥ क पुनस्तेषामावासः इत्यत्रोच्यते—अस्मात्समानभूमिभागादूर्ध्वं सप्तयोजनशतानि नवत्युत्तराणि ७९० उत्पत्य सर्वज्योतिषामधोभागविन्यस्तास्तारकाश्चरंति । ततो दशयोजनान्युत्पत्य चंद्रमसो भ्रमन्ति । ततश्चत्वारि योजनान्युत्पत्य बुधाः । ततस्त्रीणि योजनान्युत्पत्य शुक्राः । ततस्त्रीणि योजनान्युत्पत्य बृहस्पतयः ततस्त्रीणि योजनान्युत्पत्यांगारकाः । ततस्त्रीणि योजनान्युत्पत्य शनैश्चराश्चरन्ति । सएव ज्योतिर्गणगोचरो नभोऽवकाशो दशाधिकयोजनशतबहलस्तिर्यगसंख्यातद्वीपसमुद्रप्रमाणो घनोदधिपर्यन्तः ॥ उक्तंच—

णउदुत्तरसत्तसयादससीदीचदुदुगतियचउक्कं ॥
तारारविससिरिक्खाबुहभग्गवगुरुअंगिरारसणी ॥ १ ॥

पंडित जयचन्द्रजीकृत हिंदी वचनिका—

अर्थात्—इन पांचूहीकी ज्योतिष्क ऐसी सामान्यसंज्ञा ज्योतिः

स्वभावतें है, सो सार्थिक है। बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णक तारका ऐसी पांच विशेष संज्ञा हैं। सो यहु नामकर्मके उदयके विशेषतें भई है। बहुरि सूर्याचद्रमसौ ऐसो इन दोयकैं न्यारी विभक्ति करी सो इनका प्रधान पणा जनावनेके अर्थि है। इनके प्रधान पणा इनके प्रभाव आदिकरि किया है।

बहुरि इनके आवास कहां है, सो कहिये है। इस मध्यलोककी समान भूमिके भागतें सातसैं नवै योजन ऊपरि जाय तारानिके विमान विचरै हैं। ते सर्व ज्योतिषीनिके नीचैं जानना। इनतैं दश योजन ऊपरि जाय सूर्यनिके विमान विचरे हैं। तातैं अशी योजन ऊपरि जाय चंद्रमानिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपर जाय नक्षत्रनिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपर जाय बुधनिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपरि जाय बृहस्पतिके विमान हैं। तातैं चारि योजन ऊपर जाय मंगलके विमान हैं। तातैं चारि योजन ऊपर जाय शनैश्चरके विमान हैं। यहु ज्योतिष्क मंडलका आकाशमें तलैं ऊपरि एकसौ दश योजन मांहीं जानना। बहुरि तिर्यग्विस्तार असख्यात द्वीपसमुद्रप्रमाण घनोदधिवात वलय पर्यंत जानना। इहा उक्तच गाथा है ताका अर्थ—सातसै नवै, दश, अशी, च्यारि त्रिक, दोय चतुष्क ऐसैं एते योजन अनुक्रमतैं—तारा ।७९०। सूर्य १०। चंद्रमा ८०। नक्षत्र ३। बुध ३। शुक्र ३। बृहस्पति ३। मंगल ४। शनैश्चर ४। इनका विचरना जानना॥

ज्योतिष्काणां गतिविशेषप्रतिपत्त्यर्थमाह—

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

(श्रीमदुमास्वामिकृत)

टीका—मेरोःप्रदक्षिणा मेरुप्रदक्षिणा। मेरुप्रदक्षिणा इतिवचनं गतिविशेषप्रतिपत्त्यर्थं विपरीतगतिर्मा विज्ञायीति॥ नित्यगतय इति विशेषणमनुपरतक्रियाप्रतिपादनार्थं। नृलोकग्रहणं विषयार्थं। अर्ध-तृतीयेषु द्वीपेषु द्वयोश्च समुद्रयोर्ज्योतिष्का नित्यगतयो नान्यत्रेति॥

ज्योतिष्कविमानानां गतिहेत्वभावात्तद्वृत्त्यभाव इतिचेन्न, असिद्धत्वात्। गतिरताभियोग्यदेवप्रेरितगतिपरिणामात्कर्मविपाकस्य वैचित्र्यात्तेषां हि गतिमुखेनैव कर्म विपच्यत इति ॥ एकादशभिर्योजनशतैरेकविंशैर्मेरुमप्राप्य ज्योतिष्काः प्रदक्षिणाश्चरन्ति ॥

हिंदी वचनिका—

आगैं ज्योतिषीनिका गमनका विशेष जाननेके अर्थ कहते हैं—

अर्थात्—मेरुप्रदक्षिणा ऐसा वचन है, सो गमनका विशेष जाननेकूं है। अन्य प्रकार गति मति जानू। बहुरि नित्यगतय ऐसा वचन है सो निरंतर गमन जनावनेके अर्थि है। बहुरि नृलोकका ग्रहण है सो अढाई द्वीप दोय समुद्रमें नित्य गमन है अन्य द्वीप समुद्रनिमें गमन नाहीं।

इहां कोई तर्क करै है, ज्योतिषीदेवनिका विमाननिकैं गमनका कारण नाहीं। तातैं गमन नाहीं। ताकूं कहिये, यह कहना अयुक्त है। जातैं तिनके गमनविषैं लीन ऐसैं आभियोग्य जातिके देव तिनका कीया गतिपरिणाम है। इन देवनिकैं ऐसाही कर्मका विचित्र उदय है, जो गतिप्रधानरूप कर्मका उदय दे है।

बहुरि मेरुतैं ग्यारहसैं इकईस योजन छोड उपरैं गमन करैं हैं। सो प्रदक्षिणारूप गमन करै हैं। इन ज्योतिषीनिका अन्यमती कहै है, जो भूगोल अल्पसा क्षेत्र है। ताके ऊपरि नीचैं होय गमन है। तथा कोई ऐसैं कहै है, जो ए ज्योतिषी तौ थिर है। यह भूगोल भ्रमै है। तातैं लोककूं उदय अस्त दीखै है। बहुरि कहै हैं जो हमारे कहने तैं ग्रहण आदि मिलै है। सो यह सर्व कहना प्रमाणबाधित है। जैनशास्त्रमें इनका गमनादिकका प्ररूपण निर्बाध है। उदय अस्तका विधान सर्वतै मिलै है। याका विधिनिषेधकी चर्चा श्लोकवार्तिकमें है। तथा गमनादिकका निर्णय त्रैलोक्यसार आदि ग्रंथनिमें है, तहांतैं जानना ॥

गतिमज्ज्योतिस्सम्बन्धेन व्यवहारकालप्रतिपत्त्यर्थमाह—

॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥

(श्रीमदुमास्वामिकृत)

टीका—तद्ग्रहणं गतिमज्ज्योतिःप्रतिनिर्देशार्थम् । न केवलया गत्या नापि केवलैर्ज्योतिर्भिः कालः परिच्छिद्यते, अनुपलब्धेरपरिवर्तनाच्च ॥ कालो द्विविधो व्यावहारिको मुख्यश्च ॥ व्यावहारिकः कालविभागस्तत्कृतः समयावलिकादिः क्रियाविशेषपरिच्छिन्नोऽन्यस्यापरिच्छिन्नस्य परिच्छेदहेतु ॥ मुख्योऽन्यो वक्ष्यमाणलक्षण ॥

हिंदी वचनिका—

आगैं इन ज्योतिषीनिके संबंधकरि व्यवहार कालका जानना है तिसके अर्थि कहे हैं—

अर्थात्—इन ज्योतिषी देवनिकरि किया कालका विभाग है । इहां तत्का ग्रहण गति सहित ज्योतिष्क देवनिके कहनेके अर्थि है । सो यहु व्यवहारकाल केवल गतिहीकरि तथा केवल ज्योतिषीनिकरि नाहीं जाना जाय है । गति सहित ज्योतिषीनिकरि जाना जाय है । तातैं गमन तो इनका काहूकू दीखै नाहीं । बहुरि गमन न होय तो ये थिरही रहैं । तातैं दोऊ संबंध लेना । तहां काल है सो दोय प्रकार है । व्यवहारकाल निश्चयकाल । तिनमें व्यवहारकालका विभाग इन ज्योतिषीनिकरि किया हुवा जानिये है, सो समय आवली आदि क्रिया विशेषकरि जाना हुवा व्यवहार काल है । सो नाहीं जाननेमें आवै ऐसा जो निश्चयकाल ताके जाननेकू कारण है सो निश्चय कालका लक्षण आगैं कहसी, सो जानना ॥

इतरत्र ज्योतिषामवस्थानप्रतिपादनार्थमाह—

॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥

[श्रीउमास्वामिकृत]

टीका—बहिरित्युच्यते कुतो बहिः ? नृलोकात् ॥ कथमव-

ष्यते ' अर्थवशात् विभक्तिपरिणामो भवति ॥ ननुच नृलोके नित्यगतिवचनादन्यत्रावस्थानं ज्योतिष्काणां सिद्धम् अतो बहिरवस्थिता इति वचनमनर्थकमिति । तन्न । किं कारणं ? नृलोकादन्यत्र बहिर्ज्योतिषामस्तित्वमवस्थानं चासिद्धम् । अतस्तदुभयसिद्ध्यर्थं बहिरवस्थिता इत्युच्यते ॥ विपरीतगतिनिवृत्त्यर्थं कादाचित्कगतिनिवृत्त्यर्थंच सूत्रमारब्ध ॥

हिंदी वचनिका—

आगें मनुष्य लोकतें बाहिर ज्योतिष्क अवस्थित है । ऐसा कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

अर्थात्—"बहि" कहिये मनुष्यलोकतें बाहिर ते ज्योतिष्क अवस्थित कहिये गमन रहित हैं इहां कोई कहै है, पहले सूत्रमें कह्याहै जो मनुष्य लोकतें ज्योतिष्क देवनिके नित्यगमन है । सो ऐसा कहनेतें यह जाना जाय है, जो यातैं बाहिरकेकैं गमन नाहीं । फेरि यह सूत्र कहना निष्प्रयोजन है ।

ताका समाधान—जो इस सूत्रतें मनुष्यलोकतें बाहिर अस्तित्वभी जाना जाय है । अवस्थान भी जाना जाय है, यातैं दोऊ प्रयोजनकी सिद्धिके अर्थि यह सूत्र है अथवा अन्य प्रकार करि गमनका अभावकै अर्थि भी यह सूत्र जानना ॥

श्रीमद्भट्टाकलंक देव कृत राजवार्तिकमेंसे अध्याय ४ में ज्योतिष्क देवताओंके वर्णन सूत्र और भाष्य—

ज्योतिष्काः सूर्याचंद्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥

[श्रीउमास्वामिकृत]

द्योतनस्वभावत्वाज्ज्योतिष्काः ॥ १ ॥–द्योतनं प्रकाशनं तत्स्वभावत्वादेषां पंचानामपि विकल्पानां ज्योतिष्का इतीयमन्वर्था सामान्यसंज्ञा । तस्य सिद्धि –

ज्योतिःशब्दात्स्वार्थे के निष्पत्तिः ॥ २ ॥-ज्योति शब्दात् स्वार्थे के सति ज्योतिष्का इति निष्पद्यते। कथं स्वार्थे क· ? यवादिषु पाठात्।

प्रकृतिलिंगानुवृत्तिप्रसंग इति चेन्नातिवृत्तिदर्शनात् ॥ ३ ॥-स्यान्मतं यदि स्वार्थिकोऽयं क. ज्योति शब्दस्य नपुसकलिंगत्वात् कोत-स्यापि नपुंमकलिंगता प्राप्नोतीति ? तन्न। किंकारणं, अतिवृत्तिदर्शनात्। प्रकृतिलिंगातिवृत्तिरपि दृश्यते यथा कटीर समीरः शुंडार इति।

तद्विशेषाः सूर्यादयः ॥ ४ ॥-तेषां ज्योतिष्काणां सूर्यादयः पंच विकल्पाः द्रष्टव्याः।

पूर्ववत्तन्निर्वृत्ति. ॥ ५ ॥-तेषां संज्ञाविशेषाणां पूर्ववन्निर्वृत्तिर्वेदितव्या देवगतिनामकर्मविशेषोदयादिति।

सूर्याचंद्रमसावित्यानङ्देवताद्वंद्वे ॥ ६ ॥ सूर्यश्च चंद्रमाश्च द्वंद्वे कृते पूर्वपदस्य देवताद्वंद्वे इत्यानङ् भवति।

सर्वत्रप्रसंगइतिचेन्नपुनर्द्वंद्वग्रहणादिष्टे वृत्तिः ॥ ७ ॥-स्यादेतत् यदि "देवताद्वंद्वे" इत्यानङ् भवति इहापि प्र प्र ति ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकताराः किन्नरकिंपुरुषादयः असुरनागादय इति तन्न किं कारणं? आनङ् द्वंद्व इष्यत. द्वंद्व इति वर्तमाने पुनर्द्वन्द्ववृत्तिर्जायते इति।

पृथग्ग्रहणं प्राधान्यख्यापनार्थं ॥ ८ ॥ सूर्याचंद्रमसोर्ग्रहादिभ्यः पृथक् ग्रहणं क्रियते प्राधान्यख्यापनार्थं। ज्योतिष्केषु हि सर्वेषु सूर्याचंद्रमसो च प्राधान्यं। किंकृतं पुनरस्त ? प्रभावादिकृतं।

सूर्यस्यादौ ग्रहणं अल्पाच्तरत्वात् अभ्यर्हितत्वाच्च ॥ ९ ॥—सूर्यशब्द आदौ प्रयुज्यते कुतः अल्पाच्तरत्वात् अभ्यर्हितत्वाच्च सर्वाभिभवसमर्थाद्धि अभ्यर्हितः सूर्य·।

ग्रहादिषु च ॥ १० ॥- किमल्पाच्तरत्वात् अभ्यर्हितत्वाच्च पूर्वनिपातः इति वाक्यशेष। ग्रहशब्दस्तावत् अल्प च्तरोऽभ्यर्हितश्च तारकाशब्दान्नक्षत्रशब्दोऽभ्यर्हितः। क पुनरेषां निवास· ?

इत्यभोच्यते अस्मात् समात् भूमिभागादूर्ध्वं सप्तयोजनशतानि नवत्युत्तराणि उत्प्लुत्य सर्वज्योतिषां अधोभागविन्यस्तास्तारकाश्चरंति । ततो दशयोजनान्युत्प्लुत्य सूर्याश्चरंति । ततोऽशीतियोजनान्युत्प्लुत्य नक्षत्राणि । ततस्त्रीणि योजनानि उत्प्लुत्य बुधाः । ततस्त्रीणि योजनानि उत्प्लुत्य शुक्राः । ततः त्रीणि योजनान्युत्प्लुत्य अंगारकाः । ततः चत्वारि योजनान्युत्क्रम्य शनैश्चराश्चरन्ति । स एष ज्योतिर्गणगोचरः नभोऽवकाशः दशाधिकयोजनशतबहुलः तिर्यगसंख्यातद्वीपसमुद्रप्रमाणो घनोदधिपर्यंतः । उक्तं च–

णवदुत्तरसत्तसया दससीदिचदुतिगं च दुग चदुक्कं ॥
तारारविससिरिक्खाबुहभग्गवगुरुअंगिरारसणी ॥ १ ॥

तत्राभिजित् सर्वाभ्यंतरचारी, मूल सर्वबहिश्चारी, भरण्य सर्वाधश्चारिण्य, स्वातिः सर्वोपरिचारी । तप्ततपनीयसमप्रभाणि लोहिताक्षमणिमयानि अष्टचत्वारिंशद्योजनैकषष्टिभागविष्कंभायामानि तत्रिगुणाधिकपरिधीनि चतुर्विंशतियोजनैकषष्टिभागबाहुल्यानि अर्धगोलकाकृतीनि षोडशभिर्देवसहस्रैरूढानि सूर्यविमानानि, प्रत्येकं पूर्वदक्षिणोत्तरान् भागान् क्रमेण सिंहकुंजरवृषभतुरगरूपाणि विकृत्य चत्वारि चत्वारि देवसहस्राणि वहंति । एषामुपरि सूर्याख्या देवास्तेषां प्रत्येकं चतस्रो अग्रमहिष्यः । सूर्यप्रभा सुसीमा अर्चिमालिनी प्रभंकरा चेति । प्रत्येकं देवीचतुःसहस्रविकरणसमर्थाः । ताभिः सह दिव्यसुखमनुभवंतोऽसंख्येयशतसहस्राधिपतयः सूर्याः परिभ्रमंति विमलमृणालवर्णान्यंकमयानि चंद्रविमानानि षट्पंचाशद्योजनैकषष्टिभागविष्कंभायामानि अष्टाविंशतियोजनैकषष्टिभागबाहुल्यानि, प्रत्येकं षोडशभिः देवसहस्रैः पूर्वादिषु दिक्षु क्रमेण सिंहकुंजराश्ववृषभरूपविकारिभिरूढानि । तेषामुपरि चंद्राख्या देवाः । तेषां प्रत्येकं चतस्रोऽग्रमहिष्यः चंद्रप्रभा सुसीमा अर्चिमालिनी प्रभंकरा चेति, प्रत्येकं चतुर्देवीविकरणपटवस्ताभिः सह सुखमुपभुंजानाश्चंद्रमसोऽसंख्येयविमानशतसहस्राधिपतयो विहरन्ति । अंजनसमप्रभाणि अरिष्टमणिमयानि, राहुविमानान्येकयोज-

ऽायामविष्कंभाण्यर्धतृतीयधनु शतंच हुल्यानि । नवमल्लिकाप्रमाणि रजतपरिणामानि शुक्रविमानानि गव्यूतायामविष्कंभाणि, जात्यमुक्ताद्युतीनि अंकमणिमयानि बृहस्पतिविमानानि देशोनगव्यूतायामविष्कंभाणि, कनकमयान्यर्जुनवर्णानि, बुधविमानानि, तपनीयमयानि, तप्ततपनीयाभानि, शनैश्चरविमानानि, लोहिताक्षमयानि तप्तकनकप्रभाण्यंगारकविमानानि, बुधादिविमानान्यर्धगव्यूतायामविष्कंभाणि । शुक्रादिविमानानि राहुविमानतुल्यबाहुल्यानि । राह्वादिविमानानि प्रत्येकं चतुर्भिर्देवसहस्रैरुह्यन्ते । नक्षत्रविमानानां प्रत्येकं चत्वारि देवसहस्राणि वाहकानि । तारकविमानानां प्रत्येकं द्वे देवसहस्रे वाहके । शह्वाभियोग्यानां रूपविकाराश्चंद्रवद्वेद्याः । नक्षत्रविमानानां उत्कृष्टो विष्कंभः क्रोशः । तारकाविमानानां वैपुल्यं जघन्यं क्रोशचतुर्भागः मध्यमं साधिकः क्रोशचतुर्भागः । उत्कृष्टं चार्धगव्यूतं । ज्योतिष्कविमानानां सर्वजघन्यवैपुल्यं पंचधनुशतानि । ज्योतिषामिंद्राः सूर्याचन्द्रमसस्ते चाऽसंख्याताः । ज्योतिष्काणां गतिविशेषप्रतिपत्त्यर्थमाह—

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

(श्री उमास्वामि कृत)

मेरुप्रदक्षिणवचनं गत्यंतरनिवृत्त्यर्थं ॥ १ ॥— मेरोः प्रदक्षिणाः मेरुप्रदक्षिणा इत्युच्यते । किमर्थं ? गत्यंतरनिवृत्त्यर्थं विपरीता गतिर्मा भूत् ।

गतेः क्षणेक्षणेऽन्यत्वात् नित्यत्वाभाव इति चेन्नाऽऽभीक्ष्ण्यस्य विवक्षितत्वात् ॥ २ ॥—अयंनित्यशब्दः कूटस्थेष्वविचलेषु भावेषु वर्तते गतिश्च क्षणेक्षणेऽन्या, ततोऽन्या नित्येति विशेषणं नोपपद्यत इति चेन्न । किंकारणं ? आभीक्ष्ण्यस्य विवक्षितत्वात् । यथा नित्यप्रहसितो नित्यप्रजल्पित इति आभीक्ष्ण्यं गम्यत इति । एवमिहापि नित्यगतयः अनुपरतगतयः । इत्यर्थः ।

अनेकान्ताच्च ॥ ३ ॥–यथा सर्वभावेषु द्रव्यार्थादेशात् स्यान्नित्यत्वं, पर्यायार्थादेशात् स्यादनित्यत्वं । गतावपीति नित्यत्वमविरुद्धमविच्छेदात् ।

नृलोकग्रहणं विषयार्थं ॥ ४ ॥ ये अर्धतृतीयेषु द्वीपेषु द्वयोश्च समुद्रयोर्ज्योतिष्कास्ते मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतय नान्ये इति विषयावधारणार्थं नृलोकग्रहणं क्रियते ।

गतिकारणाभावादयुक्तिरिति चेन्न गतिरताभियोग्यदेवबहनात् ॥ ५ ॥–स्यान्मतं इहलोके भावानां गतिः कारणवती दृष्टा नच ज्योतिष्कविमानानां गते कारणमस्ति ततस्तदयुक्तिरिति तन्न । किंकारणं गतिरताभियोग्यदेववहनात् । गतिरता हि आभियोग्यदेवा वहंतीत्युक्तं पुरस्तात् ।

कर्मफलविचित्रभावाच्च ॥ ६ ॥ कर्मणां हि फलं वैचित्र्येण पच्यते ततस्तेषां गतिपरिणतिमुखेनैव कर्मफलमवबोद्धव्यं । एकादशभि योजनशतैरेकविंशैर्मेरुमप्राप्य ज्योतिष्का प्रदक्षिणाश्चरन्ति । तत्र जंबुद्वीपे द्वौ सूर्यौ, द्वौ चन्द्रमसौ, षट्पंचाशत् नक्षत्राणि, षट्सप्तत्यधिकं ग्रहशतं, एककोटीकोटिशतसहस्रत्रयस्त्रिंशत्कोटीकोटिसहस्राणि नवकोटीकोटिशतानि पंचाशच्च कोटीकोट्यस्तारकाणां । लवणोदे चत्वार सूर्या. चत्वारश्चंद्राः, नक्षत्राणां शतं, द्वादशग्रहाणां, त्रीणि शतानि द्वापंचाशानि द्वे कोटीकोटिशतसहस्रे सप्तषष्टि कोटीकोटिसहस्राणि नवच कोटीकोटिशतानि तारकाणां । धातकीखण्डे द्वादशसूर्याः, द्वादशचंद्राः, नक्षत्राणां त्रीणिशतानि, षट्त्रिंशानि ग्रहाणां, सहस्रं षट्पंचाशं अष्टौ कोटीकोटिशतसहस्राणि सप्तत्रिंशच्च कोटीकोटिशतानि तारकाणां । कालोदे द्वाचत्वारिंशदादित्या द्वाचत्वारिंशच्चन्द्राः, एकादश नक्षत्रशतानि, षट्सप्तत्यधिकानि षट्त्रिंशतग्रहशतानि षण्णवत्यधिकानि अष्टाविंशति कोटीकोटिशतसहस्राणि द्वादश कोटीकोटिसहस्राणि नव कोटीकोटिशतानि पंचाशत्कोटीकोट्यस्तारकाणां । पुष्करार्धे द्वासप्ततिः

सूर्याः द्वासप्ततिश्चंद्राः, द्वे नक्षत्रसहस्रे, षोडशत्रिषष्टिः ग्रहशतानि, षट्‌त्रिंशानि अष्टचत्वारिंशत्कोटीकोटिशतसहस्राणि द्वे कोटीकोटिशते तारकाणां बाह्ये पुष्करार्धेच ज्योतिषामियमेव संख्याततश्चतुर्गुणाः पुष्करवरोदे, ततः परा द्विगुण द्विगुणा ज्योतिषां संख्या अवसेया। जघन्यं तारकांतरं गव्यूतसप्तभाग। मध्यं पंचाशत् गव्यूनानि। उत्कृष्टं योजनसहस्रम्। जघन्यं सूर्यांतरं चंद्रान्तरंच नवनवति सहस्राणि योजनानां षट्‌शतानि चत्वारिंशदधिकानि। उत्कृष्टमेकं योजनशतसहस्रं षट्‌शतानि षष्ट्युत्तराणि जंबूद्वीपादिषु एकैकस्य चंद्रमसः षट्‌षष्टिकोटीकोटिशतानि पंचसप्ततिश्च कोटीकोट्यः तारकाणां। अष्टाशीतिर्महाग्रहाः, अष्टाविंशतिनक्षत्राणि, परिवारः सूर्यस्य चतुरशीति मण्डलशतं। अशीतिः योजनशतं जंबूद्वीपस्य अंतरमवगाह्य–प्रकाशयति। तत्र पंचषष्टिरभ्यन्तरमण्डलानि। लवणोदस्यांतस्त्रीणि त्रिंशानि योजनशतान्यवगाह्य प्रकाशयति। तत्र मण्डलानि बाह्यानेकान्नविंशतिशतं,द्वियोजनमेकैकमण्डलान्तरं, द्वे योजने अष्टचत्वारिंश योजनैकषष्टिभागाश्च एकैकमुदयान्तरं, चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्रे. अष्टाभिश्च शतैर्विंशैरप्राप्य मेरु सर्वाभ्यंतरमण्डलं सूर्यः प्रकाशयति। तस्य विष्कंभो नवनवति. सहस्राणि षट्‌शतानि चत्वारिंशानि योजनानां। तदाहनि मुहूर्ताः अष्टादश भवन्ति। पंचसहस्राणिद्वेशते एकपंचाशद्योजनानां एकान्नत्रिंशद्योजनषष्टिभागाश्च मुहूर्तगति। सर्वबाह्यमण्डले चरन्सूर्यः पंचचत्वारिंशत्सहस्रैः त्रिभिश्च शतैः त्रिंशैर्योजनानां मेरुमप्राप्य भ्रामयति। तस्य विष्कम्भः एकं शतसहस्र षट्‌शतानि च षष्ट्यधिकानि योजनानां। तदा दिवसस्य द्वादश मुहूर्ता। पंचसहस्राणि त्रीणि शतानि पंचोत्तराणि योजनानां पंचदश योजनषष्टिभागाश्च मुहूर्तगतिक्षेत्रं। तदा ि शद्योजनसहस्रेषु अष्टसु च योजनशतेषु अर्धे द्वात्रिंशेषु स्थितो दृश्यते। सर्वाभ्यन्तरमण्डलदर्शनविषयपरिमाणं प्रागुक्तं। मध्ये हानिवृद्धिक्रमो यथागमंवेदितव्यः। चन्द्रमण्डलानि पंचदशद्वीपावगाहः, समुद्रावगाहश्च सूर्यवद्वेदितव्य.। द्वीपाभ्यन्तरे पंचमण्डलानि। समुद्रमध्ये दश। सर्वबाह्याभ्यन्तरम-

ण्डलविष्कम्भविधिः, मेरुचंद्रांतरप्रमाणं च सूर्यवत्प्रत्येतव्यं । पंचदशानां मण्डलानामन्तराणि चतुर्दश । तत्रैकैकस्य मण्डलान्तरस्य प्रमाणं पंचत्रिंशत् योजनानि योजनैकषष्ठिभागास्त्रिंशत्तद्भागस्य चत्वारः सप्तभागाः ३५—३०—४ । सर्वाभ्यन्तरमण्डले पंचसहस्राणि त्रिसप्तत्यधिकानि योजनानां ६१—७ सप्तसप्ततिर्भागशतानि चतुश्चत्वारिंशानि मण्डलं त्रयोदशभिर्भागसहस्रैः सप्तभिश्च भागशतैः पंचविंशैः स्थित्वाऽवशिष्टानि । चन्द्रः एकैकेन मुहूर्तेन गच्छति सर्वबाह्यमण्डले पंचसहस्राणि शतं च पंचविंशं योजनानां एकान्नसप्ततिर्भागशतानि नवत्यधिकानि मण्डलं त्रयोदशभिः भागसहस्रैः सप्तभिश्चभागशतैः पंचविंशैः स्थित्वाऽवशिष्टानि चन्द्रः एकैकेन मुहूर्तेन गच्छति । दर्शनविषयपरिमाणं सूर्यवद्वेदितव्यं । हानिवृद्धिविधानं च यथागमं अवसेयं । पंचयोजनशतानि दशोत्तराणि सूर्याचंद्रमसोश्चारक्षेत्रविष्कम्भः ॥

गतिमज्ज्योतिःसंबंधेन व्यवहारकालप्रतिपत्त्यर्थमाह—

तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥—तदिति किमर्थं ? ॥ गतिमज्ज्योतिःप्रतिनिर्देशार्थं तद्वचनं ॥ १ ॥— गतिमतां ज्योतिषां प्रतिनिर्देशार्थं तदित्युच्यते । नहि केवलगत्या नापि केवलज्योतिभिः कालः परिच्छिद्यते, अनुपलब्धेरपरिवर्तनाच्च । ज्योतिःपरिवर्तनलभ्योहि कालपरिच्छेदः । कालो द्विविधः व्यावहारिको मुख्यश्च । तत्र व्यावहारिकः कालविभागः तत्कृतः समयावलिकादिर्व्याख्यातः । क्रियाविशेषपरिच्छिन्नः अन्यस्यापरिच्छिन्नस्य परिच्छेदहेतुः मुख्योऽन्यो वक्ष्यमाणलक्षणः । आह न मुख्यः कालोऽस्ति सूर्यादिगतिव्यतिरिक्तो लिंगाभावात् । अपिच कलानां समूहः कालः । कलाश्च क्रियावयवाः । किंच पंचास्तिकायोपदेशात् पंचैवास्तिकाया आगमे उपदिष्टाः न षष्ठः । ततो न मुख्यः कालोस्ति इत्यपरीक्षिताभिधानमेतत्—यत्तावदुक्तं लिंगाभावान्नास्ति मुख्यः कालः इत्यत्रोच्यते क्रियायां काल इति गौणव्यवहारदर्शनात् मुख्यसिद्धिः । योयमादित्यगमनादौ क्रियेति रूढेः कालइति व्यवहारः कालनिर्वर्तनापूर्वकः मुख्यस्य

कालस्यास्तित्वं गमयति । न हि मुख्ये गव्यसति वाहीके गौणे गोशब्दस्य व्यवहारो युज्यते ॥

अत एव न कलासमूह एव काल ॥ २ ॥ अत एव, कुतएव ? मुख्यस्य कालस्यास्तित्वादेव, कलानां समूह एव काल इति व्यपदेशो नोपपद्यते । कल्प्यते क्षिप्यते प्रेर्यते येन क्रियावद्द्रव्यं स कालस्तस्य विस्तरेण निर्णय उपरत्र वक्ष्यते ।

प्रदेशप्रचयाभावादस्तिकायेष्वनुपदेशः ॥ ३ ॥ प्रदेशप्रचयो हि कायः स एषामस्ति ते अस्तिकाया इति जीवादय पंचैव उपदिष्टा । कालस्य त्वेकप्रदेशत्वादस्तिकायत्वाभावः । यदि हि अस्तित्वमेव अस्य न स्यात् पद्द्रव्योपदेशो न युक्त स्यात् । कालस्य हि द्रव्य वमस्त्यागमेऽपर-लक्षणाभावः स्वलक्षणोपदेशसद्भावात ॥ इतरत्र ज्योतिषामवस्थाप्रतिपाद-नार्थमाह—

बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ बहिरित्युच्यते कुतोबहिः ? नृलोकात । कथमवगम्यते ? अर्थवशाद्विभक्तिपरिणाम इति ॥

नृलोके नित्यगतिवचनादन्यत्रावस्थानसिद्धिरितिचेन्नोभया-सिद्धेः॥ १ ॥ स्यान्मतं नृलोके नित्यगतय इतिवचनात अन्यत्र अवस्थानं ज्योतिषां सिद्धं अतो बहिरवस्थिता इति वचनमनर्थकं, इतितन्न किं कारणं? उभयासिद्धे नृलोकादन्यत्र बहिर्ज्योतिषामस्तित्वमवस्थानं चाऽप्रसिद्धं अत-स्तदुभयसिद्ध्यर्थं "बहिरवस्थिता" इत्युच्यते । असति हि वचने नृलोके एव सन्ति नित्यगतयश्च इत्यवगम्येत ।

श्रीमान् पं० पन्नालालजी दूनीवाले और पं० फतेलालजी कृत राज-वार्तिकका हिंदी अनुवाद (तत्वकौस्तुभ) अध्याय चतुर्थ—

तृतीय निकायकी सामान्य तथा विशेष संज्ञाका संकीर्तनके अर्थ कहे है, सूत्र—

ज्योतिष्काः सूर्याचंद्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥

हिंदी अर्थः—सूर्यचंद्रमाग्रहनक्षत्रप्रकीर्णक तारा ए पांच भेदरूप ज्योतिष्कदेव है ।

वार्तिक—द्योतनस्वभावत्वाज्ज्योतिष्काः ॥१॥ संस्कृत टीकाः—द्योतनंप्रकाशनंतत्स्वभावत्वादेषांपंचानामपि विकल्पानां ज्योतिष्का इतीयमन्वर्था सामान्यसंज्ञा तस्याः सिद्धिः ॥

अर्थ—द्योतन प्रकाशन स्वभावपणातैं इनि पंच विकल्पनिकी ज्योतिष्क संज्ञा । ऐसैंया सार्थक सामान्य संज्ञा तिनकी सिद्धि है ।

वार्तिक—ज्योतिःशब्दात्स्वार्थेके निष्पत्तिः । टीका—ज्योतिः शब्दात्स्वार्थेकेसति ज्योतिष्का इति निष्पद्यते कथं । यवादिषु पाठात् ।

अर्थ—ज्योतिःशब्दतैं स्वार्थकैविषैं क प्रत्ययनैं होतां संता ज्योतिष्क ऐसो उत्पन्न होइ है । प्रश्न—स्वार्थमैं क प्रत्यय कैसैं होयहै । उत्तर—यवादिपुपाठतैं होय है ॥ २ ॥

वार्तिक—प्रकृतिलिंगानुवृत्तिप्रसंग इति चेन्नातिवृत्तिदर्शनात् ॥ २ ॥ टीका—स्यान्मतंयदिस्वार्थिकोयंकः ज्योतिःशब्दस्य नपुंसकलिंगत्वात्कान्तस्यापि नपुंसकलिंगता प्राप्नोतीति तन्न किंकारणमतिवृत्तिदर्शनात् प्रकृतिलिंगातिवृत्तिरपिदृश्यते । यथा कुटीरः समीरः शुण्डार इति ।

अर्थ, प्रश्न—जो यो स्वार्थिक कः प्रत्यय है तौज्योति शब्दकै नपुंसक लिंगपणातैं ककारांत ज्योति शब्दकैभी नपुंसकलिंगपणांकी प्राप्ति होय है ।

उत्तर—सो नहीं है । प्रश्न—कहा कारण । उत्तर—अतिवृत्तिका दर्शनतैं कि प्रकृति लिंगतैं अतिवृत्ति कहिये उलंघनकरि प्रवर्तनको दर्शनकरिये है यातैं सो जैसैं कुटीरः शुंडारः इनमैं कुटी समी शुंडा शब्दका स्त्रीलिंगवाची है । अर अल्प अर्थमैं रः प्रत्यय होन संतैं कुटीरा समीरा शुंडारा

नहीं भये । अर पुंलिंगवाची कुटीरः समीरः शुण्डारः भए तैसैंही कः प्रत्यय होत संतैं ज्योति शब्द प्रकृत नपुंसक लिंगरूप नहीं रह्यो पुंलिंगवाची ज्योतिष्क शब्द भयो ॥ ३ ॥

तद्विशेषःसूर्यादयः ॥ ४ ॥ टीका–तेषां ज्योतिष्काणां सूर्यादयः पंच विकल्पाः द्रष्टव्याः ॥ अर्थ–तिनज्योतिष्कनिके सूर्यादिक पांचभेद देखिवे योग्य है ॥ ४ ॥ वार्तिक–पूर्ववत्तन्निर्वृत्तिः ॥ ५ ॥ टीका–तेषां संज्ञाविशेषाणांपूर्ववन्निर्वृत्तिर्वेदितव्या देवगतिनामकर्मविशेषोदयादिति ॥ अर्थ–वै संज्ञा विशेष पे हैं तिनकी पूर्ववत् रचना जाननेयोग्य है । कि देवगतिनामकर्मका जो विशेष ताका उदयतैं जानने योग्य हैं ॥ ५ ॥

वार्तिक—सूर्याचंद्रमसावित्यानङ् देवताद्वन्द्वे ॥ ६ ॥ टीका सूर्यश्च चंद्रमाश्च द्वंद्वेकृते पूर्वपदस्य देवताद्वन्द्व इत्यानङ् भवति ॥ अर्थ—सूर्य अर चंद्रमा ऐसैं द्वन्द्व समासकरतां संतां पूर्वपदकूं देवताद्वंद्वे यासूत्रतै आनङ् प्रत्यय होयहै । अर्थात या सूत्रमें सूर्य पद जोहै ताकै आनङ् प्रत्ययके होनेतैं सूर्यापद भया है ॥ ६ ॥

वार्तिक—सर्वप्रसंगइति चेन्न पुनर्द्वंद्वग्रहणादिष्ट वृत्तिः ॥ ७ ॥ टीका–स्यादेतद्यदिदेवताद्वंद्व इत्यानङ् भवति इहाऽपि प्राप्नोति ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकताराः किन्नरकिंपुरुषादयः । असुरनागादय इति तन्न किं कारणं आनङ् द्वंद इत्यतः द्वंद्व इति वर्तमाने पुनर्द्वंद्व इति ग्रहणे इष्ट वृत्ति-र्ज्ञायत इति ।

अर्थ—प्रश्न-- जो देवताद्वन्द्वे यासूत्रतैं आनङ् होय है सो इहां भी प्राप्तहोय है कि ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकताराः । तथा किन्नरकिंपुरुषादयः । असुरनागादयः । इहांभी आनङ् प्रत्यय प्राप्त होयगा ॥ उत्तर—सो नहीं है । प्रश्न—कहा कारण उत्तर—आनङ् द्वंद्वे या पूर्वसूत्रतैं देवताद्वंद्वे या सूत्रमैं द्वंदपदकी अनुवृत्ति सिद्धि है

तौहू बहुरि द्वंद्वपदका मरण होत सन्तैं इष्ट स्थानमैं आनन्की प्रवृत्ति होय है ॥ ७ ॥

वार्तिक—पृथग्ग्रहणं प्राधान्यख्यापनार्थं ॥ ८ ॥ टीका—सूर्याचन्द्रमसोर्ग्रहादिभ्य पृथग्ग्रहणं क्रियते प्राधान्यख्यापनार्थं ज्योतिष्केषु हि सर्वेषु सूर्याचन्द्रमसोश्च प्राधान्यं । किंकृत पुनस्तत प्रभावादिकृतं ॥

अर्थ–सूर्य चंद्रमानिको ग्रहादिकनितैं पृथग्ग्रहण करिये है सो इनकै प्रधानपणांका जनावनै निमित्त है कि सर्व ज्योतिषीनिकैविषैं सूर्यचंद्रमानिकै प्रधानपणों है । प्रश्न–इनकै प्रधानपणों कहा कृत है । उत्तर—प्रभाव आदि कृत है ॥ ८ ॥

वार्तिक—सूर्यस्यादौग्रहणमल्पाचतरत्वादभ्यर्हितत्वाच्च ॥ ९ ॥ टीका–सूर्यशब्द आदौ प्रयुज्यते कुतोऽल्पाचूतरत्वादभ्यर्हितत्वाच्चसर्वाभिभवसमर्थाद्धि अभ्यर्हित सूर्य ॥

अर्थ—सूर्य शब्द आदिकै विषै प्रयुक्त करिये है । प्रश्न– काहेतैं ? उत्तर— अल्पाचूतरपणांतैं अर अभ्यर्हितपणांतैं है कि निश्चयकरि सर्वका तेजनै तिरस्कार करने मैं समर्थ है । यातैं सूर्य अभ्यर्हित है कि पूज्य है ॥ ९ ॥ -

वार्तिक—ग्रहादिषु च ॥ १० ॥ टीका—किमल्पाचतरत्वादभ्यर्हितत्वाच्च पूर्वनिपात इति वाक्यविशेष. ग्रहशब्दस्तावदल्पाचतरोभ्यर्हितश्च तारकाशब्दान्नक्षत्रशब्दोभ्यर्हित । क पुनस्तेषां निवास इत्यत्रोच्यते अस्मात समाद्भूमिभागादूर्ध्वं सप्तयोजनशतानि नवत्युत्तराण्युत्प्लुत्य सर्वज्योतिषामधोभाविन्यस्तारकाश्चरन्ति ततोदशयोजनान्युत्प्लुत्य सूर्याश्चरंति ततोऽशीतियोजनान्युत्प्लुत्य चन्द्रमसोभवंति ततस्त्रीणि योजनान्युत्प्लुत्य बुधा । ततस्त्रीणियोजनान्युत्प्लुत्यशुक्रास्ततस्त्रीनि योजनान्युत्प्लुत्य बृहस्पतयस्ततश्चत्वारियोजनान्युत्प्लुत्य अंगारका ततश्चत्वारि

योजनान्युत्क्रम्यशनैश्च श्चरंति । सदवद्योतिर्गणगोचरः नभोवकाशः दशाधिकयोननशतबहुलः । तिर्यगसंख्यातद्वीपसमुद्रप्रमाणो घनोदधिपर्यन्त. ।

॥ उक्तंच ॥

णवदुत्तरसत्तमयादसमीदिचदुतिगंचदुगचउक्के ॥
तारारविससिरिक्खा बुहभग्गवगुरुअंगिरारसणी ॥ १ ॥

तत्राभिजित् सर्वाभ्यन्तरचारी। मूलः सर्वबहिश्चारी भरण्यः सर्वाधश्चारिण्यः । स्वातिः सर्वोपरिचारी तप्ततपनीयसमप्रभाणि लोहिताक्षमणिमयानि अष्टचत्वारिंशद्योजनैकषष्टिभागविष्कंभायामानि तत्त्रिगुणाधिकपरिधीनि चतुर्विंशतियोजनैकषष्टिभागबाहुल्यान्यर्धगोलकाकृतीनि षोडशभिर्देवसहस्रैरूढानि सूर्यविमानानिप्रत्येकं पूर्वदक्षिणोत्तरोत्तरान् भागान् क्रमेण सिंहकुंजरवृषभतुरगरूपाणि विकृत्य चत्वारि चत्वारि देवसहस्राणि वहंति । एषामुपरि सूर्याख्यादेवास्तेषां प्रत्येकं चतस्रोऽग्रमहिष्यः सूर्यप्रभा सुसीमा अर्चिमालिनी प्रभंकराचेति प्रत्येकं देवीरूपचतु सहस्रविकरणसमर्थाः । ताभिः सह दिव्यं सुखमनुभवंतः संख्येयविमानशतसहस्राधिपतयः । सूर्याः परिभ्रमंति विमलमृणालवर्णान्यंकमयानि चन्द्रविमानानि षट्पंचाशद्योजनैकषष्ठिभागविष्कंभायामान्यष्टाविंशतियोजनैकषष्टिभागबाहुल्यानिप्रत्येकं षोडशभिर्देवसहस्रैः पूर्वादिपु दिक्षु क्रमेण सिंहकुंजरवृषभाश्वरूपवि•ारिभिरूढानि । तेषामुपरि चन्द्राख्यादेवास्तेषां प्रत्येकं चतस्रोग्रमहिष्यः चन्द्रप्रभा सुसीमा अर्चिमालिनी प्रभंकराचेति प्रत्येकं चतुर्देवीरूपसहस्रविकरणपटवस्ताभिः सह सुखमुपभुंजनश्चंद्रमसोऽसंख्येयविमानशतसहस्राधिपतयः विहरंति । अंजनसमप्रभाण्यरिष्टमणिमयानि राहुविमानान्येकयोजनायामविष्कंभाण्यर्द्धतृतीयधनुःशतबाहुल्यानि नवमल्लिकाप्रभाणि रजतपरिणामानिशुक्रविमानानिगव्यूतायामविष्कंभाणि जात्यमुक्ताद्युतीनि अंकमणिमयानि बृहस्पतिविमानानि देशोनगव्यूतायामविष्कंभाणि । कनकप्रभाण्यर्जुनवर्णानि बुधविमानानि तपनीयमयानि तप्ततपनीयाभानि शनै-

श्चरविमानानि लोहितान्तमयानि तप्तकनकप्रभाण्यंगरकविमानानि । बुधादिविमानान्यर्द्धगव्यूतायामविष्कंभाणि शुक्रादिविमानानि राहुविमानतुल्यबाहुल्यानि। राह्वादिविमानानि प्रत्येकं चतुर्भिर्देवसहस्रैरूह्यन्ते। नक्षत्रविमानानां प्रत्येकं चत्वारि देवसहस्राणि वाहकानि । तारकाविमानानां प्रत्येकं द्वे देवसहस्रे वाहके राज्ञामाभियोग्यानां रूपविकाराश्चद्रवबोध्याः । नक्षत्रविमानानामुत्कृष्टो विष्कंभः क्रोशः तारकाविमानानां वैपुल्यं जघन्यं क्रोशचतुर्भागः । मध्यमं साधिकः क्रोशचतुर्भाग उत्कृष्टमर्द्धगव्यूतं । ज्योतिष्कविमानानां सर्वजघन्यवैपुल्यं पंच धनुशतानि । ज्योतिषामिन्द्राः सूर्याचंद्रमसस्ते चासंख्यशताः ॥

अर्थ—प्रश्न-कहा । उत्तर-अल्पाच्तरपणातैं अभ्यर्हितपणातैं पूर्वनिपात है। ऐसो वाक्य शेष है । अर्थात्-प्रथम सहशब्द है सो अल्पाच्तर है। अर अभ्यर्हित है । बहुरि तारकशब्दतैं नक्षत्रशब्द अभ्यर्हित है ॥ प्रश्न-तिनके आवास कहां है । उत्तर-इहां कहिए है कि या समभूमितैं ऊर्ध्व सातसैं निव्वै योजन उलंघनकरि सर्व ज्योतिषीके आवास है। तिनमैं अधोभागमैं तिष्ठनेवारे तौ तारका विचरै हैं। बहुरि तिनकै ऊपरि दशयोजन उलंघनकरि सूर्य जेहैंते विचरै हैं। बहुरि तिनकै ऊपरि अस्सी योजन उलंघनकरि जे चन्द्रमा हैं ते विचरै हैं। तापीछे तीनयोजन उलंघनकरि बुध जे है तेविचरै हैं। बहुरि ताऊपरि तीन योजन उलंघन करि शुक्र जे हैं ते विचरै हैं। बहुरि ताऊपरि तीन योजन उलंघनकरि बृहस्पति हैं ते विचरै हैं। बहुरि तापीछे चारियोजन उलंघन करि मंगल जेहैं ते विचरै हैं अवै हैं। तपीछैं चारयोजन उलंघन करि शनीश्चर जे हैं ते विचरै हैं, सो यो ज्योतिषीनिका समूहकै गोचर आकाशको अवकाश एकसो दश योजन मोटो है अर असंख्यात द्वीपसमुद्र प्रमाण घनोदधि पर्यंत तिर्यक्‌विस्तारवान् हैं। इहां उक्तंच गाथा है—

णवदुत्तरसत्तसया दससीदिचदुतिगं च दुगचदुक्कं ॥
ताररविससिरिक्खा बुहभग्गवगुरुअंगिरारसणी ॥ १ ॥

अर्थ—चित्रापृथ्वीतैं सातसैनिवैयोजन ऊपरि तारागण हैं। ता पीछैं ऊपरि ऊपरि सूर्य चंद्र नक्षत्र बुध शुक्र बृहस्पति मंगल शनीश्वर दश अस्सी तीन तीन तीन तीन चार चार योजन ऊंचे उत्तरोत्तर है ॥ १ ॥ तिनमें नक्षत्र मण्डलके विषैं अभिजित तो मध्यमें गमन करने वारो हैं। अर मूल सर्वकै बाहिर गमन करने वारो हैं। अर भरणी सर्वनिकै नीचैं गमन करने वारो है। अर स्वाति सर्वकै ऊपरि गमन करने वारो हैं। अबैं सूर्य विमाननैं जनावै है कि तप्त जो तपनीय ताकै समान है प्रभा जिनकी अर लोहित नामा मणिमयी हैं। अर अड़तालीश योजनका इकसठिमां भाग प्रमाण चौडे लंबे हैं। अर यातैं किंचित् अधिक त्रिगुणित है परिधि जिनकी अर चौबीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण मोटे अर्धगोलकी है आकृति जिनकी अर सोलह हजार देवनिकरि धारण किये ऐसे सूर्यके विमान हैं। तिननैं प्रत्येक पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर भागनिनैं अनुक्रमकरि चार चार हजार देव धारण करै हैं। तिनकै ऊपरि सूर्यनामा देव बसै है। तिनकै प्रत्येक सूर्यप्रभा ॥ १ ॥ सुसीमा ॥ २ ॥ अर्चिमालिनी ॥ ३ ॥ प्रभंकरनामा चार चार अग्र महिषी हैं। अर प्रत्येक देवी चार चार हजार रूप करवा समर्थ है तिनकै साथि दिव्यसुखनैं अनुभव करते असंख्यातलाख विमाननिके अधिपति सूर्य जे हैं ते परिभ्रमण करै है। बहुरि निर्मल तंतुका वर्णकै समान हैं वर्ण जिनके अर चिन्हमयी चन्द्रविमान छप्पन योजनका इकविसमां भाग प्रमाण चौडे लंबे अर अठ्ठाईस योजनका इकवीसमा भाग प्रमाण मोटे हैं। अर प्रत्येक षोडश हजार देवनिकरि पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर दिशानिमैं अनुक्रमकरि कुंजर वृषभ अश्व रूप विकारवान देवनिकरि धारण किये है। तिनकै ऊपरिचंद्रनामा देव बसै है। तिनकै प्रत्येक चन्द्रप्रभा सुसीमा अर्चिमालिनी प्रभंकरानामा अग्रमहिषी है अर प्रत्येक चारूं देवी चार चार हजाररूप करवा मैं चतुर है तिनकरि सहित सुखनैं उपभोगरूप करे हैं। ऐसै असंख्यात लाख विमाननिके अधिपति चंद्रदेव जे हैं ते

विहार करैं है। बहुरि अंजनसम प्रभावान अरिष्टमणिमयी राहुके विमान एक योजन लंबे चौडे अर ढाईसे धनुष मोटे है। बहुरि नवीन चमेली का फूलकी प्रभाके समान रजत परिणामी शुक्रनिके विमान एक कोश चौडे लंबे है। अर जातिमान मुक्ताफलकी कांतिके समान अंक मणिमयी बृहस्पतिनिके विमान किंचित् घाटि एक कोश प्रमाण चौडे लंबे हैं। बहुरि कनकमयी अर्जुनवर्ण बुध विमान है। बहुरि तपनीयमयी तप्त तप नीय समान कांतिमान शनीश्चरनिके विमान हैं। अर लोहिताक्ष मणिमयी तप्त कनक प्रभावान अंगारकनिके विमान हैं। अर ए बुधने आदि लेय विमान आध कोश लंबे चौडे हैं। अर शुक्रादि विमान प्रत्येक चार चार हजार देवनिकरि धारण करिए है। अर नक्षत्र विमाननिके प्रत्येक चार चार हजार देव चलावने वारे हैं। अर तारकानिके विमाननकुं चलावनें वारे प्रत्येक दोय दोय हजार देव हैं। अर राहु आदि के आभियोग्य देव जे हैं तिनकै रूप विकार चन्द्रवत् जानने योग्य है।

अर्थात् सिंह कुंजर वृषभ तुरंगरूपकरि विमाननितैं चलावै हैं। नक्षत्रनिके विमाननिका उत्कृष्ट चौडापणा एक कोशप्रमाण जानना अर तारकानिके विमाननिको मोटापणों जघन्य तौ एक कोशका चतुर्थ भाग प्रमाण है। अर मध्यम किंचित् अधिक एक कोशका चतुर्थ भाग प्रमाण है। अर ज्योतिषीनिके विमाननिका सर्व जघन्य मोटापणां पांचसै धनुष प्रमाण है। अर ज्योतिषीनिके इंद्र सूर्य अर चंद्र हैं ते असंख्यात है ॥ १२ ॥

आगे तेरमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है।

ज्योतिष्काणां गतिविशेष प्रतिपत्त्यर्थमाह—

अर्थ—ज्योतिषीनिकी गतिविशेषकूं जनावनेनिमित्त कहै है। सूत्र—

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

(श्रीउमास्वामिकृत)

अर्थ—मनुष्यलोकके विषैं मेरुकी प्रदक्षिणारूप है नित्यगति जिनकी ऐसे ज्योतिषी देव है ।

वार्तिक– मेरुप्रदक्षिणावचनं गत्यंतरनिवृत्यर्थं ॥ १ ॥ टीका– मेरोः प्रदक्षिणा मेरुप्रदक्षिणा इत्युच्यते किमर्थं गत्यंतरनिवृत्यर्थं विपरीता गतिर्मा भूत् ॥ अर्थ–मेरुकी जो प्रदक्षिणा सो मेरु प्रदक्षिणा है ऐसे कहिए है । प्रश्न–ऐसैं कहा निमित्त कहिये है । उत्तर–गत्यंतरकी निवृत्तिके अर्थ करिये है । अर्थात विपरीतगति मति है । ॥ १ ॥

वार्तिक–गते क्षणेक्षणेऽन्यत्वान्नित्यत्वाभाव इतिचेन्नाऽभीक्ष्ण्यस्य विवक्षितत्वात् ॥ २ ॥ टीका–अयं नित्यशब्द कूटस्थेष्वविचलेषु भावेषु वर्तते गतिश्च क्षणेक्षणेऽन्येतितोऽस्या नित्येति विशेषणं नोपपद्यत इतिचेन्न किंकारणमाभीक्ष्ण्यस्य विवक्षितत्वात । यथा नित्यप्रहसितो नित्यप्रजल्पित इति आभीक्ष्ण्य गम्यते इति एवमिहापि नित्यगतय अनुपरतगतय इत्यर्थ ॥

अर्थ–प्रश्न–यो नित्यशब्द कूटस्थ अविचलभाव जे हैं तिनकै विषैं प्रवर्तै है । अर गति क्षणक्षणमैं अन्यअन्य हैं । तातैं याको नित्य विशेषण नहीं उत्पन्न होय है । उत्तर–सो नहीं है ॥ प्रश्न–कहा कारण । उत्तर–निरंतरपणाका विवक्षितपणातैं । सो जैसे कहिये है कि यो पुरुष नित्य प्रहसित है । तथा नित्यप्रजल्पित है ऐसैं कहने सैं निरंतरपणानै जणावै है । ऐसैं ही इहां भी नित्यगतय पद जो है सो निर्विघ्न गतिमान है । ऐसा जनावनेकै अर्थ है ।

वार्तिक–अनेकान्ताच्च ॥ ३ ॥ टीका–यथा सर्वभावेषु द्रव्यार्थादेशात्स्यान्नित्यत्वं पर्यायार्थादेशात्स्यादनित्यत्वं। तथा गतावपीति नित्यमविरुद्धं

अर्थ — जैसैं सर्वभावनिकै विषैं द्रव्यार्थका आदेशतैं कथंचित् नित्यपणौ अर पर्यायार्थका आदेशतैं कथंचित् नित्यपणौ है । तैसैंगतिकै विषैंभी नित्यपणौ अविरुद्ध है । क्योंकि उनकी गति अविच्छेदरूप है यातैं ।

वार्तिक—नृलोकग्रहणं विषयार्थं ॥ ४ ॥ टीका–ऋर्धतृतीयेषु

द्वीपेषुद्वयोश्च समुद्रयोर्ज्योतिष्कास्ते मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतय.नान्ये इति विषयावधारणार्थं नृलोकग्रहणं क्रियते । अर्थ — जे ढाईद्वीपमें अर दोय समुद्रनिमें ज्योतिषीहैं ते मेरुप्रदक्षिणारूप नित्यगतिमान है । अन्य स्थानमें गतिमान नहीं है । ऐसा विषयका अवधारणके अर्थ नृलोक पदको ग्रहण करिए है ॥ ४ ॥

वार्तिक—गतिकारणाभावादयुक्तिरितिचेन्न गतिरताभियोग्य देववहनात् ॥ ५ ॥ टीका—इत्यन्यमतमिह लोके भावानां गतिः कारणवती दृष्टा न च ज्योतिष्कविमानानां गतेः कारणमस्तितस्तदयुक्तिरितिचेन्न किं कारणं गतिरताभियोग्यदेववहनात् । गतिरताहि आभियोग्य देवा वहन्तीत्युक्तं पुरस्तात् ॥ अर्थ— प्रश्न—यालोककै विषैंपदार्थनिकी गति कारणमानदेखी अर ज्योतिषीनिके विमाननिकैंगतिको कारण नहीं है तातैं गतिविशेषण अयुक्ति है । उत्तर—सो नहीं है । प्रश्न—कहा कारण । उत्तर—गतिमें है रति जिनकै ऐसैं आभियोग्यदेवनिका धारणपणातैं । निश्चय करि गतिमें रतिमान आभियोग्यदेव धारण करै है । ऐसें पूर्वे कह्यो है ॥ ५ ॥

वार्तिक—कर्मफलविचित्रभावाच्च ॥६॥ टीका—कर्मणां हि फलं वैचित्र्येण पच्यते ततस्तेषां गतिपरिणतिमुखेनैव कर्मफलमवबोद्धव्यं। एकादशभिर्योजनशतैरेकविंशैर्मेरुमप्राप्य ज्योतिष्का प्रदक्षिणाश्चरंति । तत्र जंबूद्वीपे द्वौसूर्यौ द्वौचंद्रमसौ षट् पंचाशन्नक्षत्राणि षट् सप्तत्यधिकं ग्रहशतं एकं कोटीकोटिशतसहस्रं त्रयस्त्रिंशत्कोटीकोटिसहस्राणि नवकोटीकोटिशतानि पंचाशच्च कोटीकोट्यस्तारकाणां । लवणोदे चत्वारः सूर्याश्चत्वारश्चंद्राः नक्षत्राणां शतं द्वादश ग्रहाणां त्रीणिशतानि द्वापंचाशानि द्वे कोटीकोटिशतसहस्रे सप्तषष्टिः कोटीकोटिसहस्राणि नव च कोटीकोटिशतानि तारकाणां धातकीखण्डे द्वादशसूर्याः । द्वादशचंद्रा । नक्षत्राणां त्रीणि शतानि षड्विंशानि ग्रहाणां सहस्रं षट्पंचाशं

अष्टौ कोटीकोटिशतसहस्राणि सप्तत्रिंशच्च कोटीकोटिशतानि तारकाणां । कालोदे द्वाचत्वारिंशदादित्याः द्वौ चत्वारिंशचंद्राः एकादश नक्षत्रसप्तानि षट् सप्तत्यधिकानि षड्त्रिंशद्ग्रहशतानि षण्णवत्यधिकानि अष्टाविंशतिः कोटीकोटिशतसहस्राणि द्वादश कोटीकोटिसहस्राणि नवकोटीकोटिशतानि पंचाशत्कोटीकोट्यस्तारकाणां । पुष्करार्धे द्वासप्तति सूर्या द्वासप्ततिश्चन्द्रा द्वे नक्षत्रसहस्रे षोडश त्रिषष्ठि । महशतानि षड्विंशानि अष्टचत्वारिंशत्कोटीकोटिशतसहस्राणि द्वाविंशतिः कोटीकोटिसहस्राणि द्वे कोटीकोटिशते तारकाणां । बाह्ये पुष्करार्धेच ज्योतिषामियमेव संख्यतत-श्चतुर्गुणाः पुष्करवरोदे, तत परा द्विगुणाद्विगुणा ज्योतिषां संख्यावसेया जघन्यं तारकान्तरं गव्यूतसप्तभागः । मध्यं पंचाशत्गव्यूतानि । उत्कृष्टं योजनसहस्रं । जघन्यं सूर्यान्तरं चन्द्रांतरं च नवनवति. सहस्राणि योजनानां षट्शतानि चत्वारिंशदधिकानि उत्कृष्टमेकं योजनशतसहस्र षट्शतानि षष्ठ्युत्तराणि । जंबूद्वीपादिषु एकैकस्य चंद्रमसः षट्षष्टि कोटीकोटिसहस्राणि नवकोटीकोटिशतानि पंचसप्ततिश्च कोटीकोट्य तारकाणामष्टाशीतिर्महाग्रहा । अष्टाविंशति नक्षत्राणि । परिवार. सूर्यस्य चतुरशीतिमण्डलशतमशीतिर्योजनशतं जंबूद्वीपस्यान्तरमवगाह्य प्रकाशयति तत्र पंचषष्ठिरभ्यन्तरमण्डलानि लवणोदस्यांतस्त्रीणि त्रिंशानि योजनशतान्यवगाह्य प्रकाशयति । तत्र मण्डलानि बाह्यान्येकोनविंशतिशतं द्वियोजनमेकैकमण्डलान्तरं द्वे योजने अष्टचत्वारिंशद्योजनैकषष्ठिभागाश्च एकैकमुद्गांतरं चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्रैरष्टाभिश्चशतैर्विंशत्याप्यमेरुं सर्वाभ्यंतरमण्डलं सूर्य प्रकाशयति । तस्य विष्कंभो नवनवतिः सहस्राणिषट्शतानिचत्वारिंशानि योजनानां तदाहनि मुहूर्ताः अष्टादश भवंति । पंच सहस्राणि द्वे शते एकपंचाशद्योजनानां एकान्नत्रिंशद्योजनषष्टिभागाश्च मुहूर्तगतिस्तत्र सर्वबाह्यमण्डले चरन् सूर्य पंचचत्वारिंशत्सहस्त्रैस्त्रिभिश्चशतैस्त्रिंशैर्योजनानां मेरुमप्राप्य भासयति । तस्य विष्कम्भ एकं शतसहस्रं षट्शतानिषष्ठ्यधिकानियोजनानां तदा दिवसस्य द्वादशमुहूर्ता.पंच-

सहस्राणि त्रीणि शतानिपंचोत्तराणि योजनानां पंचदशयोजनषष्ठिभागाश्च मुहूर्तगतिक्षेत्रं तदा एकत्रिंशद्योजनसहस्रेष्वष्टसु च योजनशतेष्वर्धद्वात्रिंशे-षुस्थितो दृश्यते सर्वाभ्यन्तरमण्डले दर्शनविषयपरिमाणं प्रागुक्तं मध्ये हानि-वृद्धिक्रमो यथागमंवेदितव्यः । चन्द्रमण्डलानि पंचदशद्वीपावगाहः । समुद्रा-वगाहश्चसूर्यवद्वेदितव्यः द्वीपाभ्यंतरे पंचमण्डलानि समुद्रमध्ये दश सर्ववाह्या-भ्यन्तरमण्डलविष्कंभविधिःमेरुचंद्रांतरप्रमाणंच सूर्यवत् प्रत्येतव्यं पंचदशानां मण्डलानामन्तराणि चतुर्दश ॥ तत्रैकैकस्यमण्डलान्तरस्य प्रमाणं पंच-त्रिंशद्योजनानि योजनैकषष्ठिभागास्त्रिंशत् तद्भागस्य चत्वारः सप्तभागाः । ॥ ३५–३०–४ ॥ सर्वाभ्यंतरमण्डले पंच सहस्राणि त्रिसप्तत्यधिकानि योजनानां सप्तसप्ततिर्भागशतानि चतुश्चत्वारिंशानि मण्डलं त्रयोदशभिर्भा-गसहस्रैः सप्तभिश्चभागशतैः । पंचविंशैस्थित्वावशिष्टानि चंद्रः एकैकेन मुहूर्तेन गच्छति सर्ववाह्यमण्डले पंच सहस्राणि शतं च पंचविंशं योज-नानामेकान्नसप्ततिर्भागशतानि नवत्यधिकानि मण्डलं त्रयोदशभिर्भागस-हस्रैः सप्तभिश्चभागशतैः पंचविंशैस्थित्वाऽवशिष्टानि चन्द्रः एकैकेन मुहूर्तेन गच्छति । दर्शनविषयपरिमाणं सूर्यवद्वेदितव्यं हानिवृद्धिविधानंच यथागममवसेयं ॥ पंचयोजनशतानि दशोत्तराणि सूर्याचन्द्रमसोश्चारक्षे-त्रविष्कंभः

अर्थ—अथवा निश्चयकरि कर्मनिको काल विचित्रपर्णा करि पचि है। तातैं तिनकै गतिपरिणतिमुखकरिही कर्मको फल जानने योग्य है । अर ग्यारासै इकवीस योजन मेरुतैं छांडि ज्योतिषी प्रदक्षिणाकरि विचरै है । तिनमैं जंबूद्वीपकैविषैं दोय सूर्य दोय चन्द्रमा है । अर छप्पन नक्षत्र हैं । अर एकसौ छिहत्तर ग्रह है । अर एक लाख कोटाकोटि अर तेईस हजार कोटाकोटि अर नवसै कोटाकोटि अर पचास कोटाकोटि तारानिको प्रमाण है ।

अर लवण समुद्रकै विषैं चार सूर्य चार चंद्रमा है । अर नक्षत्रनि

की संख्या एकसौ बारा है। अर ग्रहनिको प्रमाण तीनसैं बावन है। अर तारानिको प्रमाण दोय लाख कोटाकोटि अर सहसठि हजार कोटाकोटि अर नवसैं कोटाकोटि है॥

अर धातकी खण्डके विषैं द्वादश सूर्य अर द्वादश चन्द्रमा हैं। अर नक्षत्रनिको प्रमाण तीनसैं छत्तीस है। अर ग्रहनिको प्रमाण एक हजार छप्पन है अर तारा आठ लाख कोटाकोटि अर सैंतीससैं कोटाकोटि है।

अर कालोदधि समुद्रकैविषैं बियालीस सूर्य अर बियालीस ही चन्द्रमा है। अर अट्ठाईस लाख कोटाकोटि अर द्वादश हजार कोटाकोटि तारा हैं।

अर पुष्करार्धके विषैं बहत्तरि सूर्य हैं। अर बहत्तरही चन्द्रमा है। अर दो हजार सोला नक्षत्र हैं। अर छिरेपठिसैं छत्तीस ग्रह है अर अडतालीस लाख कोटाकोटि अर बाईस हजार कोटाकोटि अर दोयसैं कोटाकोटि तारा है।

अर बाह्य पुष्करार्धकैविषैं ज्योतिषीनिकी संख्या इतनीही है। तातैं पुष्करवर द्वीपकैविषैं चतुर्गुण है। तातैं परैं द्विगुण ज्योतिषीनिकी संख्या जाननी॥ अर तारकानिकै जघन्य अंतर एक कोशका सतमां भाग मात्र है। मध्य अंतर पचास मात्र है। अर उत्कृष्ट अंतर एक हजार योजन प्रमाण है। अर सूर्यनिकै जघन्य अंतर तथा चन्द्रमानिकै जघन्य अंतर निन्याणवै हजार छसै चालीस योजन प्रमाण है। अर उत्कृष्ट अंतर एक लाख छसै साठि योजन प्रमाण है। अर जंबूद्वीपादिकनिकैविषैं एक एक चंद्रमाकै तारकानिकी छासठि हजार कोटाकोटि अर नवसैं कोटाकोटि अर पिचेतर कोटाकोटि है सो। अर अठ्यासी महाग्रह है सो। अर अट्ठाईस नक्षत्र है। अर सूर्यका एक सौ चौरासी मण्डल-

रूप मार्ग है । तिनमैं सौं अस्सी योजन तौ जंबूद्वीपके मध्य अवगाहन करि प्रकासै है । तहां पैंसठि अभ्यन्तर मण्डल है । अर लवण समुद्रके विषै तीनसै तीस योजन अवगाहन करि प्रकासै है । तहां एक सौ उगणीस बाह्य मण्डल है । अर एक एक मण्डलकै दोय योजन प्रमाण अंतर है । अर दोय योजन अर अडतालीश योजनका इकसठिमां भाग प्रमाण एक एक उदयांतर स्थान है । अर चवालीश हजार आठसैं बीस योजन मेरुसैं दूरि होयकरि सर्व अभ्यन्तर मण्डलनै प्राप्त होय सूर्य प्रकाशै है । ताको चौडापणौ निन्याणवै हजार छसै चालीस योजन को है । योही सूर्यान्तर है कि दोऊ सूर्यनिकै अंतर भी इतनैंहि है । अर या समय दिनमान अष्टादश मुहूर्त प्रमाण है । अर पांच हजार दोय सै इकावन योजन अर उगणीश योजनका साठिमां भाग प्रमाण एक मुहूर्तमैं गमन क्षेत्र है । बहुरि सर्व सर्वबाह्य मण्डलमैं गमन करतौ सूर्य चौपन हजार तीन सै तीश योजन मेरुनैं नहीं प्राप्त होय प्रकासै है । ताको चौडापणौं एकलाख छसै साठि योजन प्रमाण है । अर या समय दिनमान द्वादशमुहूर्त प्रमाण है । तहां पांचहजार तीनसैं पांच योजन अर पंद्रायोजन का साठिमां भागप्रमाण एक मुहूर्तमैं गमनक्षेत्र है । अर या समय सर्व अभ्यतर मण्डलकैविषैं इकतीश हजार आठसै साडा बत्तीस योजनकै विलैं तिष्ठतो सूर्य दीखै है ।

भावार्थ--भरतनिवासी एकतीस हजार आठसे साडा बत्तीस योजन परैं सर्व अभ्यतर मण्डलमैं दीखै है । अर दर्शनको विषयपरिमाण पूर्वं दूसरी अध्यायमैं कह्योही है । अर मध्यके मण्डलनिकै विषै हानि वृद्धिको अनुक्रम आगमकै अनुकूल जानने योग्य है । अर चन्द्र मण्डल पंचदश है । अर द्वीपको अवगाह तथा समुद्रको अवगाह सूर्यवत् जानने योग्य है कि द्वीपके मध्य तो पांच मण्डल है । अर समुद्रके मध्य दश मण्डल है । अर सर्व अभ्यन्तर मण्डलका विष्कंभको विधि अर मेरुतैं चन्द्रमाकै अंतरको प्रमाण सूर्यवत् जानने योग्य है । अर ...

रूप मार्ग है । तिनमैं सौं असी योजन तौ जंबूद्वीपकै मध्य अवगाहन करि प्रकासै है । तहां पैंसठि अभ्यन्तर मण्डल है । अर लवण समुद्रकै विषै तीनसै तीस योजन अवगाहन करि प्रकासै है। तहां एक सौ उगणीस बाह्य मण्डल है। अर एक एक मण्डलकै दोय योजन प्रमाण अंतर है । अर दोय योजन अर अडतालीश योजनका इकसठिमां भाग प्रमाण एक एक उदयांतर स्थान है। अर चवालीश हजार आठसैं बीस योजन मेरुतै दूरि होयकरि सर्व अभ्यन्तर मण्डलनै प्राप्त होय सूर्य प्रकाशै है। ताको चौडापणौ निन्याणवै हजार छसै चालीस योजन को है । योही सूर्यान्तर है कि दोऊ सूर्यनिकै अंतर भी इतनेहि है। अर या समय दिनमान अष्टादश मुहूर्त प्रमाण है। अर पांच हजार दोय सै इक्कावन योजन अर उगणीश योजनका साठिमां भाग प्रमाण एक मुहूर्तमैं गमन क्षेत्र है। बहुरि इवै सर्वबाह्य मण्डल्मैं गमन करतौ सूर्य चौपन हजार तीन सै तीश योजन मेरुतै नहीं प्राप्त होय प्रकासै है। ताको चोडापणौ एकलाख छसै साठि योजन प्रमाण है। अर वा समय दिनमान द्वादशमुहूर्त प्रमाण है। तहां पांचहजार तीनसैं पांच योजन अर पंद्रायोजन का साठिमां भागप्रमाण एक मुहूर्तमैं गमनक्षेत्र है । अर वा समय सूर्य अभ्यतर मण्डलकै विषै इकतीश हजार आठसै साडा बचीस योजनकै विलै तिष्ठतो सूर्य दीखै है ।

भावार्थ--भरतनिवासी एकतीस हजार आठसै साडा बत्तीस योजन परैं सर्व अभ्यतर मण्डलमें दीखै है । अर दर्शनको विषयपरिमाण पूर्वे दूसरी अध्यायमैं कह्योही है। अर मध्यके मण्डलनिकै विषै हानि वृद्धिको अनुक्रम आगमकै अनुकूल जानने योग्य है । अर चन्द्र मण्डल पंचदश है। अर द्वीपको अवगाह तथा समुद्रको अवगाह सूर्यवत् जानने योग्य है कि द्वीपके मध्य तो पांच मण्डल है। अर समुद्रके मध्य दश मण्डल है। अर सर्व अभ्यन्तर मण्डलका विष्कंभकी विधि अर मेरुतैं चन्द्रमाकै अंतरको प्रमाण सूर्यवत् जानने योग्य है । अर पंचदश

मण्डलनिके अन्तर चतुर्दश है। तिनमैं एक एक मण्डलका अन्तरको प्रमाण पैंतीस योजन अर एक योजनका इकसठि भाग करिये तिनमैं तीस भाग अर तिन भागनिमैंसूं एक भागके सात भाग करिये तिनमैंसूं चार भाग प्रमाण है। अर सर्व अभ्यंतर मण्डलमैं पांच हजार तिहत्तर योजन अर सात हजार सातसै चवालीसका तेरा हजार सातसै पचीशमां भागप्रमाण स्थिति रहिकरि चंद्रमा अवशेष क्षेत्रनैं एक एक मुहूर्त करि गमन करै है।

भावार्थ-सर्व अभ्यन्तरमण्डलमैं गमन करता चंद्रमाके एक मुहूर्तमैं पांचहजार तिहत्तर योजन अर सात हजार सातसै चवालीसका तेरा हजार सातसै पचीशमां भाग प्रमाण चारक्षेत्र है। अर सर्वबाह्य मण्डलकेविषैं पांच हजार एक सौ पचीश योजन अर छै हजार नवसै निन्वैका तेरा हजार सातसै पचीशमां भाग प्रमाण स्थिति रहिकरि चंद्रमा अवशेष क्षेत्रनैं एक एक मुहूर्तकरि गमन करै है।

भावार्थ-सर्व बाह्य मण्डलमैं गमन करता चंद्रमाके एक मुहूर्तमैं पांच हजार एकसो पच्चीस योजन अर छै हजार नव्वै निन्वैका तेरा हजार सातसै पच्चीशमां भाग प्रमाण चारक्षेत्र है। अर दर्शनका विषयको प्रमाण सूर्यवत् जानने योग्य है। अर हानिवृद्धिको विधान आगमके अनुकूल जानने योग्य है। अर पांच सै दश योजन सूर्यचन्द्रमाको चार-क्षेत्र चौडो है ॥ ६ ॥ १३ ॥

अब चौदमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है-

गतिमज्ज्योतिःसंबन्धेन व्यवहारकालप्रतिपत्त्यर्थमाह ॥

अर्थ-गतिमान ज्योतिषीनिका सम्बन्धकरि व्यवहार कालकी प्रतिपत्तिके अर्थ कहै है-

तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥

टीका-तदिति किमर्थं। अर्थ-तिन ज्योतिषीनिके कियो कालको

विभाग है। प्रश्न-तत् ऐसो शब्द कहा निमित्त है। उत्तर-या वार्तिक-

गतिमज्ज्योतिःप्रतिनिर्देशार्थं तद्वचनं ॥ १ ॥

टीका—गतिमतां ज्योतिषां प्रतिनिर्देशार्थं तदित्युच्यते नहि केवलगत्या नापि केवलैर्ज्योतिर्भिः कालः परिच्छिद्यते अनुपलब्धेरपरिवर्तनाच्च ज्योतिःपरिवर्तनलभ्योहि कालपरिच्छेदः। कालो द्विविधो व्यावहारिको मुख्यश्च तत्र व्यावहारिकः कालविभागस्तत्कृतः। समयावलिकादिर्व्यापृतः। क्रियाविशेषपरिच्छिन्नः अन्यस्य परिच्छिन्नस्य परिच्छेदहेतुः मुख्योन्यो वक्ष्यमाणलक्षणः। आह न मुख्यः कालोऽस्ति सूर्यादिगतव्यतिरिक्तो लिंगाभावात्। अपिच कलानां समूहः कालः कलाश्च क्रियावयवाः। किंच।

अर्थ—गतिमान ज्योतिषीनिकी क्रिया कालविभागकूं जनावनेके अर्थ तत् ऐसो शब्द कहिये है। अर निश्चयकरि केवल गतिकरि भी काल नहीं जानिये है। अर केवल ज्योतिषीनिकरिभी काल नहीं जानिये है क्योंकि अनुपलब्धितैं कि प्रत्यक्ष नहीं दीखनेतैं अर परिवर्तनतैं कालकी सत्ता नहीं मालूम होय है।

अर्थात्-काल प्रत्यक्ष भी नहीं दीखै है। अर कालका पलटना भी नहीं दीखै है। यातैं ज्योतिषीनिका परिवर्तन करि ही कालको जानना है। सो काल दोय प्रकार है कि एक व्यवहारिक है दूसरा मुख्य है। तिनमैं व्यवहारिक कालको विभाग ज्योतिषीनिकी गति करि समय आवली आदि क्रिया विशेष करि जान्यूं ऐसो व्याख्यान कियो सो अन्य अज्ञात जो मुख्य काल ताके जाननेको हेतु है। अर दूसरो मुख्य काल वक्ष्यमाणलक्षण है॥ प्रश्न-सूर्य आदिकी गतितैं भिन्न मुख्य काल नहीं है। क्योंकि वाका लिंगको अभाव है यातैं। अर और सुनूं कि काल शब्दकी निरुक्ति ऐसी है कि—कलानां समूहः कालः। याको अर्थ ऐसो है कि कलाको जो समूह सो काल है। अर कला जे है ते क्रियाके अवयव है॥ १॥ किंच वार्तिक—

पंचास्तिकायोपदेशात् ॥ २ ॥

टीका—पंचैवास्तिकाया आगमे उपदिष्टाः । न षष्ठः । ततो न मुख्य कालोऽस्तीति अपरीक्षिताभिधानमेतत् यत्तावदुक्तं लिंगाभावान्नास्ति मुख्य काल इत्यत्रोच्यते क्रियायो काल इति गौणव्यवहारदर्शनात् मुख्य-सिद्धि । योयमादित्यगमनादौ क्रियेतिरूढे काल इति व्यवहारः काल-निर्वर्तनापूर्वक मुख्यस्य कालस्यास्तित्वं गमयति नहि मुख्ये गव्यसति वाहीके गौणे गोशब्दव्यवहारो युज्यते ।

अर्थ—पांचहि अस्तिकाय आगमके विषैं उपदेशकरे है । अर छठो नहीं कह्यो है तातैं मुख्य काल नहीं है । उत्तर—यो अपरीक्षिताभिधान है । सो ऐसें है कि—प्रथम तौ लिंगका अभावतें मुख्य काल नहीं है । इहां उत्तर कहिये है कि क्रियाकै विषैं काल है ऐसा गौण व्यवहारका दर्शनतें मुख्यकी सिद्धि है । अर जो या आदित्यगमन आदि कै विषैं क्रिया है सो रूढितैं व्यवहारकाल है सो कालकी निर्वर्तनापूर्वक होतो संतो मुख्य कालका अस्तित्वनें जनावै । क्यौंकि मुख्य गौनें नहीं होतां सन्तां गौणभूत वाहीके विषैं गौशब्दको व्यवहार नहीं योग्य होय है ॥ २ ॥ वार्तिक—

॥ अतएव न कलासमूह एव कालः ॥

टीका—अतएव कुतएव मुख्यस्य कालस्यास्तित्वादेव कलानां समूहएव काल इति व्यपदेशो नोपपद्यते कल्प्यते क्षिप्यते प्रेर्यते येन क्रियावद्द्रव्यं स कालस्तस्य विस्तरेण निर्णय उत्तरत्र वक्ष्यते ।

अर्थ—यातैंही अस्तित्वपणातैं ही कलाको समूह ही काल है ऐसो उपदेश नहीं उत्पन्न होय है । अर काल शब्दकी निरुक्ति ऐसी है कि—कल्प्यते क्षिप्यते प्रेर्यते येन क्रियावद्द्रव्यं स कालः । याको अर्थ ऐसो है कि जाकरि क्रियावान द्रव्यनें कलना करिये तथा स्थापन करिबे

अथवा प्रेरणा करिये सो काल है। ताको विस्तारकरि निर्णय आगामी कहैंगे ॥ २ ॥ वार्तिक —

प्रदेशप्रचयाभावादस्तिकायेष्वनुपदेशः ॥ ३ ॥ टीका — प्रदेश-प्रचयोहि कायः । स एषामस्ति ते अस्तिकाया इति जीवादय पंचैवोपदिष्टाः । कालस्य त्वेकप्रदेशत्वादस्तिकायत्वाभावः । यदि च'स्तत्व मेवास्य न स्यात् षट्द्रव्योपदेशो न युक्त स्यात् कालस्यहि द्रव्यत्वमस्यागमे परलक्षणाभावः स्वलक्षणोपदेशसद्भावात् ॥

अर्थ—निश्चय करि प्रदेशनिको प्रचय जो है सो काय है । अर जाकै काय है सो अस्तिकाय है। यातै जीवादिक पाचही अस्तिकाय-रूप उपदेश किया अर कालकै एकप्रदेशपणातैं अस्तिकायपणाको अभाव है। अर जो निश्चय करि याको अस्तित्व ही नहीं है तौ षट्-द्रव्यको उपदेश युक्त नहीं है। यातैं निश्चयकरि कालकै द्रव्यपणौं आगम कैविषैं है। क्योंकि पर जे जीवादिक तिनका लक्षणको अभाव अर अपना लक्षणका उपदेशको सद्भाव है यातैं ॥ १३ । १४ ॥

अबैं पनरमां सूत्रकी उत्थानिका कहै हैं —

इतरत्र ज्योतिषामवस्थाप्रतिपादनार्थमाह—

अर्थ — मानुषोत्तर पर्वतकै बाहिरका क्षेत्रमें ज्योतिषीनिकी व्यवस्था का प्रतिपादनकै अर्थ कहै है। सूत्र—

॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥

टीका—बहिरित्युच्यते कुतो बहि । नृलोकात् कथमवगम्यते अर्थ-वशाद्विभक्तिपरिणाम इति ।

अर्थ—मनुष्यक्षेत्रतै बाहिर ज्योतिषी हैं ते यथाऽवस्थित हैं । या सूत्रमें बहिर पद कहिये है तातैं प्रश्न करिये है कि—काहेतै बाहिर है? । उत्तर—मनुष्य लोकतैं बाहिर है सो यथावस्थित है ॥ प्रश्न— कैसैं जानिये है कि या सूत्रमें ज्योतिषीनिकोही मनुष्यलोकतैं बाहिर

अवस्थितपणों कह्यो है । उत्तर-पूर्वसूत्रमें नृलोके पद है ताकाही अर्थका वशतैं विभक्तिको परिणमन होय नृलोकात् ऐसो अनुवृत्तिरूप भयो है तातैं जानिये है । वार्तिक—

नृलोके नित्यगतिवचनादन्यत्रावस्थानसिद्धिरिति चेन्नोभयासिद्धेः ॥ १ ॥ टीका— स्यान्मतं नृलोके नित्यगतय इत वचनादन्यत्रावस्थानं ज्योतिषां सिद्धं अतो व हरवस्थिता इति वचनमनर्थकमिति तन्न किं कारणमुभयासिद्धेः. नृलोकादन्यत्र बहिर्ज्योतिषामस्तित्वमवस्थानं चासिद्धं अतस्तदुभयसिद्ध्यर्थं बहिरवस्थिता इत्युच्यते असतिहि वचने नृलोके एव सन्ति नित्यगतयश्चेत्यवगम्येत ।

अर्थ—प्रश्न नृलोके नित्यगतय. ऐसा पूर्व सूत्रमें वाक्य है । तातैं अन्यत्र ज्योतिषीनि को अवस्थान सिद्ध है । यातैं बहिरवस्थिता ऐसो वचन जो है सो अनर्थक है ॥ उत्तर—सो नहीं है ॥ प्रश्न कहा कारण? । उत्तर—ऐसे माने दोऊनिकी ही अप्रसिद्धि होय है यातैं क्योंकि मनुष्यलोकतैं अन्यत्र बाहिर ज्योतिषीनिको अस्तित्व अर अवस्थान ए दोउही अप्रसिद्ध है यातैं दोऊनिकी सिद्धिके अर्थ बहिरवस्थिता ऐसैं कहिये है । अर निश्चयकरि या वचनतैं नहीं होतां संतां मनुष्यलोक के विषैही है अर नित्यगतिमान है ऐसे ही जानिये ॥१॥१५॥

श्रीमद्विद्यानन्दिविरचित—

तत्वार्थ श्लोकवार्तिक अध्याय ४ में ज्योतिष्क देवताओंके वर्णन.

ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥

ज्योतिष एव ज्योतिष्काः को वा यावादेरिति स्वार्थिकः कः । ज्योतिःशब्दस्य यावादिषु पाठात् तथाभिधानदर्शनात् प्रकृतिलिंगानुवृत्तिः कुटीरः समीर इति यथा । सूर्याचन्द्रमसा इत्यत्रानङ् देवताद्वंद्वत्वे ।

ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारका इत्यत्र नानङ् । ननु द्वन्द्वग्रहणात्तस्येष्टविषये व्यवस्थानादसुरादिवत् किंनरादिवच्च । कथं ज्योतिष्काः पंचविकल्पाः सिद्धा इत्याह—

ज्योतिष्काः पंचधा दृष्टाः सूर्याद्या ज्योतिराश्रिताः ।
नामकर्मवशात्तादृक् संज्ञा सामान्यभेदतः ॥ १ ॥

ज्योतिष्कनामकर्मोदये सतीराश्रयत्व ज्योतिष्का इति सामान्यतस्तेषां संज्ञा सूर्यादिनामकर्मविशेषोदयात्सूर्याद्या इति विशेषसंज्ञाः । तएते पंचधापि दृष्टाः प्रत्यक्षज्ञानिभिः साक्षात्कृतास्तदुपदेशाविसंवादान्यथानुपपत्तेः ।

सामान्यतोऽनुमेयाश्च छद्मस्थानां विशेषतः ॥
परमागमसंगम्या इति नादृष्टकल्पना ॥ २ ॥

॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

ज्योतिष्का इत्यनुवर्तते । नृलोक इति किमर्थमित्यावेदयति—

निरुक्त्यावासभेदस्य पूर्ववद्व्यभावतः ।
ते नृलोक इतिप्रोक्तमावासप्रतिपत्तये ॥ १ ॥

न हि ज्योतिष्काणां निरुक्त्यावासप्रतिपत्तिर्भवनवास्यादीनामिवास्ति यतो नृलोक इत्यावासप्रतिपत्त्यर्थं नोच्येत । क्व पुनर्नृलोके तेषामावासाः श्रूयन्ते ?

अस्मात्समाद्धराभागादूर्ध्वं तेषां प्रकाशिताः ॥
आवासाः क्रमशः सर्वज्योतिषां विश्ववेदिभिः ॥ २ ॥
योजनानां शतान्यष्टौ हीनानि दशयोजनैः ॥
उत्पत्य तारकास्तावच्चरन्त्यध इतिश्रुतिः ॥ ३ ॥
तट सूर्या दशोत्पत्य योजनानि महाप्रभाः ॥
ततश्चंद्रमसोऽशीति भानि त्रीणि ततस्त्रयः ॥ ४ ॥
त्रीणित्रीणि बुधाः शुक्रा गुरवश्चोपरिक्रमात् ॥
चत्वारोंगारकास्तद्वच्चत्वारिच शनैश्चराः ॥ ५ ॥

अवस्थितपणों कह्यो है । उत्तर-पूर्वसूत्रमें नृलोके पद है ताकाही अर्थका वशतें विभक्तिको परिणमन होय नृलोकात् ऐसो अनुवृत्तिरूप भयो है तातें जानिये है । वार्तिक—

नृलोके नित्यगतिवचनादन्यत्रावस्थानसिद्धिरिति चेन्नोभयासिद्धेः ॥ १ ॥ टीका— स्यान्मतं नृलोके नित्यगतय इत वचनादन्यत्रावस्थानं ज्योतिषा सिद्धं अतो न हावस्थिता इति वचनमनर्थकमिति तन्न किं कारणमुभयासिद्धे. नृलोकादन्यत्र बहिर्ज्योतिषामस्तित्वमवस्थानं चाप्रसिद्धं अतस्तदुभयसिद्धयर्थं बहिरवस्थिता इत्युच्यते असतिहि वचने नृलोके एव सन्ति नित्यगतयश्चेत्यवगम्येत ।

अर्थ—प्रश्न नृलोके नित्यगतय ऐसा पूर्व सूत्रमें वाक्य है । तातैं अन्यत्र ज्योतिषीनि का अवस्थान सिद्ध है । यातैं बहिरवस्थिता ऐसो वचन जो है सो अनर्थक है ॥ उत्तर—सो नहीं है ॥ प्रश्न कहा कारण? । उत्तर-ऐसे माने दोऊनिको ही अप्रसिद्धि होय है यातैं क्योंकि मनुष्यलोकतैं अन्यत्र बाहिर ज्योतिषीनिको अस्तित्व अर अवस्थान ए दोऊही अप्रसिद्ध है यातैं दोऊनिकी सिद्धिकै अर्थ बहिरवस्थिता ऐसे कहिये है । अर निश्चयकरि या वचनमैं नहीं होतां संतां मनुष्यलोक के विषैही है अर नित्यगतिमान है ऐसे ही जानिये ॥१॥१५॥

श्रीमद्विद्यानन्दिविरचित—

तत्त्वार्थ श्लोकवार्तिक अध्याय ४ में ज्योतिष्क देवताओंके वर्णन.

ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥
ज्योतिष एव ज्योतिष्काः को वा यावादेरिति स्वार्थिक. कः । ज्योति शब्दस्य यावादिषु पाठात् तथाभिधानदर्शनात् प्रकृतिलिंगानुवृत्तिः कुटीर, समीर इति यथा । सूर्याचन्द्रमसा इत्यत्रानङ् देवताद्वंद्वत्वे ।

प्रइनक्षत्रप्रकीर्णकनामका इत्यत्र नानद् । नतु द्वन्द्वग्रहणात्स्येष्टविषये व्यवस्थानादसुरादिवत् किंनरादिवच्च । कथं ज्योतिष्काः पंचविकल्पाः सिद्धा इत्याह—

ज्योतिष्काः पंचधा दृष्टाः सूर्याद्या ज्योतिराश्रिताः ।
नामकर्मवशात्तादृक् संज्ञा सामान्यभेदतः ॥ १ ॥

ज्योतिष्कनामकर्मोदये सतीराश्रयाव पज्योतिष्का इति सामान्यतस्तेषां संज्ञा सूर्यादिनामकर्मविशेषोदयात्सूर्याद्या इति विशेषसंज्ञा । तएते पंचधा प्र दृष्टाः प्रत्यक्षज्ञ निभिः माक्षात्कृतास्तदुपदेशाविसंवादान्यथानुपपत्ते.।

सामान्यतोऽनुमेयाश्च छद्मस्थानां विशेषतः ॥
परमागमसगम्या इति नादृष्टकल्पना ॥ २ ॥

॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

ज्योतिष्का इत्यनुवर्तते । नृलोक इति किमर्थमित्यावेदयति—

निरुक्त्यावासभेदस्य पूर्वस्त्रुत्यभावतः ।
ते नृलोक इतिप्रोक्तमावासप्रतिपत्तये ॥ १ ॥

न हि ज्योतिष्काणां निरुक्त्यावासप्रतिपत्तिर्भवनवास्यादीनामिवास्ति यतो नृलोक इत्यावासप्रतिपत्त्यर्थं नोच्येत । क पुनर्नृलोके तेषामावासाः श्रूयन्ते ?

अस्मात्समाद्धराभागादूर्ध्वं तेषां प्रकाशिताः ॥
आवासा क्रमशः सर्वज्योतिषां विश्ववेदिभि ॥ २ ॥
योजनानां शतान्यष्टौ हीनानि दशयोजनैः ॥
उत्पत्य तारकास्तावच्चरन्त्यत्र इतिश्रुति. ॥ ३ ॥
तत सूर्या दशोत्पत्य योजनानि महाप्रभाः ॥
ततश्चंद्रमसोऽशीति भानि त्रीणि ततस्त्रयः ॥ ४ ॥
त्रीणित्रीणि बुधाः शुक्रा गुरवश्चोपरिक्रमात् ॥
चत्वारोंगारकास्तद्वच्चत्वारिच शनैश्चराः ॥ ५ ॥

चरंति तादृशादृष्टविशेषवशवर्तिनः ॥
स्वभावाद्वा तथानादिनिधनाद्द्रव्यरूपतः ॥ ६ ॥
एष एव नभोभागो ज्योतिःसंघातगोचरः ॥
बहलः सदशकं सर्वो योजनानां शतं स्मृतः ॥ ७ ॥
सघनोदधिपर्यंतो नृलोकेऽन्यत्र वा स्थितः ॥
सिद्धस्तिर्यगसंख्यातद्वीपांभोधिप्रमाणकः ॥ ८ ॥
सर्वाभ्यंतरचारीष्टःतत्राभिजिदथो बहिः ॥
सर्वेभ्यो गदितं मूलं भरण्योधस्तथोदिताः ॥ ९ ॥
सर्वेषामुपरि स्वातिरिति संक्षेपतः कृता ॥
व्यवस्था ज्योतिषां चिंत्या प्रमाणनयवेदिभिः ॥ १० ॥

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतय इति वचनात् किमिष्यत इत्याह—

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयस्त्विति निवेदनात् ॥
नैवाप्रदक्षिणा तेषां कादाचित्कीष्यते न च ॥ ११ ॥
गत्यभावोपि चानिष्टः यथा भूभ्रमवादिनः ॥
भुवो भ्रमणनिर्णीतिविरहस्योपपत्तितः ॥ १२ ॥

नहि प्रत्यक्षतो भूमेर्भ्रमणनिर्णीतिरस्ति, स्थिरतयैवानुभवात्। नचायं भ्रान्तः सकलदेशकालपुरुषाणां तद्भ्रमतः प्रतीतेः। कस्यचिन्नावादिस्थिरत्वानुभवस्तु भ्रान्तः परेषां तद्भ्रमणानुभवेन बाधनात्। नाप्यनुमानतो भूभ्रमणविनिश्चयः कर्तुं सुशकः तदविनाभाविलिंगाभावात्। स्थिरे भचक्रे सूर्योदयास्तमयमध्याह्नादिभूगोलभ्रमणे अविनाभावलिंगमिति चेन्न, तस्य प्रमाणबाधितविषयत्वात् पावकानौष्ण्यादिषु द्रव्यत्वादिवत्। भचक्रभ्रमणे सति भूभ्रमणमंतरेणापि सूर्योदयादिप्रतीत्युपपत्तेश्च। न तस्मात् साध्याविनाभावनियमनिश्चयः। प्रतिविहितं च प्रपंचतः पुरस्तात् भूगोलभ्रमणमिति न तदवलंबनेन ज्योतिषां नित्यगत्यभावो विभावयितुं शक्यः नापि कादाचित्कीष्यते गतिर्नित्यग्रहणात्। तद्धेतेर्नित्यत्वविशेषणानुप-

पतिर्घोल्यादिति न शंकनीयं, नित्यशब्दस्याभीक्ष्ण्यवाचित्वान्नित्यप्रहसितादिवत् ॥

> ऊर्ध्वाधोभ्रमणं सर्वज्योतिषां ध्रुवतारकाः ॥
> मुक्त्वा भूगोलकादेवं प्राहुर्भूभ्रमवादिनः ॥ १३ ॥
> तदप्यपास्तमाचार्यैर्नृलोक इति सूचनात् ॥
> तत्रैव भ्रमणं यस्मान्नोर्ध्वाधोभ्रमणे सति ॥ १४ ॥

घनोदधेः पर्यंते हि ज्योतिर्गणगोचरे सिद्धे त्रिलोक एव भ्रमणं ज्योतिषामूर्ध्वाधः कथमुपपद्यते ? भुविदारणप्रसंगात् , तत एव विंशत्युत्तरैकादश योजनशतविष्कंभत्वं भूगोलस्याभ्युपगम्यत इतिचेत्, उत्तरतो भूमण्डलस्येयत्तातिक्रमात् तदधिकपरिमाणस्य प्रतीतेः तच्छतभागस्यच सातिरेकैकादशयोजनमात्रस्यैव समभूभागस्याप्रतीतेः कुरुक्षेत्रादिषु भूद्वादशयोजनादिप्रमाणस्यापि समभूतलस्य सुप्रसिद्धत्वात् । तच्छतगुणविष्कंभभूगोलपरिकल्पनायामनवस्थाप्रसंगात् ! कथं च स्थिरेऽपि भूगोले गंगासिंध्वादयो नद्यः पूर्वापरसमुद्रगामिन्यो घटेरन् ? भूगोलमध्यान्तप्रभावादितिचेत्, किं पुनर्भूगोलमध्यं ? उज्जयिनीतिचेत्, न ततो गंगासिंध्वादीनां प्रभवः समुपलभ्यते । यस्मात् तत्प्रभवः प्रतीयते तदेव मध्यमितिचेत्, तदिदमतिव्याहतं। गंगाप्रभवदेशस्य मध्यत्वे सिंधुप्रभवभूभागस्य ततोतिव्यवहितस्य मध्यत्वविरोधात् । स्वबाह्यदेशापेक्षया तस्य मध्यत्वे न किंचिदमध्यं स्यात् स्वसिद्धांतपरित्यागश्चोज्जयिनीमध्यवादिनां । तदपरित्यागे चोज्जयिन्या उत्तरतो नद्यः सर्वा उदङ्मुख्यस्तस्या दक्षिणतोऽवाङ्मुख्यस्तत पश्चिमतः प्रत्यङ्मुख्यस्ततः पूर्वतः प्राङ्मुख्यः प्रतीयेरन् । भूम्यवगाहभेदान्नदीगतिभेद इतिचेत्, भूगोलमध्ये महावगाहप्रतीतिप्रसंगात् । नहि यावानेव नीचैर्देशेवगाहस्तावानेवोर्ध्वभूगोले युज्यते । ततो नदीभिर्भूगोलानुरूपतामतिक्रम्य वहंतीति भोगोलविदाहरणमिति सममेव धरातलमवलंबितुं युक्तं, समुद्रादिस्थितिविरोधश्च तथा परिहृतः

स्यात् । तद्भूमिशक्तिविशेषात्स परिणीयत इति चेन्, तत एव समभूमौ छायाविभेदोऽस्तु । शक्यं हि वक्तुं लङ्काभूमेरीदृशी शक्तिर्यतो मध्याह्ने अवरुच्छाया मान्यखेटपुरभूमेस्तु तादृशी यतस्तत्रस्थिततारतम्यभा छाया । तथा दर्पणसमतलायामपि भूमौ न सर्वेषामुपरि स्थिते सूर्ये छायाविरहस्तस्यास्तद्भेदनिमित्तशक्तिविशेषासद्भावात् तथा विषुमति समरात्रमपि तुल्यमध्यदिने वा भूमिशक्तिविशेषादस्तु । प्राच्यामुदय प्रतीच्यामस्तमय सूर्यस्य तत एव घटते । कार्यविशेषदर्शनाद्धि तस्य शक्तिविशेषानुमानस्याविरोधात् । अन्यथा दृष्टहानेरदृष्टकल्पनायाश्चा-वश्यं भाविनत्वात् । सा च पापीयसी महामोहविजृम्भितमावेदयति । न च वयं दर्पणसमतलामेन भूमिं मन्यामहे प्रतीतिविरोधात् तस्याः कालादि-वशादुपचयापचयसिद्धेर्निम्नोन्नताकारसद्भावात् । ततो नोज्जयिन्या उत्त-रोत्तरभूमौ निम्नायां मध्यंदिने छायावृद्धिर्विरुध्यते । नापि ततो दक्षिण-क्षितौ समुन्नतायां छायाहानिरुन्नतेतराकारभेदद्वाराया शक्तिभेदप्रसि-द्धे । प्रदीपादिवादित्यान्न दूरे छायाया वृद्धिघटनात् निकटे प्रभातो-पपत्ते । तत एव नोदयास्तमययो सूर्यादेर्विपर्यदर्शनं विरुध्यते भूमि-संलग्नतया वा सूर्यादिप्रतीतिर्न सम्भाव्या, दूरादिभूमेस्तथाविधदर्शनजनन-शक्तिसद्भावात् ॥ नन भूमात्रनिबंधना समरात्रादयस्तेषां ज्योतिष्कगति-विशेषनिबंधनत्वादित्यावेदयति—

समरात्र दिनावृद्धिहानिर्दोषाश्च युज्यते ॥
छायाग्रहोपरागादिर्यथा ज्योतिर्गतिस्तथा ॥ १५ ॥
खखण्डभेदतः सिद्धा बाह्याभ्यन्तरमध्यतः ॥
तथाभियोग्यदेवानां गतिभेदात्स्वभावतः ॥ १६ ॥

सूर्यस्य तावच्चतुरशीतिशतं मण्डलानि । तत्र पंचषष्ट्यभ्यंतरे जंबूद्वीपस्या-शीतिशतयोजनैर्मस्तकाद्यप्रकाशनं जंबूद्वीपद्वाह्यमण्डलान्येकान्नविंशतिशत लवणोदस्याभ्यंतरे त्रीणि त्रिंशानि योजनशतान्यवगाह्य तस्य प्रकाशनात् ।

द्वियोजनमेकैकमण्डलान्तरं द्वेयोजने अष्टाचत्वारिंशद्योजनैकषष्ठिभागाश्चै-कैकमुदयान्तरं । तत्र यदा त्रीणि शतसहस्राणि षोडश सहस्राणि सप्त-शतानि च्यधिकानि परिधिपरिमाणं बिभ्रति तुल्यमेषप्रवेशादिगोचरे सर्वमध्यमण्डले मेरुं पंचचत्वारिंशद्योजनैर्द्वाविंशत्या योजनैकषष्ठभा-गैश्च प्राप्य सूर्यः प्रकाशयति तदाहनि पंचदशमुहूर्ता भवंति रात्रौ चेति समरात्रं सिद्ध्यति । विषुमति दिने द्वाविंशत्येकषष्ठिभागः साति-रेकाष्टसप्ततिद्विशतपंचसहस्रयोजनपरिमाणैकमुहूर्तगतिक्षेत्रोपपत्तेः । दक्षि-णोत्तरे समप्रणिधीनां च व्यवहितानामपि जनानां प्राच्यमादित्यप्रती-तिश्च लंकादिकुरुक्षेत्रांतदेशस्थानामभिमुखमादित्यस्योदयात् । अष्टच-त्वारिंशद्योजनैकषष्ठिभागत्वात् प्रमाणयोजनापेक्षया सातिरेकत्रिनवतीयो-जनशतत्रयप्रमाणत्वादुत्सेधयोजनापेक्षया दूरोदयत्वाच्च स्वाभिमुखत्वबुद्धि-प्रतिभाससिद्धेः । द्वितीये अहनि तथा प्रतिभासः कुतो न स्यात्तदविशे-षादिति चेन्न, मण्डलान्तरे सूर्यस्योदयात् तदंतरस्योत्सेधयोज-नापेक्षया द्वाविंशत्येकषष्ठिभागयोजनसहस्रप्रमाणत्वात्, उत्तरायणे त-दुत्तरत प्रतिभासनस्य घटनात् । सूर्यचारणाद्दक्षिणोत्तरसमप्र-णिधिभूभागादन्यप्रदेशे कुतः प्राची सिद्धिरिति चेत्, तदनं-तरमंडले तथा सर्वाभिमुखमादित्यस्योदयादेवेति सर्वमनवद्यं, क्षेत्रा-न्तरेऽपि तथा व्यवहारसिद्धेः । तदेतेन प्राचीदर्शनाद्धरायां गोलाकारता साधनमप्रयोजकमुक्तं तत्र तत्र दर्पणाकारतायामपि प्राचीदर्शनोपपत्तेः । यदा तु सूर्यः सर्वाभ्यन्तरमण्डले चतुश्चत्वारिंशद्योजनसहस्रं द्वाभिश्च योज-नशतैर्विस्तरैर्मेरुमप्राप्य प्रकाशयति तदाहन्यष्टादशमुहूर्ता भवन्ति । चत्वा-रिंशषट्उताधिकनवनवतियोजनसहस्रविष्कंभस्य त्रिगुणसातिरेकपरिधेस्त न्मण्डलस्यैकान्नविंशद्योजनषष्ठिभागाधिकं पंचाशद्द्विशतोत्तरयोजनसहस्र-पंचकमात्रमुहूर्तगतिक्षेत्र प्रसिद्धेः शेषप्रकर्षपर्यंततः प्रभा दिवावृद्धहीन-श्च रात्रौ सूर्यविभेदाद्भ्यंतरमंडलात् सिद्धा । यदा च सूर्यः सर्वबाह्य-मण्डले पंचचत्वारिंशत्सहस्रैस्त्रिभिश्च शतैस्त्रिंशद्योजनानां मेरुमप्राप्य भासयति

तदाहनि द्वादश मुहूर्ताः । षट्यधिकशतषट्कोत्तर योजनशतसहस्रविष्कं-भस्य तत्रिगुणसातिरेकपरिधेः तन्मण्डलस्य पंचदशैकयोजनषष्ठिभागाधि-कपंचोत्तरशतत्रयसहस्रपंचकपरिमाणगतिमुहूर्तक्षेत्रत्वावशेषा परमप्रकर्षपर्य-न्तप्राप्ता तावत्दिवाहानिर्वृद्धिश्च रात्रौ सूर्यगतिभेदात् बाह्याद्गगनखण्डम-ण्डलात् सिद्धा । मध्ये त्वनेकविधा दिनस्य वृद्धिर्हानिश्चानेकमण्डलभेदात् सूर्यगतिभेदादेव यथागमं मण्डलं यथागणनं च प्रत्येतव्या तथा दोषावृद्धि-र्हानिश्च युज्यते । तदेतेन दिनरात्रिवृद्धिहानिदर्शनाद्भुवो गोलाकारता-नुमानमपास्तं, तस्यान्यथानुपपत्तिवैकल्यादन्यथैव तदुपपत्तेः । तथा छाया महती दूरे सूर्यस्य गतिमनुमापयति अंतिकेऽतिस्वल्पां न पुनर्भू-मेर्गोलकाकारतामिति छायावृद्धिहानिदर्शनमपि सूर्यगतिभेदनिमित्तकमेव । मध्यान्हेकचिच्छायाविरहेऽपि परत्रतद्दर्शनं भूमेर्गोलाकारतां गमयति समभूमौ तदनुपपत्तेरितिचेन्न, तदापि भूमिनिम्नत्वोन्नतत्वविशेषमात्रस्यैव गतेः तस्य च भरतैरावतयोर्दृष्टत्वात् " भरतैरावतयोर्वृद्धिन्हासौ षट्समयाभ्या-मुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्यां " इति वचनात् । तन्मनुष्याणामुत्सेधानुभ-वायुरादिभिर्वृद्धिन्हासौ प्रतिपादितौ न · भूमेःपरपुद्गलैरिति न मन्तव्यं, गौणशब्दप्रयोगान् मुख्यस्य घटनादन्यथा मुख्यशब्दा-र्थातिक्रमे प्रयोजनाभावात् । तेन भरतैरावतयो· क्षेत्रयोर्वृद्धिन्हासौ मुख्यतः प्रतिपत्तव्यौ, गुणभावतस्तु तत्स्थमनुष्याणामिति तथा वचनं सफ-लतामस्तु ते प्रतीतिश्चानुलंघिता स्यात् । सूर्यस्य ग्रहोपरागेऽपि न भूगो-लच्छायया युज्यते तन्मते भूगोलस्याल्पत्वात् सूर्यगोलस्य चतुर्गुणत्वात् तथा सर्वग्रासग्रहणविरोधात् । एतेन चंद्रच्छायया सूर्यस्य ग्रहणमपास्तं चन्द्रमसोऽपि ततोल्पत्वात् क्षितिगोलचतुर्गुणच्छायावृद्धिघटनाचंद्रगोलवृद्धि-गुणच्छायावृद्धिगुणघटनाद्वा । ततः सर्वग्रासे ग्रहणमविरुद्धमेवेतिचेत् कुतस्त-त्र तथा तच्छायावृद्धिः । सूर्यस्यातिदूरत्वादितिचेन्न, सन्तलभूमावपि तनएव छायावृद्धिभंगात् । कथंच भूगोलादेहरस्थिरे सूर्ये तच्छायाप्राप्तिः प्रतीतिविरोधात् तदा छायाविग्रहप्रसिद्धेर्मध्यंदिनवत् ततः तिर्यक्स्थिते

सूर्ये तच्छायाप्राप्तिरितिचेन्न, गोलात् पूर्वदिक्षु स्थिते रवौ पश्चिमदिगभिमुख-
छायोपपत्तेस्तत्प्राप्त्ययोगात् । सर्वदा तिर्यगेवसूर्यग्रहणसंप्रत्ययप्रसंगात् ।
मध्यंदिने स्वस्योपरि तत्प्रतीतेश्च क्षितिगोलस्याधःस्थिते भानौ चन्द्रे च त-
च्छायया ग्रहणमितिचेन्न, रात्राविव तददर्शनप्रसंगात् । ननुच न तयावरण-
रूपया भूम्यादिछायया ग्रहणमुपगम्यते यद्विकल्पितोयं दोषः । किंतर्हि ? उप-
रागरूपया चंद्रादौ भूम्याद्युपरागस्य चन्द्रादिग्रहणव्यवहारविषयतयोपगमात् ।
स्फटिकादौजपाकुसुमाद्युपरागवत् तत्र तदुपपत्तेरिति कश्चित्; सोऽपि न
सत्यवाक्, तथा सति सर्वदा ग्रहणव्यवहारप्रसंगात् भूगोलात्सर्वदिक्षु स्थितस्य
चन्द्रादेस्तदुपरागोपपत्तेः । जपाकुसुमादेः समंततः स्थितस्य स्फटिकादेस्तदु-
परागवत् । नहि चन्द्रादेः कस्यांचिदपि दिशि कदाचिदव्यवस्थितिर्नाम
भूगोलस्य येन सर्वदा तदुपरागो न भवेत् तस्य ततोतिविप्रकर्षात् कदाचिन्न
भवत्येव प्रत्यासत्त्यतिदेशकाल एव तदुपगमादितिचेत्, किमिदानीं सूर्यादि-
भ्रमणमार्गभेदोभ्युपगम्यते ? बाढमभ्युपगम्यत इतिचेन्न, कथंनानाराशिषु
सूर्यादिग्रहणप्रतिराशिमार्गस्य नियमात् प्रत्यासन्नतमगमार्गभ्रमण एव तद्घ-
टनात् अन्यथा सर्वदाग्रहणप्रसंगस्य दुर्निवारत्वात् । प्रतिराशि प्रतिदिनं च
तन्मार्गस्याप्रतिनियमात् समरात्रदिवसवृद्धिहान्यादिनियमाभावः कुतो
विनिवार्येत ? भूगोलशक्तेरितिचेन्न, उक्तमत्र समायामपि भूमौ तत एव
समरात्रादिनियमोस्त्विति । ततो न भूछायया चंद्रग्रहणं चन्द्रछायया वा
सूर्यग्रहणं विचारसहं । राहुविमानोपरागोत्र चन्द्रादिग्रहणव्यवहार इति
युक्तिमुत्पश्यामः सकलबाधकविकलत्वात् । न हि राहुविमानानि सूर्यादि
विमानेभ्योल्पानि श्रूयन्ते । अष्टचत्वारिंशद्योजनैकषष्ठिभागविष्कंभायामानि
तत्त्रिगुणसातिरेकपरिधीनि चतुर्विंशतियोजनैकषष्ठिभागबाहुल्यानि सूर्यविमा-
नानि, तथा षट्पंचाशद्योजनैकषष्ठिभागविष्कंभ यामानि तत्त्रिगुणसातिरेकपरि
धीन्यष्टाविंशतियोजनैकषष्ठिभागबाहुल्यानि चन्द्रविमानानि, तथैकयोज-
नविष्कंभायामानि सातिरेकयोजनत्रयपरिधीन्यर्धतृतीयधनुःशत बाहुल्यानि
राहुविमानानीति श्रुतेः । ततो न चन्द्रबिंबस्य सूर्यबिंबस्य वार्भग्रहोपरागो

कुंठविषाणत्वदर्शनं विरुध्यते । नाप्यन्यदा तीक्ष्णविषाणत्वदर्शनं स्याद्धन्यते राहुविमानस्यातिवृत्तस्य अर्धगोलकाकृतेः पार्श्वभागेनोपरक्ते समवृत्ते अर्धगोलकाकृतौ सूर्यबिंबे चन्द्रबिंबे तीक्ष्णविषाणतया प्रतीतिघटनात् । सूर्याचन्द्रमसां राहूणां च गतिभेदात् तदुपरागभेदसंभव दृग्ग्रहयुद्धादिवत् । यथैव हि ज्योतिर्गतिः सिद्धा तथा ग्रहोपरागादिः सिद्धा इति स्याद्वादिनां दर्शनं । न च सूर्यादिविमानस्य राहुविमानेनोपरागोऽसंभाव्यः, स्फटिकस्येव स्वच्छस्य तेनासितेनोपरागघटनात् । स्वच्छत्वं पुनः सूर्यादिविमानानां मणिमयत्वात् । तप्ततपनीयसमप्रभाणि लोहिताक्षमणिमयानि सूर्यविमानानि, विमलमृणालवर्णानि चन्द्रविमानानि, अर्कमणिमयानि अंजनसमप्रभाणि राहुविमानानि, अरिष्टमणिमयानीति परमागमसद्भावात् । शिरोमात्रं राहुः सर्पाकारो वेति प्रवादस्य मिथ्यात्वात् तेन ग्रहोपरागानुपपत्तेः वराहमिहरादिभिरप्यभिधानात् । कथं पुनः सूर्यादिः कदाचिद्राहुविमानस्यार्धभागेन महतोपरज्यमानः कुण्ठविषाणः स एवान्यदा तस्यापरभागेनाल्पेनोपरज्यमानस्तीक्ष्णविषाणः स्यादिति चेत्, तदाभियोग्य देवगतिविशेषात्तद्विमानपरिवर्तनोपपत्तेः । षोडशभिर्देवसहस्रैरुह्यन्ते सूर्यविमानानि प्रत्येकं पूर्वदक्षिणोत्तरापरभागात् क्रमेण सिंहकुंजरवृषभतुरंगरूपाणि विकृत्य चत्वारि चत्वारि देवसहस्राणि वहंतीति वचनात् । तथा चन्द्रविमानानि प्रत्येकं षोडशभिर्देवसहस्रैरुह्यन्ते, तथैव राहुविमानानि प्रत्येकं चतुर्भिर्देवसहस्रैरुह्यन्ते इति च श्रुतेः । तदाभियोग्यदेवानां सिंहादिरूपविकारिणां कुतो गतिभेदस्तादृक् इति चेत्, स्वभावत एव पूर्वोपार्जितकर्मविशेषनिमित्तकादिति ब्रूमः । सर्वेषामेवमभ्युपगन्तव्यमवश्यं भावित्वादन्यथा स्वेष्टविशेषव्यवस्थानुपपत्तेः तत्प्रतिपादकस्यागमस्यासंभवद्बाधकस्य सद्भावाच्च । गोलाकारा भूमिः समरात्रादिदर्शनान्यथानुपपत्तेरित्येतद्बाधकमागमस्य स्यैवेति चेत् न, अत्र हेतोरप्रयोजकत्वात् । समरात्रादिदर्शनं हि यदि विप्रद्भूमेर्गोलाकारतायां साध्यायां हेतुस्तदा न प्रयोजकः स्यात् प्रास्मद्भूमेर्गोलाकारतायामपि तदुपपत्तेः । अथ अस्मद्भूमेर्गोलाकारतायां

साध्यायां, तथाप्ययवयोजको हेतुस्तिष्ठतमूगोलाकारतायामपि तद्घटनात् । अथ भूसामान्यस्य गोलाकारतायां साध्यायां हेतुस्तथाप्यगमकस्तिर्यक्-सूर्यादिभ्रमणादिनामर्गोलकाकारतायामपि भूमेः साध्यायां तदुपपत्ते. । समनलायामपि भूमौ ज्योतिर्गतिविशेषात्समरात्रादिदर्शनस्योपपादितत्वाच्च । नातः साध्यसिद्धिः कालात्ययापदिष्टत्वाच्च । प्रमाणबाधितपक्षनिर्देशानंतरं प्रयुज्यमानस्य हेतुत्वेतिप्रसंगात् । ततो नेदमनुमानं हेत्वाभासोत्थं बाधकं प्रवृत्तागमस्य येनास्मादेवेष्टसिद्धिर्न स्यात् ॥

ज्योतिः शास्त्रमतो युक्तं नैतत्स्याद्वादविद्विषाम् ॥
संवादकमनेकान्ते सति तस्य प्रतिष्ठिते ॥ १७ ॥

नहि किंचित्सर्वथैकान्ते ज्योति.शास्त्रे संवादकं व्यवतिष्ठते प्रत्यक्षादिवत् नित्याद्यनेकान्तरूपस्य तद्विषयस्य सुनिश्चितासंभवद्बाधकत्वाभावात् तस्य दृष्टेष्टाभ्यां प्रबाधनात् । तत. स्याद्वादिनामेव तद्युक्तं, सत्यनेकान्ते तत्प्रतिष्ठानात् तत्र सर्वथा बाधकविरहितनिश्चयात् ॥

॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥

किंकृत इत्याह—

ये ज्योतिष्काः स्मृता देवास्तत्कृतो व्यवहारतः ॥
कृतः कालविभागोयं समयादिर्न मुख्यतः ॥ १ ॥
तद्विभागास्तथा मुख्यो नाविभागः प्रसिद्ध्यति ॥
विभागरहिते हेतौ विभागो न फले क्वचित् ॥ २ ॥

विभागवान् मुख्य· कालो विभागवत्फलनिमित्तत्वात् क्रियादिवत् । समयावलिकादिविभागव्यवहारकाले लक्षणफलनिमित्तत्वस्य मुख्यकाले धर्मिणि प्रसिद्धत्वात् नाप्याश्रयासिद्ध·, सकलकालवादिनां मुख्यकाले विवादाभावात् तदभाववादिनां तु प्रतिक्षेपात् । गगनादिनानैकान्तिकोऽयं हेतुरिति चेन्न, तस्यापि विभागवदवगाहनादिकार्या-

स्तयौ विभागवत एव निमित्तत्वोपपत्ते । ननु च यद्यवयवभेदो विभागस्तदा नासौ गगनादावस्ति तस्यैकद्रव्यत्वोपगमात् । पटादिवदवयवारभ्यत्वानुपपत्तेश्च ।

अथ प्रदेशवतोपचारो विभागस्तदा कालेऽप्यस्ति, सर्वगतैककालवादिनामाकाशादिवदुपचरितप्रदेशकालस्य विभागवत्त्वोपगमात् । तथा च तत्साधने सिद्धसाधनमिति कश्चित्, परमार्थत एव गगनादेः सप्रदेशत्वनिश्चयात् । तस्य सर्वदावस्थितप्रदेशत्वात् एकद्रव्यत्वाच्च । द्विविधा ह्यवयवाः सदावस्थितवपुषोऽनवस्थितवपुषश्च । गुणवत्तत्र सदावस्थितद्रव्यप्रदेशाः सदावस्थिता एवान्यथा द्रव्यस्यानवस्थितत्वप्रसंगात् । पटादिवदनवस्थितद्रव्यप्रदेशास्तु तंत्वादयोऽनवस्थितास्तेषामवस्थितत्वे पटादीनामवस्थितत्वापत्ते । कादाचित्कत्वस्थैर्यतयावधारितावयवत्वस्य च विरोधात् । तत्र गगनं धर्माधर्मैकजीवाश्चावस्थितप्रदेशाः सर्वे यतोऽवधारितप्रदेशत्वेन वक्ष्यमाणत्वात् प्रदेशप्रदेशिभावस्य च तेषां तैरनादित्वात् । कथमनादीनां गगनादितत्प्रदेशानां प्रदेशप्रदेशिभावः परमार्थपथप्रस्थायी ? सादीनामेव तंतुपटादीनां तद्भावदर्शनात् इति चेत्, कथमिदानीं गगनादितन्महत्त्वादिगुणानामनादिनिधनानां गुणगुणिभाव पारमार्थिकः सिध्येत् ? तेषां गुणगुणिलक्षणयोगात् तथाभाव इति चेत्, तर्हि तत्प्रदेशानामपि प्रदेशिप्रदेशलक्षणयोगात् प्रदेशप्रदेशिभावोऽस्तु । यथैव हि गुणपर्ययवद्द्रव्यमिति गगनादीनां द्रव्यलक्षणमस्ति तन्महत्त्वादीनां च 'द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः' इति गुणलक्षणं तथावयवानामेकत्वपरिणाम प्रदेशिद्रव्यमिति प्रदेशिलक्षणं गगनादीनामवयुतोऽवयवः प्रदेशलक्षणं तदेकदेशानामस्तीति युक्तस्तेषां प्रदेशप्रदेशिभाव । कालस्तु नैकद्रव्यं तस्य संख्येयगुणद्रव्यपरिणामत्वात् । एकैकस्मिन्लोकाकाशप्रदेशे कालाणोरेकैकस्य द्रव्यस्यानंतपर्यायस्याभ्युपगमे तद्देशपतिद्रव्यस्यानंतस्य परमाण्वादेरनंतपरिणामानुपपत्तेरिति द्रव्यतो भावतो वा विभागवत्त्वे साध्ये कालस्य न सिद्धसाधनं । नापि गगनादिनानैकांतिको हेतु । क्षित्यादि-

निदर्शनं साध्यसाधनविकलमित्यपि न मन्तव्यं तत्कार्यस्यांकुरादेर्विभागवतः प्रतीतेः, क्षित्यादेश्च द्रव्यतो भावतश्च विभागवत्त्वसिद्धेरिति सूक्तं ' विभागरहिते हेतौ विभागो न फले क्वचित् " इति ॥

॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ (श्रीउमास्वामि)

किमनेन सूत्रेण कृतमित्याह—

बहिर्मनुष्यलोकात्तेऽवस्थिता इति सूत्रतः ॥
तत्रासन्नाव्ययच्छेदः प्रादक्षिण्यमतिक्षतिः ॥ १ ॥

कृतेति शेषः ।

एवं सूत्रचतुष्टयाज्ज्योतिषामरचिंतनम् ॥
निवासादिविशेषेण युक्तं बाधविवर्जनात् ॥ २ ॥

....।...

त्रिलोकसार—

श्रीनेमिचंद्र सैद्धान्तिक विरचित

त्रिलोकसार अध्याय तृतीय-" ज्योतिर्लोकाधिकार प्रतिपादन अधिकार "

हिंदीभाषा अनुवादकार स्वर्गीय पं० प्रवर श्रीटोडरमल्लजी
छा. पु. पृ. ४१–२०४ ॥

तहाँ तारादिकनिका स्थितिस्थान तीन गाथानि करि कहैं हैं—

णउदुत्तर सत्त सए दससीदी चदुदुगे तिय चउक्के ॥
तारिणससिरिक्खबुहा सुक्कगुरंगारमंदगदी ॥ ३३२ ॥
नवत्युत्तर सप्तशतानि दश अशीतिः चतुर्द्विके त्रिकचतुष्के ।
तारेनशशिऋक्षबुधाः शुक्रगुर्वंगारमंदगतयः ॥ ३३२ ॥

अर्थ—निवै अधिक सातसै विषै उपरि दश असी च्यारि दोय स्थानविषै तीन चारि स्थानविषै जाइ क्रमतैं तारा इन शशि ऋक्ष बुध शुक्र गुरु अगार मंदगति तिष्ठे हैं॥ भावार्थ —चित्रापृथ्वीतैं लगाइं सातसै निवैयोजन उपरिलौ तारे हैं। बहुरि तिनतैं दश योजन उपरि इन कहिए सूर्य हैं। बहुरि तिनतैं असी योजन उपरि शशि कहिए चद्रमा है। बहुरि तिनतैं च्यारि योजन ऊपरि ऋक्ष कहिए नक्षत्र हैं। बहुरितिनतैं च्यारि योजन उपरि बुध है। बहुरि तिनतैं तीन योजन उपरि शुक्र है। बहुरि तिनतैं तीन योजन ऊपरि गुरु कहिये बृहस्पति है। बहुरि तितैं तीन योजन उपरि मंदगति कहिए शनैश्चर है। ऐसे ज्योतिषी तिष्ठे हैं॥ ३३२॥

अवसेसाण गहाण णयरीओ उवरि चित्तभूमीदो॥
गंतूण बुहसणीण विचाले होंति णिच्चाओ॥ ३३३॥
अवशेषाणां ग्रहाणां नगर्य उपरि चित्राभूमितः॥
गत्वा बुधशन्योः विचाले भवति नित्याः॥ ३३३॥

अर्थ—अठ्यासी महनिविषैं अब शेष तिनकी नगरी उपरि उपरि चित्रा भमितैं जाइ बुध अर शनैश्चर इन दोऊनकै बीची अंतराल क्षेत्रविषैं शाश्वती हैं॥ ३३३॥

अत्थइ सणी णवसये चित्तादो तारगावि तावदिए॥
जोइसपडलबहल्लं दससहियं जोयणाण सयं॥ ३३४॥
आस्ते शनिः नवशतानि चित्रातः तारका अपि तावतः॥
ज्योतिष्कपटलबाहुल्यं दशसहितं योजनानां शतम्॥ ३३४

अर्थ—शनैश्चर चित्राभूमितैं नवसै योजन उपरि आस्ते कहिए तिष्ठै है। बहुरि तारे हैं तेभी तावत कहिए नवसै योजन पर्यंत तिष्ठे हैं। सो चित्रातैं सातसै निवै योजन उपरि सों लगाए नवसै योजन पर्यंत

ज्योतिषी देवनिका पटलका बाहुल्य कहिए मोटाईका प्रमाण सो दश सहित एकसौ योजन प्रमाण जानना ॥ ३३४ ॥

आगैं प्रकीर्णक तारानिका प्रकार अंतराल निरूपण है—

तारंतरं जहण्णं तेरिच्छेकोससत्तमागो दु ॥
पण्णासं मज्झिमयं सहस्समुक्कस्सयं होदि ॥ ३३५ ॥
तारांतरं जघन्यं तिर्यक् क्रोशसप्तभागस्तु ॥
पंचाशत् मध्यमकं सहस्रमुत्कृष्टकं भवति ॥ ३३५ ॥

अर्थः—तारातैं ताराके वीचि तिर्यगरूप बरोबरिविषै अंतरालजघन्य एक कोशका सातवां भाग, मध्यम पचास योजन, उत्कृष्ट एक हजार योजन प्रमाण हो है ॥ ३३५ ॥

अब ज्योतिषीनिके विमानस्वरूप निरूपै है—

उत्ताणट्ठियगोलगदलसरिसा सव्व जोई सविमाणा ॥
उवरिं सुरणगराणि य जिणभवणजुदाणि रम्माणि ॥३३६॥
उत्तानस्थितगोलकसदृशाः सर्वज्योतिष्कविमानाः ॥
उपरि सुरनगराणि च जिनभवनयुतानि रम्याणि ॥३३६॥

अर्थ—गोलक जो गोलाताका दल कहिए तिस गोलाकौं वीचिमैं सौं विदारि दोय खण्ड करिए तिसविषैं जो एक खण्ड सो उत्तान स्थित कहिए तिस आधा गोलाकों ऊंचा स्थापित किया होय चौडा ऊपरि अर ताकी अणी नीचे ऐसे धऱ्या होय ताका जैसा आकार तिह समान सर्व ज्योतिषीनिके विमान हैं । बहुरि तिन विमाननिके ऊपरि ज्योतिषी देवनिके नगर हैं । ते नगर जिनमंदिरनिकरि संयुक्त हैं । बहुरि रमणीक हैं ॥ ३३६ ॥

आगैं तिन विमाननिका व्यास अर बाहुल्य दोय गाथानिकरि कहै हैं-

जोयणमेकट्ठिकए छप्पण्णठदाल चंदरविवास ॥
सुक्कगुरिदरतियाणं कोसं किंचूणकोस कोसद्धं ॥ ३३७ ॥
योजन एकषष्ठिकृते षट्पंचाशदष्टचत्वारिंशते चंद्ररविन्यासौ ॥
शुक्रगुर्वितरत्रयाणां क्रोशः किंचिदून क्रोशः क्रोशार्धम् ॥ ३३७

अर्थ—एक योजनकों इकसठि भाग करिए तहां छप्पन भाग प्रमाण तौ चंद्रमाके विमानका व्यास है। बहुरि शुक्रका एक कोश, बृहस्पतिका किंचित् ऊन एक कोश, इतर तीन बुध मंगल शनैश्चर इनका आधकोश प्रमाण विमानव्यास जानना ॥ ३३७ ॥

कोसस्स तुरियमवरंतुरिय हियकमेण जाव कोसोत्ति ॥
ताराणं रिक्खाणं कोसं बहुलं तु वासद्धं ॥ ३३८ ॥
क्रोशस्य तुरीयमवरंतुर्याधिक क्रमेण यावत् क्रोश इति ॥
ताराणां ऋक्षाणां क्रोशं बाहुल्यं तु व्यासार्धम् ॥ ३३८ ॥

अर्थ-तारानिका विमाननिका जघन्य व्यास कोशका चौथा भाग प्रमाण है। बहुरि चौथाई अधिक एक कोश पर्यंत जाननां तहां आध-कोश पौणकोश प्रमाण मध्यम व्यास जाननां। एक कोश प्रमाण उत्कृष्ट व्यास जाननां। बहुरि शेष जे नक्षत्र तिनका विमानव्यास एककोश प्रमाण जाननां। बहुरि सर्वविमाननिका बाहुल्य कहिए मोटाईका प्रमाण सो अपने अपने व्यासतैं आधा जाननां ॥ ३३८ ॥

आगैं राहु केतु ग्रहनिका विमान व्यास वा तिनका कार्य वा तिनका अवस्थानकों दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

राहु अरिट्ठविमाणा किंचूणं अधोगंता ॥
छम्मासे पव्वते चंदरवीछादयन्ति कमे ॥ ३३९ ॥
राहरिष्टविमानौ किंचिदूनौ योजनं अधोगंतारौ ॥
षण्मासे पर्वान्ते चंद्ररवीछादयतः क्रमेण ॥ ३३९ ॥

अर्थ—राहु अर अरिष्ट कहिए केतु इन दोऊनिके विमान किछू घाटि एक योजन प्रमाण है। बहुरि ते विमान क्रमकरि चद्रमा अर सूर्यका विमानकै नीचै गमन करे हैं। बहुरि छह मास भए पर्वका अन्तविषै चंद्रमा सूर्यकों आछादे है। राहु तौ चंद्रमाकौं आछादे है, केतु सूर्यकौं आछादे है याका ही नाम ग्रहण कहिए हैं॥ ३३९॥

राहुअरिट्ठविमाणधयादुवरिपमाणअंगुलचउक्कं॥
गतुण ससिविमाणा सूरविमाणा कमे होंति॥ ३४०॥
राव्हारिष्टविमानध्वजादुपरिप्रमाणांगुलचतुष्कम्॥
गत्वा शशिविमानाः सूर्यविमानाः क्रमेण भवन्ति॥ ३४०॥

अर्थ— राहु अर केतुके विमाननिका जो ध्वजादण्ड ताके ऊपरि च्यारि प्रमाणांगुल जाइ क्रम करि चंद्रमाके विमान अर सूर्यके विमान हैं। राहु विमानकै ऊपरि चंद्रमा विमान है केतु विमानकै ऊपरि सूर्य विमान है॥ ३४०॥

आगे चंद्रादिकनिकै किरणनिका प्रमाण कहे हैं—

चंदिणवारसहस्सा पादा सीयल खरा य सुक्के दु॥
अड्ढाइज्जसहस्सा तिव्वा सेसा हु मन्दकरा॥ ३४१॥
चद्रेनयोः द्वादशसहस्राः पादाः शीतलाः खराश्च शुक्रे तु॥
अर्धतृतीयसहस्राः तीव्राः शेषा हि मन्दकराः॥ ३४१॥

अर्थ— चंद्रमा अर सूर्य इनके बारह बारह हजार किरण हैं। तहां चंद्रमाके किरण शीतल हैं सूर्यके किरण खर कहिये तीक्ष्ण हैं। बहुरि शुक्र है ताके अढाई हजार किरण है ते तीव्र कहिए प्रकाशकरि उज्वल हैं। बहुरि अवशेष ज्योतिषी मंदकरा कहिए मंद प्रकाश संयुक्त हैं॥ ३४१॥

आगें चंद्रमाका मण्डलकी वृद्धिहानिका अनुक्रमकूं कहै है—

चदाणयसोलसमं किण्हो सुको य पण्णरदिणोत्ति ॥
हेट्ठिह णिञ्च राहूगमणविसेसेण वा होदि ॥ ३४२ ॥
चंद्रो निजषोडशकृष्णः शुक्लश्च पंचदशदिनान्तम् ॥
अधस्तन नित्य राहुगमनविशेषेण वा भवति ॥ ३४२ ॥

अर्थ—चन्द्रमण्डल है सो अपना सोलहवां भाग प्रमाण कृष्ण अर शुक्ल पंद्रह दिन पर्यंत हो है। भावार्थ—चंद्र विमानका जो सोल्ह भाग विषैं एक एक भाग एक एक विषैं श्वेतरूप होइ स्वयमेव पंद्रह दिन पर्यंत परिनमैं हैं। तहां चंद्रमाका विमानका क्षेत्र योजनका छप्पन एकसठिवां भाग प्रमाण $\frac{५६}{६१}$ है तो एक कलाका केता होइ। ऐसे ताकों सोल्हका भाग दिए आठ करि अपवर्तन किए योजनका एक सौ बाईस भाग करि तामें सात भाग प्रमाण एक कलाका प्रमाण आया $\frac{७}{१२२}$। बहुरि एक कलाका $\frac{७}{१२२}$ प्रमाण होइ तो सोल्ह कलानिका केता होइ ऐसे दोय का अपवर्तन करि गुणे छप्पन इकसठिवां भाग प्रमाण आवै। बहुरि अन्य कोई आचार्यानके अभिप्रायकरि चंद्रविमानकै नीचे राहु विमान गमन करै है तिस राहुका सदाकाल ऐसा ही गमन विशेष है जो एक एक कला चंद्रमाकी क्रमतें आछादे वा उघाडै है तिहकरि वृद्धि हानि है ॥ ३४२ ॥

आगें चंद्रादिकनिके वाहक कहिए चलावनेवाले देव तिनका आकार विशेष वा तिनकी संख्या कहैं हैं—

सिंहगयवसहजडिलस्सायारसुरा वहंति पुव्वादिं ॥
इंदु खीणं सोलसमसहस्समद्धद्धमिदरतिये ॥ ३४३ ॥
सिंहगजवृषभजटिलाश्वाकारसुरा वहंति पूर्वादिम् ॥
इंदुरवीणां षोडशसहस्राणि तदर्धार्धक्रममितरत्रये ॥ ३४३ ॥

अर्थ— सिंह हाथी वृषभ जटिलरूप आकारकों धारि देव हैं ते विमाननिकों पूर्व्वादि दिशानि प्रति वहंति कहिये वेह चालें हैं । ते देव चंद्रमा अर सूर्य इनके तौ प्रत्येक सोलह हजार हैं । बहुरि इतर तीनके आधे आधे हैं तहां ग्रहनिके आठ हजार नक्षत्रनिके च्यारि हजार तारानिके दोय हजार विमानवाहक देव जाननें ॥ ३४३ ॥

आगें आकाशविर्षें गमन करतें जे केइ नक्षत्र तिनके दिशाभेद कहै हैं ।—

उत्तरदक्खिण उड्ढाधोमज्झे अभिजि मूल सादी य ॥
भरणी कित्तिय रिक्खा चरंति अवराणमेव तु ॥ ३४४ ॥
उत्तरदक्षिणोर्ध्वाधोमध्ये अभिजिन्मूलः स्वातिश्च ॥
भरणी कृत्तिका ऋक्षाणि चरंति अवराणामेवं तु ॥३४४॥

अर्थ—उत्तर १ दक्षिण १ ऊर्ध्व १ अधः १ मध्यः १ इन विर्षें क्रमतें अभिजित १ मूल १ स्वाति १ भरणी १ कृत्तिका ए पंच नक्षत्र गमन करै हैं। अवराणं कहिए क्षेत्रांतरकों प्राप्त भए जे अभिजित आदि पंच नक्षत्र तिनकी ऐसी अवस्थिति है ॥ ३४४ ॥

आगें मेरुगिरितैं कितने दूर कैसे गमन करैहैं—

इगिवीसेयारसयं विहाय मेरुं चरंति जोइगणा ॥
चंदतियं वज्जित्ता सेसा हु चरन्ति एक्कपहे ॥ ३४५ ॥
एकविंशैकादशशतानि विहाय मेरुं चरंति ज्योतिर्गणाः ॥
चन्द्रत्रयं वर्जयित्वा शेषा हि चरंति एकपथे ॥ ३४५ ॥

अर्थ—इकईस अधिक ग्यारहसैं योजन मेरुको छोड़ि ज्योतिषी समूह गमन करै हैं। भावार्थः—मेरुगिरितैं ग्यारहसै इकइस योजन ऊपरै ज्योतिषी मेरुकी प्रदक्षिणारूप गमन करैहैं। मेरुतैं ग्यारहसै इकईस योजन पर्यंत कोऊ ज्योतिषी न पाइए हैं। बहुरि चंद्रमा सूर्य ग्रह इन तीन

बिना अवशेष सर्व ज्योतिषी एक पथविषैं गमन करै हैं। भावार्थ—चंद्रमा सूर्य ग्रह ये तौ कदाचित् कोई कदाचित् कोई परिधिरूप मार्गविषै भ्रमण करै हैं। बहुरि नक्षत्र अर तारे ए अपना अपना एकही परिधिरूप मार्गविषै गमन करै हैं। अन्य अन्य मार्गविषैं नहीं भ्रमण करै हैं ॥ ३४५ ॥

अब जंबूद्वीपतें लगाय पुष्करार्ध पर्यंत चंद्रमा सूर्यनिका प्रमाण निरूपै है—

दो दोवग्गं बारस बादाल बहत्तरिंदुइणसखा ॥
पुक्खरदलोत्ति परदो अवट्ठिया सव्वजोइगणा ॥ ३४६ ॥
द्वौ द्विवर्गं द्वादश द्वाचत्वारिंशद्वासप्ततिरिंद्विनसंख्या ॥
पुष्करदलांतं परतः अवस्थिताः सर्वज्योतिर्गणाः ॥ ३४६ ॥

अर्थ—दोय दोय वर्ग बारह बियालीस बहत्तरि चंद्रमा सूर्यनिकी संख्या पुष्कार्ध पर्यंत है। भावार्थ—जंबूद्वीपविषैं दोय लवण समुद्रविषैं च्यारि घातुकी खण्डविषैं बारह कालोदकविषैं बियालीस पुष्करार्धविषैं बहत्तरि चद्रमा है। अर इतने इतने ही सूर्य है। बहुरि पुष्करार्द्धतैं परैं जे ज्योतिषी देवनिका गण है ते अवस्थित है। कदाचित अपनें अपनें स्थानतैं गमन नाहीं करै है जहां है तहां ही स्थिररूप तिष्ठै है ॥ ३४६ ॥

आगैं तहा स्थिर हैं जु ध्रुव तारे तिनकौं निरूपै हैं—

छकदि णवतीससय दसयसहस्स खगार इगिदाल ॥
गयणतिदुगवेगण्ण थिरतारा पुक्खरदलोत्ति ॥ ३४७ ॥
षट्कृतिः नवत्रिंशशतं दशकसहस्रं सद्वादश एकचत्वारिंशत् ॥
गगनत्रिद्विकत्रिपंचाशत् स्थिरताराः पुष्करदलांतम् ॥ ३४७ ॥

अर्थ—छहकी कृति ३६ अर गुणतालीस अधिक सौ १३९ अर दश अधिक हजार १०१० अर बिंदी बारह इकतालीस ४११२० अर बिंदी तीन दोय तरेपन ५३२३० इतने पुष्करार्ध पर्यंत स्थिर तारे हैं।

भावार्थ—जंबूद्वीपविषैं छत्तीस लवण समुद्रविषैं एक सौ गुणतालीस धातकी खण्डविषैं एक हजार दश कालोदकविषैं इकतालीस हजार एक सौ बीस पुष्करार्धविषैं तरेपन हजार दोयसै तीस ध्रुवतारे हैं। ते कवहूं अपने स्थानतैं गमन नाहीं करै हैं। जहांके तहां स्थिररूप रहे हैं॥ ३४७॥

आगैं ज्योतिषी समूहनिके गमनका क्रम विचारैं हैं—

सगसगजोइगणद्धं एक्के भागह्मि दीवउवहीणं॥
एक्के भागे अद्धं चरंति पंतिक्कमेणेव॥ ३४८॥
स्वकस्वकीयज्योतिर्गणार्धं एकस्मिन् भागे द्वीपोदधीनाम्॥
एकस्मिन् भागे अर्ध चरंति पंक्तिक्रमेणैव॥ ३४८॥

अर्थ—अपनां अपनां ज्योतिषी गणका अर्ध तो दीप समुद्रनिका एक भागविषैं अर एक भागविषैं पंक्तिका अनुक्रमकरि विचरैं हैं।

भावार्थ-जिस द्वीप वा समुद्रविषैं जेते ज्योतिषी हैं तिनविषैं आधे ज्योतिषी तौ तिह द्वीप वा समुद्र का एक भागविषैं गमन करैं हैं आधे एक भाग विषैं गमन करै हैं। ऐसे पंक्ति लिएं गमन जाननां॥३४८॥

आगैं मानुषोत्तर पर्वततैं परे चंद्रमा सूर्यनिके अवस्थानका अनुक्रम निरूपैं हैं-

मणुसुत्तरसेलादो वेदिपमूलादु दीवउवहीणं॥
पण्णाससहस्सेहिं य लक्खे लक्खे तदो वलयम्॥ ३४९॥
मानुषोत्तरशैलात् वेदिकामूलात् द्वीपोदधीनाम्॥
पंचाशत्सहस्रैश्च लक्षे लक्षे ततो वलयम्॥ ३४९॥

अर्थ-मानुषोत्तर पर्वततैं परैं अर द्वीप समुद्रनिकी वेदिकिके परैं तौ पचास हजार योजन जाइ प्रथम वलय है। बहुरि तिस प्रथम वलयतैं परैं लाख लाख योजन परैं जाइ द्वितीयादिक वलय हैं। भावार्थ – मानुषोत्तर

पर्वततैं पंचास हजार योजन व्यास परैं जो परिधि सो बाह्य पुष्करार्ध द्वीपका प्रथम वलय है। तिह परैं एक लाख योजन व्यास जाइ जो परिधि सो दूसरा वलय है। ऐसैं लाख लाख योजन व्यास जाइ जो परिधि सो वलय जाननां। बहुरि पुष्कर द्वीपकी अंत वेदिकाके परैं पचास हजार योजन व्यास जाइ जो परिधि सो पुष्कर समुद्रका प्रथम वलय हैं। तातैं परैं लाख योजन व्यास जाइ जो परिधि सो द्वितीय वलय है। ऐसे लाख लाख योजन व्यास परैं जाइ जो परिधि सो वलय जाननां। ऐसे ही अन्य द्वीप समुद्रनिविषैं वलय जाननां ॥ ३४९ ॥

आगैं तिन वलयनविषैं तिष्टते जे चंद्रमा सूर्य तिनकी संख्या कहैं हैं।—

> दीवद्धपढमवलये चउदालसयं तु वलयवलयेसु ॥
> चउचउवड्ढी आदी आदीदो दुगुणदुगुणकमा ॥ ३५० ॥
> द्वीपार्धप्रथमवलये चतुश्चत्वारिंशच्छतं तु वलयवलयेषु ॥
> चतुश्चतुर्वृद्धयः आदिः आदितः द्विगुणद्विगुणक्रमः ॥३५०॥

अर्थ—मानुषोत्तर पर्वततैं बाह्यस्थित जो पुष्करार्ध ताका प्रथम वलयविषैं एकसौ चवालीस है। भावार्थ-जो मानुषोत्तर पर्वत परै पचास हजार योजन परे जाइ जो परिधि ताविषैं एक सौ चवालीस चंद्रमा एकसौ चवालीस सूर्य है। ऐसैं ही द्वितीयादि वलय वलयविषैं च्यारि च्यारि बधती चंद्रमा सूर्य जाननें ॥ १४८ । १५२ । १५६ । १६० । १६४ । १६८ । १७२ ॥ बहुरि उत्तरोत्तर द्वीप वा समुद्रका आदि विषैं पूर्वपूर्व द्वीप वा समुद्रका आदितैं दूणे दूणे क्रमतैं जाननें। जैसे पुष्करार्धका आदिविषैं एकसौ चवालीस, तातैं दूणे पुष्कर समुद्रका आदि विषैं हैं, तासैं द्वितीयादि वलयविषैं च्यारि च्यारि बधती है। ऐसे ही सर्वत्र जाननें ॥ ३५० ॥

आगैं तिस तिस वलयविषैं तिष्ठते चंद्रमातैं चंद्रमाका अंतराल सूर्यतैं सूर्यका अंतराल परिधिविषैं कहै है—

सगसगपरिधिं परिधिगरविंदुभजिदे दु अंतरं होदि ॥
पुस्सह्मि सव्वसूरठिया हु चंदा य अभिजिह्मि ॥ ३५१ ॥
स्वकस्वकपरिधिं परिधिगरवींदुभक्ते तु अंतरं भवति ॥
पुष्ये सर्वसूर्याः स्थिता हि चंद्राश्च अभिजिति ॥ ३५१ ॥

अर्थ—अपनां अपनां सूक्ष्म परिधिकौं परिधिविषैं प्राप्त जे चंद्र वा सूर्य तिनके प्रमाणका भाग दिएं अंतराल हो है। तहां प्रथम जंबूद्वीपतैं लगाय दोऊ तरफका अभ्यंतर द्वीपसमुद्रनिका वा वलयनिका व्यास मिलाएं बाह्य पुष्करार्धका प्रथम वलयका सूची व्यास छियालीस लाख योजन हो है। मानुषोत्तर पर्वतका सूची व्यास पैतालीस लाख योजन तामैं दोऊ तरफका वलयका व्यास पचास हजार योजन मिलाएं छियालीस लाख योजन हो है। याका " विष्कंभवग्गदहगुण " इत्यादि करण-सूत्रकरि सूक्ष्म परिधिविषैं एक कोडि पैतालीस लाख छियालीस हजार च्यारि योजन प्रमाण होइ ताकौं परिधिविषैं प्राप्त सूर्य वा चंद्रमाका प्रमाण एकसौ चवालीस ताका भाग दिएं एक लाख एक हजार सतरह योजन अर गुणतीस योजनका एक सौ चवालीसवां भाग प्रमाण

$१०१०१७\frac{२९}{१४४}$ सूर्यतैं सूर्यका अंतराल परिधिविषै बिम्बसहित जानना

बहुरि बिंब जो चंद्र वा सूर्यका मण्डल तीह विना अंतराल ल्याइये है जो बिंबसहित अंतरालविषैं योजन थे तिनमैं सौं एक घटाइए १०१०१६। बहुरि तिस एक योजनकौं गुणतीसका एक सौ चवालीसवां भाग सहित समच्छेद विधान करि जोडिए तब

$\frac{१}{१}\frac{२९}{१४४}$ $\frac{१४४}{१४४}\frac{२९}{१४४}$ एक सौ तेहत्तरिका एकसौ चवालीसवां भाग होइ तामैं चंद्रका बिंब छप्पनका इकसठिवां भाग सो समच्छेद

विधान करि घटाइए $\frac{१७३ \quad ५६ \quad १०५५३ \quad ८०६४ \quad २४८९}{१४४ \quad ६१ \quad ८७ \quad ६४ \quad ७६४८ \quad ८७८४}$
तब चौहसे निवासीको सित्यासीसैं चौरासीका भाग दीजिये इतना भया ऐसे करि चन्द्रमातैं चन्द्रमाका बिंब रहित अंतराल एक लाख एक हजार सोल्ह योजन अर चौइसै निवासी योजनका सित्यासीसैं चौरासी भाग-विषै एक भाग प्रमाण आया। बहुरि तीह एकसौं तेहत्तरिका एकसौं चवालीसवां भागविषैं अठतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण सूर्यबिंबकों समच्छेद विधान करि घटाए छवीसै इकतालीसका सित्यासीसैं चौरासीवां भाग आया $\frac{१७३}{१४४}$ ६१ $\frac{१०५५३}{८७८४}$ $\frac{६९१२}{८७८४}$ $\frac{३६४१}{४}$ सो इतनैं करि अधिक एक लाख एक हजार सोल्ह योजन प्रमाण सूर्यतैं सूर्यका अंतराल जानना। ऐसे ही अन्य वलयनिविषैं अंतराल ल्यावना। बहुरि सर्व वलय संबंधी सूर्य तौ पुष्य नक्षत्रविषैं स्थित है। अर चंद्रमा अभिजित नक्षत्रविषै स्थित हैं।

भावार्थ — सूर्यका विमान अर पुष्य नक्षत्रका विमान नीचे ऊपरि तिष्ठै हैं। अर चंद्रमाका विमान अर अभिजित नक्षत्रका विमान नीचे ऊपरि हैं ॥ ३५१ ॥

आगैं असंख्यात द्वीप समुद्रनिविषैं प्राप्त जे चंद्रादिक तिनकी संख्या ल्यावनेकौं गच्छका प्रमाण ल्यावता संता ताका कारणभूत असंख्यात द्वीप समुद्रनिकी संख्याकों आठ गाथानिकरि कहैं हैं—

रज्जूदलिदे मंदिरमज्झादो चरिमसायरंतोत्ति ॥
पडदि तदद्धे तस्स दु अब्भंतरवेदिया परदो ॥ ३५२ ॥
रज्जूदलिते मंदरमध्यतः चरमसागरांत इति ॥
पतति तदर्धे तस्य तु अभ्यन्तरवेदिका परतः ॥ ३५२ ॥

अर्थ—राजूकों आधा किएं मेरुका मध्यतैं लगाय अंतका सागर-पर्यंत प्राप्त हो है। भावार्थ—मध्यलोक एक राजू है तिस एक राजूकों आधा करिए तब मेरुगिरिका मध्यतैं लगाय अंतका स्वयंभूरमण समुद्रपर्यंत एक पार्श्वविर्षे क्षेत्र हो हैं। बहुरि तिसकों आधा किएं तिसकी अभ्यंतर वेदिकाके परै ॥ ३५२ ॥

कहा सो कहै हैं—

दसगुणपण्णत्तरिसयजोयणमुवगम्म दिस्सदे जम्हा ॥
इगिलक्खहिओ एक्को पुव्वगसव्वुदहिदीवेहिं ॥ ३५३ ॥
दशगुणपचसप्ततिशतयोजनमुपगम्य दृश्यते यस्मात् ॥
एकलक्षाधिकः एकः पूर्वगसर्वोदधिद्वीपेभ्यः ॥ ३५३ ॥

अर्थ—दश गुणा पिचहत्तरिसै योजन जाई राजू दीसै है। भावार्थ—स्वयंभूरमण समुद्रकी अभ्यन्तर वेदीतैं पिचहत्तरि हजार योजन परै जाइ तिस आघ राजूका अर्द्धभाग हो है। काहेतैं सर्व पूर्व द्वीप वा समुद्र-निके व्यासकों जोडे जो प्रमाण होइ तातैं उतर द्वीप वा समुद्रका व्यास एक लाख योजन अधिक हो है। सो इसही कथनकों स्पष्ट करै हैं—स्वयंभूरमण समुद्रका बत्तीस लाखयोजन प्रमाण व्यास कल्पिकरि जम्बूद्वीपका आधलाख सहित सर्व द्वीप समुद्रनिका वलय व्यासके अंकनिकों जोडिए ५०००० । २ ल । ४ ल । ८ ल । १६ ल । ३२ ल । तब कल्पना करि आघ राजूका प्रमाण साढा बासठि लाख योजन भए, बहुरि याकों आधा किए इकतीस लाख पचीस हजार योजन प्रमाण दूसरी बार आधा किया राजूका प्रमाण होइ तिहविर्षे पूर्वद्वीप समुद्रनिका वलय व्यास ५०००० । २ ल । ४ ल । ८ ल । १६ ल । जो जोडै तीन लाख पचास हजार योजन प्रमाण भया। सो घटाए तिस स्वयंभूरमण समुद्रका अभ्यंतर वेदिकातैं परैं पिचहत्तरि हजार योजन समुद्रमें गये आघ राजूका अर्ध हो है। बहुरि तीह द्वितीयवार आधा किया राजू

प्रमाण ३१२५०० कों आधा किए पंद्रह लाख बासठि हजार पांचसै योजन तीसरी बार आधा किया राजूका प्रमाण हो है। तिहविषै पूर्वद्वीप समुद्रनिका वलय व्यास ५०००० । २ ल । ४ ल । ८ ल । मिलाएं साढा चौदह लाख योजन भए। सो घटाएं तिस स्वयंभूरमण द्वीपका अभ्यंतर वेदिकातैं एक लाख बाह्द हजार पांचसै योजन परैं द्वीपविषैं जाइ तृतीयवार आधा किया हुवा राजू क्षेत्रका प्रमाण हो है ऐसैं ही पूर्व पूर्वको आधा करि तीहविषै पूर्वद्वीप समुद्रनिका वलय व्यास घटाएं जो जो प्रमाण रहै तितनां तितनां तिस तिस द्वीप वा समुद्रकी अभ्यंतर वेदिकातैं परैं जाइ चतुर्थवार आदि आधा किया राजू क्षेत्रका प्रमाण जाननों ॥ ३५३ ॥

पुणरवि छिण्णे पच्छिमदीवब्भंतरिमवेदियापरदि ।
सगदलजुदपण्णत्तरिसहस्समोसरिय णिपडदि सा ॥ ३५४ ॥
पुनरपि छिन्नायां पश्चिमद्वीपाभ्यंतरवेदिकापरतः ।
स्वदलयुतपंचसप्ततिसहस्रमपसृत्य निपतति सा ॥ ३५४ ॥

अर्थ—बहुरि दूसरी बार छिन्न कहिए आधा किया राजू ताकौं आधा किए ताके पीछे जो द्वीप ताकी अभ्यंतर वेदिकातैं परैं अपना आधा साढा सैंतीस हजार करि संयुक्त पिचहत्तरि योजन परै जाइ सो राजू पडै है। संदृष्टि—द्वितीय बार छिन्न राजूका प्रमाण इकतीस लाख पचीस हजार योजन ताका आधा किये पंद्रह लाख बासठि हजार पांचसै योजन होत सैंतैं स्वयंभूरमणतैं पाछला स्वयंभूरमण द्वीप ताकी अभ्यन्तर वेदिकातैं परैं तिस द्वीप विषैं अपनां आधा करि अधिक पिचहत्तरि हजार के भए लाख बारह हजार पांचसै सो इतनैं योजन जाइ सो राजू पडै है ॥ ३५४ ॥

अर्थ चतुर्थ अष्टमादि राजूके अंश किए जहां जहां मध्यक्षेत्र होइ तहां तहां राजूका पडना कहिए है—

दलिदे पुण तदणंतरसायरमज्झंतरत्थवेदीदो ॥
पडदि सदलचरणण्णिदपण्णत्तरिदससयं गत्ता ॥ ३५५ ॥
दलिते पुनः तदनंतरसागरमध्यांतरस्थवेदीतः ॥
पतति स्वदलचरणान्वितपंचसप्ततिदशशतं गत्वा ॥ ३५५ ॥

अर्थ—बहुरि ताकों आधा किएं, ताके अनंतरि अहिंद्रवर नामा समुद्रकी वेदिकातैं परै अपना आधा अर चौथाईकरि संयुक्त पिचहत्तरि दश सैकडां प्रमाण योजन जाई सो राजू पडै है। संदृष्टि तीसरीवार आधा किया खण्ड पंद्रह लाख बासठि हजार पांचसै १५६२५०० ताकों आधा किएं सात लाख इक्यासीहजार दोयसै पचास योजन होतसंतै तिस स्वयंभूरमण द्वीपके अनंतरि अहिंद्रवरनामा समुद्र ताका अभ्यंतर तटतैं परै तिससमुद्रविर्षे पिचहत्तरि दश सैकडाका पिचहत्तरिहजार भए ताका आधा साढा सैंतीस हजार अर चौथाई पौणा उगणीस हजार इनकों मिलाएं एक लाख इकतीस हजार दोयसै पचास १३१२५० भए। सो इतने योजन जाइ सो राजू पडै है ॥ ३५५ ॥

इदि अब्भंतरतडदो सगदलतुरियट्ठमादि संजुत्तं ॥
पण्णत्तरिं सहस्सं गंतूण पडेदि साताव ॥ ३५६ ॥
इति अभ्यन्तरतटतः स्वकदलतुर्याष्टमादि संयुक्तं ॥
पंचसप्ततिसहस्रं गत्वा पतति सा तावत् ॥ ३५६ ॥

अर्थ—ऐसेंही अभ्यन्तर तटतैं अपना अर्ध चौथाभाग आदि संयुक्त पिचहत्तरि हजार योजन जाइ जाइ सो राजू तावत् पडै है। तहां चौथी बार आधा किए अहिंद्रवर नाम द्वीपका अभ्यंतर तटतैं अपना आधा ३७५००० चौथाई १८७५० अष्टमांस ९३७५ करि संयुक्त पिचहत्तरि ७५००० हजार योजन ४०६२५ जाइ एक पडै है बहुरि पांचईबार आधा किएं तातै पिछला समुद्रकी अभ्यन्तर वेदीतैं अपनां चौथाई अष्टमांश सोलहवा अंशकरि संयुत पिचहत्तरि हजार योजन परै

जाइ राजु पड़ै है, बहुरि छठीवार आधा किए तिस समुद्रतैं पिछला द्वीपकी अभ्यंतर वेदीतैं अपना अर्ध चौथाई आठवां सोलवां बत्तीसवां भाग संयुक्त पिचहत्तरि हजार योजन परे जाइ राजु पड़ै है, ऐसे ही पूर्वै जेता अधिक होई तातैं आधा आधा अधिकका अनुक्रम करि पिछला समुद्र वा द्वीपकी वेदीतैं परे जाइ सो राजू पड़ै है। तहां आधा आधा-का अनुक्रम करि जहां एक योजनका अधिकपणा उबरै तहां पर्यंत पिचहत्तरि हजारके अर्द्धच्छेद सतरह हो है। बहुरि तहां पीछे उबर्या जो एक योजन ताके अंगुल करिए तब सात लाख अड़सठि हजार होइ तिनका आधा आधा क्रमकरि एक अंगुल उबरै तहां पर्यंत उगणीस अर्ध छेद हो है। तिन सर्व छेदनिकौं मिलाय ताका नाम संख्यात किया। बहुरि उबर्या था एक अंगुल ताके प्रदेशकरि आधा आधा अनुक्रम लिये अधिक करतैं सूच्यंगुलके अर्ध छेदनिका जो प्रमाण तितनी बार भए एक प्रदेशका अधिकपणा आनि रहै सो संख्यात अर सूच्यंगुलका अर्द्धछेद मिलाय "संखेज्जरूवसंजुद" इत्यादि गाथा कहै हैं ॥३५६॥

> सखेज्जरूवसंजुदसूईअंगुलछिदिप्पमा जाव ॥
> गच्छंति दीवजलही पडदि तदो सादलक्खेण ॥ ३५७ ॥
> संख्येयरूपसंयुतसूच्यंगुलच्छेदप्रमा यावत् ॥
> गच्छंति द्वीपजलधयः पतति ततः साधलक्षणेन ॥ ३५७ ॥

अर्थ—संख्यातरूप करि संयुक्त ऐसे सूच्यंगुलके अर्ध छेदनिका जो प्रमाण यावत होई तावत ते द्वीप समुद्र पूर्वोक्त अनुक्रम करि अभ्यं-तर वेदीतैं परै जाइ राजु पतनरूप क्षेत्रको प्राप्त हो है। तहां पीछे सर्व द्वीप समुद्रनिविषैं ड्योढ़ लाख १५०००० योजन परै अभ्यंतर वेदीतैं परैं जाइ राजू पड़ै है। कैसे सो कहिए है "अंतधणं गुणगणिदं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं" इस करण सूत्र करि अंतका धन पिचहत्तरि हजार ताकौं गुणकार दोय करि गुणे ड्योढ़ लाख भए तिनमैं

आदिका प्रमाण एक प्रदेश घटाइए अर एक घाटि गुणकारका प्रमाण एकताका भाग दीजिए तब एक प्रदेश घाटि क्योढ लाख योजन प्रमाण भए। सो संख्यात सहित सूच्यंगुलका अर्द्धछेद प्रमाण द्वीपसमुद्र भए। अंतविर्षे अभ्यंतर वेदीतैं इतनै परैं जाइ राजू पडै है। बहुरि आधा आधाकी अर्थ संदृष्टि ऐसी— $\frac{७५०००}{}\ \frac{७५०००}{२}\ \frac{७५००००००}{२५}$ •

सू२ $\frac{२\quad २०००४}{२\quad २२}$ २।१ इहां संदृष्टिविषैं पहिलै तौ पिचहत्तरि हजारतै लगाइ आधे आधे किए आधा करनेकौं दोयका भागहार जानना, ताकै आधा करनेकौं तिस भागहारको दोयका गुणकार जाननां। बहुरि मध्य भेदनिके ग्रहणनिमित्त बीचि बिंदी जाननी। बहुरि आगैं सूच्यंगुलतैं लगाय आधा आधा क्रम जाननां। बहुरि मध्य भेदनिके ग्रहणनिमित्त बीचि बिंदी जाननी। बहुरि आगैं सूच्यंगुलतैं लगाय आधा आधा क्रम जाननां। सूच्यंगुलकी सहनानी दोयका अंक जाननां। बहुरि मध्य भेदनिके ग्रहण निमित बीचि बिंदी जाननी। बहुरि आगैं च्यारि दोय एक प्रदेश जाननैं ऐसे आधा आधाका प्रमाण जाननां। ऐसे पूर्व पूर्व प्रमाणतैं उत्तर उत्तर प्रमाण अधिक करना। बहुरि अंक संदृष्टिकर जैसे चौसठिनैं लगाय एक पर्यंत आधा आधा करिये इहां जाननी। ६४। ३२। १६। ८। ४। २। १। ऐसैं क्योढ लाख योजनका क्रम करि लवणसमुद्र पर्यंत असंख्यात द्वीप समुद्रनिकौं जाईकरि ॥३५७॥ कहा सो कहैं हैं।—

लवणे दु पडिदेकं जंबुए देज्जमादिमा पंच ॥
दीउवही मेरुमला पयदुवजोगी ण छज्जेदे ॥ ३५८ ॥
लवणे द्विः पतितः एकं जंबौ देहि आदिमाः पंच ॥
द्वीपोदधयः मेरुशलाः प्रकृतोपयोगीनः न षट् चैते ॥३५८॥

अर्थ-लवण समुद्रविषैं दोय अर्ध छेद पड़े है। कैसैं? राजूकौं आधा आधा करतैं जहां दोय लाखका अर्धछेद करिए तब सतरहवार भए एक योजन उबरै। बहुरि एक योजनके अंगुल सात लाख अड़सठि हजार तिनके अर्द्ध च्छेद करिए तब उगणीसवार भए एक अंगुल उबरै। बहुरि राजूका अर्धछेद किए प्रथम अर्धछेद मेरुकै मध्य पड्या सो ऐसे सतरह उगणीस एक अर्धछेद मिलि संख्यात अर्धच्छेद भए। बहुरि एक अंगुल उबर्‍या था सो यह सूच्यंगुल है। सो सूच्यंगुलके अर्धछेद इतनें छे छे। इहां पल्यके अर्ध छेदनिका वर्ग प्रमाण सूच्यंगुलके अर्ध छेद जानने। इनकौं मिराए संख्यात अधिक सूच्यंगुलके अर्ध छेद प्रमाण एक लाख योजनके अर्धछेद भए तिनकी सहनानी ऐसी $\frac{\text{उ}}{\text{छेछे}}$ इहां संख्यात अधिककी सहनानी ऊपरि ऐसे १ जाननी। इतने अर्धछेदनिविषैं अपनयन त्रैराशिक विधिकरि घटाए जो प्रमाण आवैं तितनी द्वीपसमुद्रनिकी संख्या जाननी अपनयन त्रैराशिक विधि कैसैं सो कहे है।

राजूका अर्धछेद इतने कहे $\frac{\text{उ}}{\text{छे छे छे ३}}$ तहां पल्यके अर्ध छेदनिका असंख्यातवां भाग प्रमाण तौ गुण्य जानना $\frac{\text{छे}}{\text{७}}$ बहुरि पल्यके अर्ध छेदनिका वर्ग तिगुणा सो गुणकार जानना छे छे ३ तहां जो इतने छे छे ३ गुणकारकौं देखि करि गुणकार प्रमाण राशि घटानेकौं गुण्यविषैं एक घटाइए तौ इतना $\frac{\text{१}}{\text{छे छे}}$ घटावनेके अर्थि गुण्यमैं कितना घटाइए ऐसैं त्रैराशिक करिए तहां प्रमाण राशि ऐसा छे छे ३ फलराशि १ इच्छा राशि ऐसा १ छे छे फल करि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीजिए तहां भाज्य राशि अर भागहार राशि दोऊनिविषैं पल्य अर्ध छेदनिका वर्ग ऐसा छे छे तिनकौं समान देखि भागहारविषैं उपर्या तिनका

अंक ताका भाज्यविषैं असंख्यात उबरे तीह करि साधिक एककों भाग दीजिए। इतनां गुण्यविषैं घट्या। ऐसैं करि अपनां साधिक एकका तीसरा भाग करि हीन पल्यका अर्ध छेदनिका असंख्यातवां भाग प्रमाण गुण्यको पल्यका अर्ध छेदनिका वर्ग अर तीन करि गुणें जो प्रमाण होइ इतने सर्व द्वीपसमुद्र हैं तिनकी सहनानि ऐसे छे छे छे ३ इहां अधिक तृतीय भाग घटावनेकी सहनानी ऐसी ३ जाननी। (इनविषैं आधे द्वीप आधे समुद्र जानने ?) ऐसैं द्वीप समुद्रनिकी संख्या कहि अब जाका अधिकार है ताकों कथनविषैं जोडे है। जंबू-द्वीप लाख योजनप्रमाण तासौं लाखयोजन रहे। तहां लवणसमुद्रका अभ्यंतर पटलतैं ड्योढलाख योजन परैं लवण समुद्रविषैं जाइ अर्ध पडे है। ऐसैं दो बहुरि ताका आधा लाख योजन भए लवण समुद्रका अभ्यंतर तटतैं पचास हजार योजन परैं जाइ अर्धच्छेद पडे है ऐसैं दोइ अर्धछेद जाननें। बहुरि तहां एक जंबूद्वीपकूं देहु।

भावार्थ—दोय अर्ध छेदनिविषैं एक अर्धच्छेद तो लवण समुद्रका गिनना। अर एक अर्धविषैं पचास हजार योजन जंबूद्वीपके मिलाएं लाख योजन होई सो इस अर्धछेदकों जंबूद्वीपहीका गिननां ऐसे ए अर्धच्छेद कहे। बहुरि इन अर्धछेदनिविषैं आदिके जंबू द्वीपादी पांच द्वीपसमुद्र संबंधी पांच अर्धछेद अर मेरुशलाका कहिए राजूकों आधा करते प्रथम अर्धछेद कह्या सो ऐसे ए छह अर्धच्छेद इहां अधिकार रूप ज्योतिषी बिंबनिका प्रमाण ल्यावनेंविषैं उपयोगी कार्य कारी नाहीं जातैं तीन द्वीप समुद्रनिके बिंबका प्रमाण जुदा ग्रहण करेंगे तातैं पांच अर्धच्छेद तो ए कार्यकारी नाहीं अर मेरुशलाका रूप प्रथम अर्धच्छेद विषैं कोई द्वीप समुद्र आया नाहीं तातैं सो कार्यकारी नाही ऐसे छह अर्धछेद आगैं घटावेंगे ॥ ३५८ ॥ कहां सो कहै है—

तियहीणसेढिछेदणमेत्तो रज्जुच्छिदी हवे गच्छो ॥
जंबूदीवच्छिदिणा छरूपजुत्तेण परिहीणो ॥ ३५९ ॥

त्रिकहीनश्रेणिछेदनमात्रः रज्जुच्छेदः भवेत् गच्छः ॥
जंबूद्वीपछेदेन षड्रूपयुक्तेन परिहीनः ॥ ३५९ ॥

अर्थ—तीन घाटि जगच्छ्रेणीका अर्ध प्रमाण एक राजूके अर्द्धच्छेद हैं। तिनमें जंबूद्वीप लाख योजन प्रमाण ताके अर्धच्छेद छह अर्धछेदनिकरि सयुक्त घटाएं ज्योतिषी बिंबनिकी संख्या ल्यावनेविषैं गच्छका प्रमाण हो है। तहां जगच्छ्रेणी अर्धच्छेद इतने हैं छे छे छे ३ / ७ इहां पल्यके अर्धच्छेदनिकी सहनानी ऐसी छे अर नीचे असंख्यातकी सहनानी ऐसी ७ ताका भागहार जानना।

बहुरि आगैं पल्यके अर्धच्छेदनिका वर्गका गुणकी सहनानी ऐसी छे छे छे ३ ताका गुणकार जानना। बहुरि इनमें तीन अर्धच्छेद घटाएं राजूके अर्धच्छेद होहि ३ जातैं जगच्छेणीकै सातवें भाग राजू हैं। सो ३ सातके तीन अर्धच्छेद होहि ताकी सहनानी ऐसी छे छे छे ३ / ७ — इहां ऊपरि घटावनेकी सहनानी ऐसी ३ जाननी बहुरि इन अर्धच्छेदनिका प्रमाणविषैं जंबूद्वीपकै अभ्यतर पचास हजार योजन अर बाह्य पचास हजार योजन मिलि एक लाख योजन प्रमाण जंबूद्वीप संबंधी अर्धछेद कह्या था सो इन लाख योजननिके अर्धच्छेद घटाइए। तहां एक लाखके अर्धच्छेद तिनमें छह करिए तब सत्रह १७ बार भएं एक योजन उवरैं। बहुरि एक योजनके अंगुल सात लाख अडसठि हजार तिनके अर्ध छेद करिए तब उगणीसवार भएं एक अंगुल उवरैं। बहुरि राजूका अर्धच्छेद कीए प्रथम अर्धच्छेद मेरुके मध्य पड्या सो ऐसैं सार्इ उगणीस एक अर्धच्छेद मिलि संख्यात अर्धच्छेद भए। बहुरि एक अंगुल उवर्या था सो वह सूच्यंगुल है। सो

सूच्यंगुलके अर्धच्छेद इतने छे । इहां पल्यके अर्धच्छेदनिका वर्ग प्रमाण सूच्यंगुलके अर्धच्छेद जानने । इनकौं मिलाएं संख्यात अधिक सूच्यंगुलके अर्धच्छेद प्रमाण एक लाख योजनके अर्धच्छेद भए । तिनकी सहनानी ऐसी छे छे । इहां संख्यात अधिककी सहनानी उपरि ऐसी ! जाननी । इतने अर्धच्छेद राजुके अर्धच्छेदनिविषैं अपनयन त्रैराशिक विधि करि घटाइएं जो प्रमाण आवै तितनी द्वीप समुद्रनीकी संख्या जाननी । अपनयन त्रैराशिक विधि कैसैं ? सो कहे हैं ।—

राजुके अर्धछेद इतने कहे ५ छे छे छे ३ तहां पल्यके अर्धछेदनिका असंख्यातवां भाग प्रमाण तौ गुण्य जानना छे । बहुरि पल्यके अर्धच्छेदनिका वर्ग तिगुणां गुणकार जानना छे छे ३ । इहां जो इतने छे छे ३ गुणकारकौं देखि करि गुणाकार प्रमाण राशि घटावनैंकौं गुण्य-विषैं एक घटाइए तौ इतना घटावनेंके अर्थि गुण्यमेंसौं कितना घटाइए ऐसैं त्रैराशिक करिए । तहां प्रमाण राशि ऐसा छे छे ३ फलराशि एक १ इच्छा राशि ऐसा छे छे । फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीजिये, तहां भाज्य राशि अर भागहार राशि दोऊनिविषैं पल्यका अर्ध छेदनिका वर्ग ऐसा छे छे । तिनकौं समान देखि भागहारविषैं उवर्या तीनका अंक ताका भाज्यविषैं संख्यात उवरै तीहकरि साधिक एककौं भाग दीजिये, इतना गुणविषैं घटाया । ऐसैं करि साधिक एकका तीसरा भाग करि हीन पल्यका अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भाग प्रमाण गुण्यकौं पल्यका अर्धच्छेदनिका वर्ग अर तिनकरि गुणें जो प्रमाण होइ तामें तीन घटाइए । इतने सर्व द्वीप समुद्र हैं तिनकी सहनानी ऐसी छे छे छे ३ । ३ । इहां साधिक तृतीय भाग घटावनें की सहनानी ऐसी जाननी । इनविषैं आधे द्वीप आधे समुद्र जाननें । ऐसैं द्वीपसमुद्रनिकी संख्या कहि । अब जाका अधिकार है ताकौं कथनविषैं जोड़ैं हैं । जंबूद्वीप लाख योजन प्रमाण ताके अर्धच्छेद तितने

छह अर्धच्छेद और मिलाइए, इनकों जोडि जो प्रमाण होइ तितनें अर्धच्छेद राजूके अर्धच्छेदनिमैंस्यौं घटाएं जो प्रमाण होइ तितनां सर्व द्वीप समुद्रसम्बन्धी चंद्रसूर्यादिकनिके प्रमाणल्यावनेंकों गच्छका प्रमाण जाननां । भावार्थ—यहु पूर्वे द्वीपसमुद्रनिकी संख्या कही तामें छह घटाएं इहां गच्छका प्रमाण होहै ॥ ३५९ ॥

आगें तिन ज्योतिषी बिंबनिकी संख्या ल्यावनेविषैं जो गच्छ कह्या ताकी आदि कहै हैं—

> पुक्खरसिंधुमयधणं चउघणगुणसयछहत्तरी पभओ ॥
> चउगुणपचओ रिणमवि अडकदिमुहमुवरि दुगुणकमं ।३६०।
> पुष्करसिंधुमयधनं चतुर्घनगुणशतषट्सप्ततिः प्रभवः ॥
> चतुर्गुणप्रचयः ऋणमपि अष्टकृतिमुखमुपरि द्विगुणक्रमं ॥

अर्थ—स्थानिकनिका जो प्रमाण सो गच्छ कहिए वा पद कहिए। बहुरि गच्छविर्षे जो पहला स्थानविर्षे प्रमाण सो आदि कहिये वा प्रभव कहिये वा मुख कहिये । बहुरि स्थानस्थानप्रति जितनां जितनां बधै सो प्रचय कहिये । बहुरि सर्व स्थानका संबंधी वृद्धिका प्रमाण बिना जो आदि ताकौं जोडैं जो प्रमाण होइ सो आदि धन कहिये । बहुरि सर्व स्थानका संबंधी वृद्धिकों जोडैं जो प्रमाण होइ सो उत्तर धन कहिये । सो इहां पुष्कर नामा समुद्रका आदि धन अर उत्तर धन मिलाएं ल्याकिा धन चौसठि तीह करि गुण्या हुवा एकसौ छिहत्तरि प्रमाण उभय धन हो है सो इहां प्रभव जाननां । बहुरि एक एक द्वीप वा समुद्रप्रति चौगुणा चौगुणा बधती धन है सो प्रचय जाननां । बहुरि ऋणविर्षे आठकी कृति चौसठि तीह प्रमाण तो मुख जाननां । ऐसे धनराशि ऋण राशिकों जानि धनराशिविर्षे ऋणराशिकों घटाए स्थानस्थानविर्षे प्रमाण जाननां । तहां पुष्कर समुद्रका आदि धन उत्तर धन कैसें ल्यावनां सो कहिए हैं—

आदितैं आदि दूणादूणा क्रमतैं कहे ये तातैं पुष्करार्ध द्वीपका आदि वलयविषैं एक सौ चवालीस थे तिनतैं दूणे पुष्कर समुद्रका आदि वलयविषैं हैं। १४४।२। सो इहां मुख जानना। बहुरि "पदहतमुखमादिधनं" इस सूत्र करि गच्छकरिगुण्यां हुवा मुखका प्रमाण सो आदि धन है। सो इहां बत्तीस वलय हैं। तातैं गच्छका प्रमाण बत्तीस तिहकरि मुखकौं गुणैं जो मुखविषैं दोयका गुणकार था ताकौं बत्तीस करि गुणि अर एकसौ चवालीसके आगैं चौसठीका गुणकार स्थापिए १४४।६४। इतना तौ आदिधन जानना बहुरि "व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणोगच्छउत्तरधनं" इस सूत्रकरि एक घाटि गच्छका आधा करि चयको गुणि तीहकरि गच्छकौं गुणैं उत्तर धन हो है। सो इहां एक घाटि गच्छ इकतीस ३१ ताका आधा $\frac{31}{2}$ करि चयका प्रमाण एक एक वलय विषैं च्यारि च्यारि बधती है, तातैं च्यारि च्यारि करि गुणिए ३१।४ बहुरि इनकौं गच्छ बतीस करि गुणिए ३१।४।३२ बहुरि भागहारका दूवा करि गुणकारका चौका अपवर्तन किए दोय होय तीहकरि बत्तीसका गुणकार गुणैं चौसठि होइ। ऐसैं इकतीसकौं चौसठि गुणां करिए ३१।६४ इतना उत्तरधन हुवा। बहुरि इस उत्तर धनविषैं चौसठिका ऋण मिलावना सो उत्तर धनविषैं चौसठिका गुणकार जानि गुण्यविषैं एक मिलाया तब बत्तीसकौं चौसठि गुणां करिए। इतनां उत्तर धन भया ३२।६४

इहां ऋणका मिलावना बहुरि याहीको घटावनां सो सुगम गणित आवनेके अर्थि करिए हैं बहुरि आदिधन अर उत्तर धनविषैं गुण्य बत्तीस इनको, मिलाइ एक सौ छिहत्तरि गुण्य किया अर चौसठि गुणकार किया। ऐसे चौसठि गुणां एक सौ छिहत्तरि १७६।६४ प्रमाण पुष्कर समुद्रका उभय धन सो ज्योतिर्बिंबनिका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि जो गच्छ कह्या था ताका समस्त कहिए आदि जानना। बहुरि यातैं चौगुणां बाह-

णीवर द्वीपविषै धन जानना। कैसे सो कहिए है। पूर्व आदितै दूणां इहां आदि वलय विषै है सो युत्र १४४।२।२। जानना। बहुरि "पद-हतमुखमादिधनं" इसमूत्रकरि याकों इहां वलय चौसठि है तातैं गच्छका प्रमाण चौसठि तीहकरि गुणिए। १४४। २। २। ६४। बहुरि— "व्येक पदार्धघ्नचयगुणोगच्छः उत्तरधनं" इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ प्रमाण तरेसठि ६३ ताका आधा $\frac{६३}{२}$ कों वलय वलय प्रति बधती प्रमाणरूप चय च्यारि करि गुणिए $\frac{६३}{२}$। ४ बहुरि याकों गच्छ चौसठि करि गुणिए $\frac{६३}{२}$।४। ६४ बहुरि दोयके भागहार करि गुणिए $\frac{६३}{२}$ । ४ बहुरि याकों गछ चौसठि करि गुणिए $\frac{६३}{२}$ ४। ६४ बहुरि दोय के भागहार करि च्यारिका अपवर्तनकरि दूवाकों चौसठिके आगें स्थापिए ६४।६४ यामैं पूर्वोक्त दूणा ऋण मिलाइए सो दुगुणां चौसठि मिलाइए ६४।२ सो दुगुणा चौसठिका गुणाकार समान देखि गुण्यविषै एक मिलाइये ६४। ६४। २। बहुरि सर्वत्र चौसठि गुणां एकसौ छिहत्तरि करनां तातैं जिह भाति बत्तीस रहैं तैसैं समच्छेद करि चौसठिकी जायगा तौ बत्तीस करिए अर दोय आगैं धरिए ३२। २। ६४। बहुरि दोय दूवानिकौं परस्पर गुणि च्यारिका अंक लिखिए ३२। ६४। ४ ऐसे उत्तर धन होइ। बहुरि आदि धन १४४। २। ४। २। अर उत्तर धन दोऊनिकौं मिलाएं चौसठि गुणा एक सौ छहत्तरिका चौगुणा उभयधन होइ ऐसैं ही एक एक द्वीप वा समुद्रविषैं चौगुणा चौगुणा तौ धन जानना। अर जो उत्तर धनविषै ऋण मिश्रय था सो पुष्करवर समुद्रविषै तौ ऋण आठकी कृति जो चौसठि तिह प्रमाण जानना। अर ऊपरि दूणा परि दूणा जानना। ऐसे धनविषै आदि तौ चौसठि गुणा

एकसौ छिहत्तरि १७६ । ६४ बहुरि उत्तर गुणकार च्यारि गच्छ पूर्वोक्त प्रमाण ऐसा छे छे छे ३ इनको स्याइ ॥ ३६० ॥

इनका संकलनरूप धनको ल्यावता थका सर्व ज्योतिषी बिंबनिके प्रमाण ल्यावनेका विधान कहै हैं—

> आणिय गुणसंकलिदं किंचूणं पंचठाणसंठवियं ॥
> चंदादिगुण मिलिदे जोइसविंबाणि सव्वाणि ॥ ३६१ ॥
> आनाय्य गुणसंकलितं किंचिदूनं पंचस्थानसंस्थापितम् ॥
> चंद्रादिगुणं मिलिते ज्योतिष्कविंबानि सर्वाणि ॥ ३६१ ॥

अर्थ—" पदमेत्ते गुणयारे अण्णोण्णं गुणियरूव परिहीणे । रूऊण गुणेणहिय मुहेण गुणयम्मि गुणगणियं । " इस करण सूत्रकरि गच्छ प्रमाण गुणकारकों परस्पर गुणि तामें एक घटाइ ताकों एक घाटि गुण कारका भाग देइ मुखकरि गुणें गुणकाररूप सर्व गच्छके जोडका प्रमाण हो है सो । यहां गच्छका प्रमाण छे छे छे ३ सो इतनी जायगा गुणकारका प्रमाण च्यारि तातैं च्यारि अंक माडि परस्पर गुणिए । तहां इस गच्छविषै ऊपरिका राशि ᐨ जगछ्रेणीका अर्ध छेद प्रमाण ऐसा छे छे छे ३ बहुरि च्यारिकों दोयका स्मैदन करिए तब दोय जायगा दोय दोय होई २ । २ तहां ' तम्मेत्तदुगुणे रासी " इस करण सूत्रके न्याय करि तिस जगच्छ्रेणीका अर्धच्छेद राशि छे छे छे ३ प्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणें जगच्छ्रेणी होइ । बहुरि दोय दोय जायगा दोय दोय थे तातैं दूसरीवार भी तैसेंही ऊपरिका राशि ᐨ छे छे ३ प्रमाण दूवानिकों परस्पर गुणें जगछ्रेणी होइ और इन दोऊ जगछ्रेणीनिकों परस्परगुणें जगत्प्रतर होइ । ऐसे ऊपरिका राशिप्रमाण गुणकारकों परस्परगुणें तौ जगप्रतर भया । बहुरि नीचे नगणरूप राशि गुणकका साधिक तृतीयभाग मात्र था $\frac{१}{३}$ तिस विषै सतरइतो तासके अर्धच्छेद थे तिन प्रमाण दोय-

वार दूवानिको परस्पर गुणें एक लक्षका वर्ग भया। १ ल १ ल। बहुरि अंगुलनिके अर्धच्छेद उगणीस ये तिन प्रमाण दोयवार दूवानिको परस्पर गुणें सात लाख अडसठि हजारका वर्ग भया ७६८००० । ७६८००० । बहुरि सूच्यंगुलका अर्धच्छेद प्रमाण दोयवार दूवानिको परस्परगुणें प्रतरांगुल भया। बहुरि छह अर्धच्छेद इहां उपयोगी न कहि घटाए॥ थे तिन प्रमाण दोयवार दूवानिकौं परस्पर गुणें चौसठिका वर्ग होइ। बहुरि जगच्छ्रेणीका अर्धछेदमेंस्यौं तीन घटाए राजूके अर्द्धच्छेद होइ ऐसा कहि घटाए थे। तिन प्रमाण दोयवार दूवानिकौं माण्डि परस्पर गुणें सातका वर्ग भया। ऐसैं ए सर्व अर्द्ध छेद घटाए ये तिन प्रमाण दोयवार दोयका अंक मांडि परस्पर गुणें जो जो प्रमाणभया ताका भाग हार जानना। जातैं-" विरलिज्जमाणरासिं दिण्णस्सद्धच्छिदी हि दिण्णाणि। तेसिं अण्णोण्णहदी हारो उप्पण्णरासिस्स" ऐसा करणसूत्र पूर्वै कहि आए हैं। ऐसैं गच्छप्रमाण गुणकारका परस्परगुणनां भया।

बहुरि यामैं एक घटाइए ताकी सहनानी ऐसी बहुरि याकौं एक घाटि गुणकार तीन ताका भाग दीजिए। बहुरि मुखका प्रमाण चौसठि गुणां एकसौ छिहत्तरि तीहकरि गुणिए तब धनराशिका जोडदिए अयस्त तरकौं चौसठिगुणां एकसौ छिहत्तरिकरि गुणिए अर ताकौं प्रतरांगुलकौ सातलाख अडसठि हजारका वर्ग अर लाखका वर्ग अर चौसठिका वर्ग अर सातका वर्ग अर तीनकरि गुणि ताका भाग दीजिए तामैं एक घटाइए इतना संकलित धन=१७६।६४ हो है।

इहां जगत्प्रतरकी सहनानी ऐसी=प्रतरांगुल की ऐसी ४ ४। ७६८०००। ७६८०००। १ ल। १ ल। ६४। ६४। ७। ७। ३। जानना। बहुरि ऋणराशिका संकलित धनल्याइए तहां गुणकारका प्रमाण दोय है तातैं पूर्वोक्त गच्छका जितना प्रमाण तितनी दूवा मांडि परस्पर गुणिए। तहां

उपरितन राशि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणें जगच्छ्रेणी होइ। बहुरि नीचै ऋणरूप राशि तिहविषैं सतरह आदि प्रमाण दूवा माण्डि परस्पर गुणें एकलक्ष अर सात लाख अडसठि हजार अर चौसठि अर सात होइ इनका भाग दीजिए। बहुरि इनमें एक घटाइए, बहुरि मुख चौसठि करि गुणिए, बहुरि एक घाटि गुणकार एक ताका भाग दीजिये ऐसैं करतैं ऋण राशिका संकलित धन चौसठि गुणा जगच्छ्रेणीकौ सूच्यंगुलकौ सात लाख अडसठि हजार अर एक लाख अर सात अर चौसठि अर एक करि गुणि ताका भाग दीजिए। तामैं एक घटाइए इतना भया ६।४२।७६८०००।१ ल।६४।७१ इहां जगच्छ्रेणीकी सहनानी ऐसी-सूच्यंगुलकी ऐसी ऐसी जाननी। अब तिस धन राशिविषैं जो एक सौ छिहत्तरिकर गुणकार था अर नीचै चौसठिका भागहार था तिन दोऊनिकौ सोलाकरि अपवर्तन किएं एकसौ छिहत्तरिकी जायगा ग्यारह हुवा, चौसठिकी जायगा चारि हुवा। बहुरि गुणकारके चौसठिकौ भागहारके चौसठिकरि अपवर्तन किए दोऊ जायगा अभाव भया। बहुरि दोय जायगा सात लाख अडसठि हजार अर दोय जायगा लाख तिनकी सोलह बिंदी स्थापिए। बहुरि अंगुलनिका दोय जायगा सातसै अडसठिका अंक रह्या तिनकौ तिनकरि संभेदनकरि तिनकी जायगा दोयसै छप्पन लिखिए आगैं तिनका अंक लिखिए।

बहुरि दोय जायगा दोयसै छप्पन भए तिनकौ परस्पर गुणें पणट्ठी होई। बहुरि दोय जायगा तिनका अंक भए अर एक जायगा तीनका अंक आगैं था इनकौ परस्पर गुणें सताईस होइ बहुरि सताईसकौ सातका वर्ग गुणचास करि गुणें तेरहसै तेइस होइ इनकौ जो चौसठिकी जायगा च्यारि भए ये तिनकरि गुणें बावनसैं बाणवै होइ। ऐसैं करि जगत्प्रतरकौ ग्यारहका गुणकार अर तरागुलकौ पणट्ठी अर पाच हजार दोयसै बाणवैके आगैं सोलह बिंदी ताका भागहार दिएं धन राशिका =११ तिनकरि गुणें जो प्रमाण होइ गुण संकलित धन हो है

४।६५=५२९२००००००००००००००० बहुरि जंबूद्वीपतैं लगाय पुष्करार्ध पर्यंत " दोद्दोवग्ग " इत्यादि चंद्रादिकका प्रमाण कह्या २।४।१२।४२।७२ तिनकौं मिलाएं एकसौ बत्तीस भए। बहुरि मानुषोत्तर पर्वत पर्यंत परैं पुष्करार्ध द्वीपविषैं चंद्रमानिका प्रमाण ल्यावनकौं कहै हैं।

पदमेगेण विहीणं दुभाजिदं उत्तरेण संगुणिदं ॥
पभवजुदं पदगुणिदं पदगणिदं तं वियाणाहि ॥ १ ॥

इसकरण सूत्रकरि इहां वलय आठ है। तातैं गच्छका प्रमाण आठ तामैं एक घटाइए ७ ताका आधाकारि $\frac{७}{२}$ उत्तर जो वलय वलय प्रति बधतीका प्रमाण च्यारि तिहकरि गुणिए $\frac{७}{२}$ । ४ अपवर्तन करिए तब चौदह भए १४ इनविषैं प्रभव जो प्रथम वलयविषैं प्रमाण रूप मुख एक सौ चवालीस जोडिए १५८। बहुरि इनकौं गच्छ आठकरि गुणिए तब बारहसौ चौसठि भए इनविषै एकसौ बत्तीस जंबूद्वीप आदिकके मिलाएं तेरहसै छिनवै होइ सो इनकौं जो पूर्वं ऋण संकलित घन भया था तिनमैं घटाइए हैं। जातैं-'ऋणस्य ऋणं राशेद्धनं' इसवचनकरि ऋणमैंस्यौं घटावनां अर राशिमैं मिलावनां इन दोऊनिका एक अर्थ है। तहां ऋण संकलित घनसहित तेरहसैं छिनवैका समच्छेद करिए तब ऐसा होइ— १३९६ सू २।७६८०००। १ ल ।६४। ७ । १ । सू २। ७६८०००।·१ ल। ६४। ७ । १ सो यहु गुणकार भागहारादिकका अपवर्तनादिक किएं भाज्य राशिकौं परस्पर गुणें संख्यात सूच्यंगुलप्रमाण भया। सो इनकौं पूर्वोक्त ऋण संकलित घनका भाज्यविषैं घटाइए तब ऐसा भया। २। ७६८००० । १ ल। ७। ६४ । १ इहां संख्यात सूच्यंगुलकी सहनानी ऐसी २ जाननी। अर आगैं घटा-

बनेकी सहनानी ऐसी—जाननी । ऐसे ऋण संकलित धनविषैं एक जगच्छ्रेणी । ताका सहित ऋण सहित जो धन संकलित धन पूर्वं कह्या तीहस्यों समान छेद करिए तब ऐसा–सू २ । ६४ । ७६८०७० । १ ळ । ७ । ६४ । ३ । ४ । ७६ । ८००० । ७६८००० । १ ळ । १ ऋ ७ । ७ । ६४ । ६४ । ३ । भया । इसविषैं सूच्यंगुल विना और सर्व गुणकारनिकों संख्यातरूप मानि इस प्रमाणकों संख्यात सूच्यंगुल गुणित जगच्छ्रेणी प्रमाण ऋण राशिभया भया । ताकी सहनानी ऐसी—२ इनकों पूर्वोक्त धन . संकलित ऐसा=४।६५=५२९२।१६ इहा सोलह विंदीनिकी सहनानी ऐसी १६ जाननी। सो इहा जगत्प्रतर विषैं श्रेणीका गुणाकार है तातैं दोयबार श्रेणी है । तहाँ जगच्छ्रेणीकों ऋण राशिकी जगच्छ्रेणीकेसमान देखि तहादी दूसरी गुणकाररूप जगच्छ्रेणी विषैं घटाए किंचित न्यूनपणा आया ऐसे करि गुण संकलित धन कहिए गुणकार विषैं जोडका प्रमाण ताकों ल्यायैं किंचित् न्यून किए संख्यात सूच्यंगुल गुणित जगच्छ्रेणीकरि हीन जगत्प्रतर किंचित्न्यून ग्यारहगुणा ताकों प्रतरागुल पण्ट्ठी प्रमाणकों बावनसै बाणवै आगैं सोलह विंदीका गुणकार करि ताका भाग दीजिए इतनां प्रमाण भया ०–२ । ११ । इहा जगत्प्रतरके आगैं किंचिन् ४।६५=५२९२।१६

न्यूनकी सहनानी ऐसी ०–जाननी अर आगैं सख्यात सूच्यंगुलकी ऐसी २ सहनानी जाननी। अब इसप्रमाणकों पाच जायगा स्थापि एक जायगा एक करि गुणे चंद्रनिका प्रमाण होइ एक जायगा एक करि गुणें सूर्यनिका प्रमाण होई । एक जायगा अठ्यासी करि गुणें ग्रहनिका प्रमाण होइ । एक जायगा अट्ठाईस करि गुणें नक्षत्रनिका प्रमाण होई एक जायगा छयासठि हजार नवसै पिचहत्तरि कोडाकोडि करि गुणें तारानिका प्रमाण होइ इन सब निकों जोडें ।

=०–२ । ११ । १=०२ । ११ । ८८

४।६५=५२९२।१६।४।६५=५२९२।१६४।६५=५२९२।१६

=०२ । ११ । २८=०२ । ११ । ६६९७५ । १४

४ । ६५=५२९२ । १६ ॥ ४ । ६५=५२९२ । १६

जगत्प्रतरकौं सात तीन छह सात दोय पांच अंक अर दश बिंदी अर आगैं बारहसैं अठ्याणवै इनका गुणकार अर प्रतरांगुल पणट्ठी आगैं बावनसैं बाणवै सोलहै बिंदी इनका भागहार भया। सो इतने सर्व ज्योतिषी बिंब हैं। =७३६ ७२५००००००००००१२९८

४।६५=५२९२००००००००००००००००

बहुरि स्थान सदृश अपवर्तन कहिए हीन अधिक अंकनिकौं न गिणिकरि दाहकी विषै दाहकी सैंकडा विषै सैंकडा इत्यादि यथास्थान अपवर्तन करना तिस न्याय करि सात तीननैं आदिदै करि गुणकारकै वीस अंक अर पांच दोयनैं आदिदैकरि भागहारकै बीस अंकनिका अपवर्तनकरि दोय जायगा अभाव करना। ऐसा मनविषैं विचारि-"बेसदछप्पण्णंगुल" इत्यादि सूत्रकरि दोयसै छप्पन अंगुलका वर्ग जो पणट्ठी गुणित प्रतरांगुल ताका भाग जगत्प्रतरकौं दीजिए इतनैं ४। ६५। ज्योतिषी बिंब हैं। ऐसा आचार्यनैं कह्या। सोई असंख्यात द्वीप समुद्र संबंधी सर्व ज्योतिषी बिंबनिका प्रमाण जानना ॥ ३६१ ॥

आगैं एकचंद्रमाका परिवाररूप ग्रहनक्षत्र तारे तिनका प्रमाण कहै हैं-

अडसीदट्ठा बीसा ग्रहरिक्खा तार कोडकोडीणं ॥

छावहिसहस्साणि य णवसयपण्णत्तरिगि चंदे ॥ ३६२ ॥

अष्टाशीत्यष्टाविंशतिः ग्रहऋक्षयास्तारा: कोटीकोटीनां ॥

षट्षष्टि सहस्राणि च नवशतपंचसप्ततिरेकस्मिन् चंद्रे ॥

अर्थ-अठ्यासी अर अठ्ठाईस ग्रह अर नक्षत्र हैं। भावार्थ-ग्रह अठ्यासी हैं नक्षत्र अठ्यासी हैं। बहुरि तारे छयासट्ठि हजार नवसै

पिचहत्तरि कोडाकोडी हैं १६९७५००००००००००००० इतना एक चंद्रमाका परिवार है ॥ ३६२ ॥

आगें अठ्यासी ग्रहनिका नाम आठ गाथानि करि कहैं हैं—

कालविकालो लोहिदणामो कणयक्ख कणयसंठाणा ॥
अंतरदोतो कचयगदुंदुभिरत्तणिहरूवणिब्भासो ॥ ६६३ ॥
कालविकालो लोहितनामा कनकाख्यः कनकसंस्थानः ॥
अतरदस्ततः कचयवः दुंदुभिः रत्ननिभः रूपनिर्भासः ॥३६३

अर्थ—कालविकाल १ लोहित १ कनक १ कनकसंस्थान १ अतराद १ कचयव १ दुंदुभि १ रत्ननिभ १ रूपनिर्भास १ ॥३६३॥

णीलो णीलब्भासो अस्ससठ्ठाण कोस कंसादी ॥
वण्णा कसो सखादिमपरिमाणो य संखवण्णोवि ॥३६४॥
नीलो नीलाभासोऽश्वस्थानः कोशः कसादि ॥
वर्णः कंसः शंखादिपरिमाणः च शखवर्णोऽपि ॥ ३६४ ॥

अर्थ—नील १ नीलाभास १ अश्व १ अश्वस्थान १ कोश १ कंसवर्ण १ कंस १ शखपरिमाण १ शखवर्ण १ ॥ ३६४ ॥

तो उदय पंचवण्णा तिलो य तिलपुच्छ छाररासीओ ॥
तो धूम धूमकेदि गिसठाणक्खो कलेवरो वियडो ॥३६५॥
ततः उदयः पंचवर्णस्तिलश्च तिलपुच्छः क्षारराशिः ॥
ततो धूमो धूमकेतुः एक संस्थानः अक्षः कलेवरो विकटः॥

अर्थ—उदय १ पंचवर्ण १ तिल १ तिलपुच्छ १ क्षारराशि १ धूम १ धूमकेतु १ एक संस्थान १ अक्ष १ कलेवर १ विकट १ ॥ ३६५ ॥

इह भिण्णसंधि गंठी माणचउप्पाय विज्जुजिम्ह णमा ॥
तो सरिस णिलय कालय कालादी केउ अणयक्खा ॥३६६
इहा भिन्नसंधिः ग्रंथिः मानश्चतुष्पादो विद्युज्जिह्वो नमः ॥
ततः सदृशो निलयः कालश्च कालादि केतु रनयाख्यः ३६६

अर्थ—अभिन्नसंधि १ ग्रंथि १ मान १ चतुष्पाद १ विद्युज्जिह्व १ नम १ सदृश १ निलय १ काल १ कालकेतु १ अनय ॥ ३६६ ॥

सिंहाऊ विउल काला महकालो रुद्दणाम महरुद्दा ॥
संताण संभवक्खा सव्वट्ठि दिसाय संतिवत्थूणो ॥ ३६७ ॥
सिंहायुर्विपुलः कालो महाकालो रुद्रनामा महारुद्रः ॥
संतानः संभवाख्यः सर्वार्थादिशः शांतिर्वस्तुनः ॥३६७॥

अर्थः—सिंह यु १ विपुल १ काल १ महाकाल १ रुद्र १ महारुद्र १ संतान १ संभव १ सर्वार्थी १ दिशा १ शांति १ वस्तुन १ ॥ ३६७ ॥

णिच्चल पलंभ णिम्मंत जोदिमंता सायंपहो होदि ॥
भासुर विरजात्तवोणिदुदुक्खो वीदसोमोय ॥३६८॥
निश्चलः पलंभो निर्मंत्रो ज्योतिष्मान् स्वयंप्रभो भवति ॥
भासुरो विरजस्तवो निदुःखो वीतशोकश्च ॥ ३६८ ॥

अर्थ—निश्चल १ प्रलंभ १ निर्मंत्र १ ज्योतिष्मान् १ स्वयंप्रभ १ भासुर १ विरज १ निदु ख १ वीतशोक १ ॥ ३६८ ॥

सीमंकर खेमभयंकर विजयादि चउ विमलतत्थाय ॥
विजयण्हु वियसो करिकट्ठि गिजडिअग्गिजाल जलकेदू ॥
सीमंकरः क्षेमभयंकरः विजयादि चत्वारः विमलस्तत्रश्च ॥
विजयिष्णुः विकसः करिकाष्ठ एकजटिरग्निज्वालः जलकेतुः ॥

अर्थः— सीमंकर १ क्षेमंकर १ अभयंकर १ विजय १ वैजयंत १ जयंत १ अपराजित १ विमल १ त्रस्त १ विजयिष्णु १ विकस १ करिकाष्ठ १ एकजटि १ अग्निज्वाल १ जलकेतु १ ॥ ३६९ ॥

केदू खीरसऽघस्सवणा राहू महग्गहा य भावगहो ॥
कुज सणि बुह सुक्क गुरू गहाण णामाणि अडसीदी ॥३७०॥
केतुः क्षीरसः अघ- स्रवणो राहुः महाग्रहश्च भावग्रहः ॥
कुजः शनिः बुधः शुक्रः गुरुः ग्रहाणां नामानि अष्टाशीतिः॥
॥ ३७० ॥

अर्थः—केतु १ क्षीरस १ अघ १ श्रवण १ राहु १ महाग्रह १ भावग्रह १ मंगल १ शनैश्चर १ बुध १ शुक्र १ बृहस्पति १ ऐसैं ग्रहनिकै अठ्यासी नाम हैं ॥ ३७० ॥

आगैं जंबूद्वीपविषैं भरतादिक्षेत्र वा कुलाचल पर्वत तिनकै तारानिका विभाग दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

णउदिसयभजिदतारा सगदुगुणसलासमब्भत्था ॥
भरहादिविदेहोत्ति य तारावस्सेयवस्सधरे ॥ ३७१ ॥
नवतिशतभक्ततारा स्वकद्विगुणद्विगुणशलाममभ्यस्ताः ॥
भरतादि विदेहांतं च ताराः वर्षे च वर्षधरे ॥ ३७१ ॥

अर्थः—दोय चंद्रमासंबंधी तारे एकलाख तेतीस हजार नवसै पचास कोडाकोडी जंबूद्वीपविषैं पाईए है । १३३९ । ५ । १५ इनकौं एकसौ निवैका भाग दीजिए जो प्रमाण होइ ताकौं भरतादिक्षेत्र वा कुलाचलनिकी एकतैं दूणी दूणी शलाका विदेह पर्यंत हैं परैं आधी आधी । भरत क्षेत्रकी एक शलाका हिमवत पर्वत की दोय शलाका ऐसैं दूणी दूणी किएं विदेहकी चौसठि शलाका तातैं परैं नीलादि विषैं आधी जाननी । १ । २ । ४ । ८ । १६ । ३२ । ६४ । ३२ । १६ ।

८ । ४ । २ । १ । १ । तिनकरि गुणें भरतादिक्षेत्र वा हिमवत आदि कुलाचलनिविषैं तारानिका प्रमाण हो है ॥ ३७१ ॥

आगैं पाया हुवा अंकनिकों कहैं हैं—

पंचदुत्तरसत्तसया कोडाकोडी य भरहताराओ ॥
दुगुणाद्दु विदेहोत्ति य तेण परं दलिददलिदकमा ॥ ३७२ ॥
पंचोत्तरसप्तशतकोटिकोट्यः च भरतगारा: ॥
द्विगुणा हि विदेहांतं च तेन परं दलित दलितक्रमः ॥३७२॥

अर्थः—सातसैं पांच कोडाकोडी भरतविषैं तारे हैं । तातैं दूणे दूणे विदेह पर्यंत हैं तहां पीछे आधे आधे क्रमतै हैं सोई कहिए हैं । भरतक्षेत्रविषैं सातसै पांच कोडाकोडी ७०५ । १४ हिमवत पर्वतविषैं चौदहसै दश कोडाकोडी १४१ । १५ हैमवत क्षेत्रविषैं अट्ठाईससै वीस कोडाकोडी २८२ । २० । १५ महाहिमवत पर्वतविषैं छप्पनसै चालीस कोडाकोडी ५६ । ५१५ हरिक्षेत्रविषै ग्यारजार दोयसै असी कोडाकोडी ११२८ । १५ निषध पर्वतविषैं बाईस हजार पांचसै साठि कोडाकोडी २२५६ । १५ विदेह क्षेत्रविषैं पैंतालीस हजार एकसौवीस कोडाकोडी ४५१२१५ नील पर्वतविषैं बाईस हजार पांचसैं साठि कोडाकोडी २२५६ । १५ रम्यक क्षेत्रविषैं ग्यारह हजार दोयसै असी कोडाकोडी ११२८ । १५ रुक्मि पर्वतविषैं छप्पनसै चालीस कोडाकोडी ५६४ । १५ हैरण्यवत क्षेत्रविषैं अट्ठाईसै वीस कोडाकोडि २८२ । १५ शिखरी पर्वतविषैं चौदहसैं दश कोडाकोडी १४१।१५ ऐरावत क्षेत्रविषैं सातसै पांच कोडाकोडी ७०५ । १४ । तारे जानने ॥ ३७२ ॥

आगैं लवणादि पुष्करार्ध पर्यंत तिष्ठते चंद्रसूर्य तिनका अंतराल कहै हैं—

सगरविदलविहूणा लवणादी सग दिवायरद्धहिया ॥
सूरंतरं तु जगदी आसण्ण पहंतरं तु तस्सदलं ॥ ३७३ ॥
स्वकरविदलविहीनं लवणादेः स्वकदिवाकरार्धाधिकं ॥
सूर्यांतरं तु जगत्यासन्नपथांतरं तु तस्यदलम् ॥ ३७३ ॥

अर्थ—अपनां अपनां जहां जेते सूर्य हैं तहां तितनां सूर्यनिका प्रमाणतैं अर्ध प्रमाणकरि सूर्यके बिंबनिका प्रमाणकौं गुणिकरि जो प्रमाण होइ ताकौं लवणादिकका व्यासमैंस्यौं घटाइए जो प्रमाण रहै ताकौं स्वकीय सूर्यनिका प्रमाणतैं आधा प्रमाणका भाग दीजिए यों किए जेता प्रमाण आवै तितनां सूर्य सूर्यविषैं अंतराल जाननां। बहुरि जगती कहिए वेदी तिह थकी "आसन्नपथांतरं" कहिए निकटवर्ती सूर्य बिंबका अंतराल सो तिहस्यौं अर्ध प्रमाण जाननां। तहां उदाहरण—लवण समुद्रविषैं सूर्य च्यारि हैं ताका अर्ध प्रमाण दोय तीह करि सूर्य बिंबका प्रमाण अठतालीसका इकसठिवां भाग ताकौं गुणें छिनवैका इकसठिवां भाग होइ $\frac{९६}{६१}$ याकौं लवण समुद्रका व्यास दोय लाख योजन तामैं समच्छेद विधान करि घटाइए तब एक कोडि इकईस लाख निन्याणवै हजार नवसैच्यारिका इकसठिवां भाग प्रमाण होइ $\frac{१२१९९९०४}{६१}$

बहुरि एक तौ सूर्यविषैं अंतराल अर सूर्यतैं अभ्यंतर वेदिकाका अर द्वितीय सूर्यतैं बाह्य वेदिका मिलि करि एक अंतराल ऐसे दोय अंतराल विषैं इतनां $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ अंतराल होई तौ एक अंतराल विषैं केता अंतराल होइ ऐसैंकरि ताकौं अपने सूर्यनिका प्रमाण च्यारि तातैं आधा दोय ताका भागदीदें निन्याणवैं हजार नवसैं निन्याणवै योजन अर एक योजनका एकसौ बाईस भागविषैं छब्बीस भागताका दोयकरि अपवर्तन

किए तेरह इकसठिवां भाग प्रमाण सूर्य सूर्यविषैं अंतराल जाननां। बहुरि वेदीतैं निकट सूर्यबिंबका अंतराल तातैं आधा जाननां। तहां विषमकों कैसैं आधा करिए तातैं राशिमैंस्यों एक घटाइ ९९९९८ ताका आधा करिए तब गुणचास हजार नवसै निन्याणवै योजन भए। बहुरि अवशेष एककौं आधा स्थापि $\frac{१}{२}$ पूर्वोक्त अवशेष तेरह इकसठिवां भाग थे ते राशिके अंश थे तातैं तिनका भी आधा स्थापिए $\frac{१३}{६१।२}$ इन दोऊनिकौं समच्छेद विधान करि मिलाइ दोइकरि अपवर्तन करिए तब सैंतीसका इकसठिवां भाग $\frac{३७}{६१}$ प्रमाण अवशेष आया। ऐसैं ही घातकी खण्ड कालोदक समुद्र पुष्करार्ध द्वीप तिनविषैं तिष्ठते सूर्य सूर्यनिके बीचि अंतराल अर वेदी सूर्यनिविषैं अंतराल ल्यावनां।

भावार्थ—लवण समुद्रादिविषैं च्यारि आदि सूर्य हैं तिनविषैं एक एक परिधिविषैं दोय दोय सूर्य जाननैं तहां लवण समुद्रविषैं अभ्यंतर वेदीतैं गुणचासहजार नवसै निन्याणवै योजन अर सैंतीस इकसठिवां भाग परैं जाइ परिधि है तहां सूर्यका विमान है। सो अठतालीस इकसठिवां भाग प्रमाण है। बहुरि तातैं परैं निन्याणवै हजार नवसै निन्याणवै योजन अर तेरह इकसठिवां भाग परैं जाइ परिधि है तहां सूर्यविमान है सो अठतालीस इकसठिवां भाग प्रमाण हैं। बहुरि तातैं परैं गुणचास हजार नवसै निन्याणवै योजन अर सैंतीस इकसठिवां भाग परैं जाइ लवण समुद्रकी बाह्यवेदी है। ऐसैं इनकौं मिलाएं दोय लाख योजन प्रमाण लवण समुद्रका व्यास होइ। याही प्रकार घातुकी खण्डविषैं च्यारि लाख योजन व्यास है। तामैं छह जायगा एक एक परिधिविषैं दोय दोय सूर्य हैं। तिनि छहौं परिधिनिके बीचि सूर्य सूर्यविषैं पांच अंतराल है। तिनका प्रमाण ल्यावनां। बहुरि तिस प्रमाणतैं आधा आधा

अभ्यंतर वेदी सूर्यविषैं अर बाह्य वेदी सूर्यविषैं अंतराल है सो ल्यावना । याही प्रकार कालोदक समुद्र पुष्करार्ध द्वीपविषैं भी अंतरालका प्रमाण ल्यावनां ॥ ३७३ ॥

अब चार क्षेत्र कहे हैं—

दो दो चद्दरवि पडि एक्केक्कं होदि चारखेत्तं तु ॥
पंचसयं दससहिय रविबिंबहियं च चारमही ॥ ३७४ ॥
द्वौ द्वौ चंद्ररवीप्रति एकैकं भवति चारक्षेत्रं तु ॥
पंचशत दशसहितं रविबिंबाधिकम् च चारमही ॥ ३७४ ॥

अर्थ—दोय दोय चद्रमा वा सूर्यप्रति एक चार क्षेत्र सो कितनां है ? पांचसै दश योजन अर सूर्य बिंबका प्रमाणकरि अधिक है । भावार्थ—चंद्रमा वा सूर्यका गमन करनेंका जु क्षेत्र गली सो चार क्षेत्र कहिए ताका व्यास पांचसै दश योजन अर योजनका अठतालीस इकसठिवा भाग प्रमाण है ५१० । $\frac{४८}{६१}$ तिस च्यार क्षेत्रविषैं गलीनिका प्रमाण आगें कहेंगे तहां जिस गलीविषैं एकचंद्रमाका सूर्य गमन करै तिसही गलीविषैं दूसरा गमन करै है। तातैं दोय दोय चद्रमा व सूर्यप्रति एक एक चार क्षेत्र है ॥ ३७४ ॥

आगैं तिन चंद्रमासूर्यनिका जो चार क्षेत्र ताका विभागका नियम कहे हैं—

जंबुरविंदु दीवे चरंति सीदिं सदं च अवसेसं ॥
लवणे चरंति सेसा सगखेत्तेन य चरंति ॥ ३७५ ॥
जम्बूरविंदवः द्वीपे चरंति अशीतिं शतं च अवशेषम् ॥
लवणे चरंति शेषाः स्वकस्वकक्षेत्रे एव च चरंति ॥३७५॥

अर्थ—जंबू द्वीप संबंधी सूर्य वा चंद्रमा तौ एकसौ असी योजनतौ द्वीपविषै विचरै हैं। अव शेष लवण समुद्रविषै विचरै हैं। बहुरि अवशेष सूर्यचंद्रमा अपनां क्षेत्रहीविषै विचरै हैं। भावार्थ— चार क्षेत्रका जो व्यास कह्या तामैं जंबूद्वीपसंबंधी चंद्रमासूर्यनिका एक सौ असी १८० योजन तौ जंबूद्वीपविषै अर तीनसौ तीस योजन अर अठतालीस भाग लवण समुद्रविषै चार क्षेत्रका व्यास जाननां। अवशेष पुष्करार्धपर्यंत द्वीप वा समुद्रसंबंधी चंद्रसूर्यनिका चार क्षेत्र अपनां अपनां द्वीपवासमुद्रही विषै जाननां ॥ ३७५ ॥

आगैं सूर्यचंद्रनिकै वीथी जो गली तिनका प्रमाण कहै हैं—

पडिदिवसमेक्कवीथिं चंदाइच्चा चरंति हु कमेण ॥
चदस्स य पण्णरसा इणस्स चउसीदिसयवीथी ॥ ३७६ ॥
प्रतिदिवसं एकवीथिं चंद्रादित्याः चरंति हि क्रमेण ॥
चंद्रस्य च पंचदश इनस्य चतुरशीतिशतं वीथ्यः ॥३७६॥

अर्थ—दोय दोय मिलिकरि एक एक दिन प्रति एक एक वीथीप्रति चंद्रमा वा सूर्य विचरै हैं क्रमकरि। तहां चंद्रमाकी पंद्रह वीथी बहुरि इन कहिए सूर्य ताकी एक सो चौरासी गली है, भावार्थ-जो चार क्षेत्र कह्या तिसविषै चंद्रमाकी तौ पंद्रहगली हैं, सूर्यकी एकसौ चौरासीगली हैं तहां एक एक दिन प्रति एकएक गलीविषै दोय चंद्रमा वा दोयसूर्य गमन करैं हैं ॥ ३७६ ॥

आगैं वीथीनिका अंतराल करि दिवसप्रति गति विशेषकौं कहैं हैं--

पथ्थासमपिण्डहीणा चारक्खेत्ते णिरेयपथमजिदे ॥
वीथीण विचाले सगविंबजुदोदु दिवसगदी ॥ ३७७ ॥
पथव्यासपिण्डहीना चारक्षेत्रे निरेकपथभक्ते ॥
वीथीनां विचालं स्वकबिंबयुतं तु दिवसगतिः ॥ ३७७ ॥

अर्थः—पदव्यास पिण्ड कहिए बिंबका व्यासकरि गुण्या हुवा बीथीनिका प्रमाण तीह करि हीन जो चार क्षेत्र ताकों एकघाटि बीथीनिका प्रमाणका भाग दिएं बीथीनिका अतरालका प्रमाण हो है। बहुरि स्वकीय बिंबप्रमाण तामें जोड़ें दिवस गतिका प्रमाण है। तहां सूर्य बिंबका व्यास योजनका अठतालीस इकसठिवां भाग $\frac{४८}{६१}$ तीहकरि बीथीनिका प्रमाण एकसौ चौरासीकों गुणिएं तब अठ्यासीसै बत्तीसका इकसठिवां भाग प्रमाण होइ $\frac{८८३२}{६१}$ याकों समच्छेद विधानकरि चारक्षेत्रका प्रमाण विषैं घटाइए तहां पांचसै दसयोजनमैंयों समछेद किएं इकतीस हजार एकसौ दशका इकसठिवां भाग होय $\frac{३१११०}{६१}$ यामें सूर्य बिंबप्रमाण अधिक या $\frac{४८}{६१}$ सो जोड़ें इकतीस हजार एकसौ अट्ठावनका इकसठिवां भाग भया $\frac{३११५८}{६१}$ याविषैं पथव्यास पिण्ड अठ्यासीसौ बत्तीका इकसठिवां भाग $\frac{८८३२}{६१}$ घटाइएं तब बाईसहजार तीनसै छब्बीसका इकसठिवां भाग होय $\frac{२२३२६}{६१}$ याकों एक घाटि बीथीनिका प्रमाण एकसौ तियासी ताका भाग दीजिए तहां पूर्व भागहार इकसठि ताकों एकसौ तियासी करि गुणि भाग दीजिये तब बाईस हजार तीनसै छब्बीसकों ग्यारह हजार एकसौ तेरसठिका भाग दीजिए इतना भया $\frac{२२३२६}{१११६३}$ तहां भाग दिएं दोय योजन पाए, सो दोय योजन प्रमाण

वीथीके बीच अंतराल है बहुरि यामें स्वकीय बिंब जो जो सूर्यबिंबका प्रमाण योजनका अडतालीस इकसठिवां भाग सो मिलाएं एकसौ सत्तरिका इकसठिवां भाग प्रमाण दिन दिन प्रति गमनक्षेत्रका प्रमाण हो है।

भावार्थः— पूर्वोक्त चार क्षेत्रका व्यासविषें एकसौ चौरासी गमन करनें कीं गली है। तहां प्रथम गली अर दूसरी गली विषें दोय योजनका अंतराल है ऐसें ही दोय दोय योजनका एक अंतराल जाननां। बहुरि प्रथम गलीकी आदितैं द्वितीय गलीकी आदि पर्यंत अंतराल जाननां ऐसें ही दिन दिन प्रति तातैं दूसरे दिन तिस प्रथम गलीतैं योजनका एक सौ सत्तरीका इकसठिवां भाग परैं जाइ दूसरी गलीविषें गमन करै है। ऐसे दिन २ प्रति परैं परैं गमन क्षेत्रका प्रमाण जाननां। बहुरि ऐसें ही चंद्रमाका चार क्षेत्र इकतीस हजार एक सौ अट्ठावन योजन इकसठिवां भाग प्रमाण $\frac{३११५८}{६१}$ तामें पथ व्यास विन्दु आठसौ चालीसका इकसठिवां भाग $\frac{८४०}{६१}$ तामें घटाइ एक घाट चौदह१४का भाग दिएं पैंतीस योजन अर दोइसै चौदहका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण तौ वीथी वीथीविषें अंतराल हो है। यामें चंद्रबिंबका प्रमाण मिलाए छत्तीस योजन अर एकसौ गुण्यासीका चारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण दिन दिन प्रति गमन क्षेत्रका प्रमाण जाननां ॥३७७॥

ऐसें स्थाया जो दिन प्रति गमन प्रमाण ताकौं आश्रय करि मेरुतैं मार्ग मार्ग प्रति अंतराल अर तिन मार्गनिका परिधिकौं कहै हैं—

> सुरगिरिचंदरवीणं मग्गं पडिअंतरं च परिहिं च ॥
> दिणगदितप्परिहीणं खेत्तादो साहए कमसो ॥ ३७८ ॥
> सुरगिरिचंद्ररवीणां मार्गं प्रत्यंतरं च परिधिः च ॥
> दिनगतितत्परिधीनां क्षेपात् साधयेत् क्रमशः ॥ ३७८ ॥

अर्थ.— मेरुगिरि अर चंद्रमा सूर्यनिका मार्ग इनकै बीचि अंतराल, बहुरि तिन मार्गनिका परिधि सो दृखावना। कैसे सो कहिए हैं—जंबू-द्वीपका व्यासका एक लाख योजन तामैं जंबूद्वीपके अंततैं एकसौ असी योजन उरैं अभ्यंतर मार्ग है। तातैं सन्मुख दोऊ पार्श्वनिका द्वीपसंबंधी चारक्षेत्र मिलाए तीनसै साठियोजन भए सो घटाएं निन्यानवै हजार छसै चालीस योजन प्रमाण अभ्यंतर वीथीका सूचीव्यास हो है। इतनांही अभ्यंतर वीथीविषै तिष्ठते सन्मुख दोऊ सूर्य तिनकै बीच अंतराल है। बहुरि तामैं मेरुका व्यास दशहजार योजन घटाइ ८९६४० आधा करिए तब चवालीस हजार आठसैवीस योजन प्रमाण मेरुगिरि अर अभ्यंतर वीथी विषै तिष्ठता सूर्यकै बीचि अंतराल हो है।

बहुरि यामैं दिनगतिका प्रमाण दोय योजन अर अठतालीसका एकसठिवा भागप्रमाण मिलाएं चवालीसहजार आठसै बावीस योजन अर अठतालीसका इकसठिवा भाग प्रमाण दूसरी वीथी विषै दिनगति-का प्रमाण मिलाए उत्तरोत्तर पथ विषै तिष्ठता सूर्य अर मेरुगिरिकै बीचि अंतरालका प्रमाण हो है। बहुरि अभ्यंतर वीथीका सूचीव्यास ९९६४० विषै दूणा दिन गतिका प्रमाण तीनिसै चालीसका इकसठिवा भाग ताका पांच योजन अर पैंतीसका इकसठिवा भाग मिलाएं निन्याणवै हजार छसै पैंतालीस योजन योजनका पैंतीस इकसठिवा भाग प्रमाण बीथीविषै तिष्ठते दोऊ सूर्य तिनकै बीचि अंतराल हो है। इतनांही दूसरी बीथीविषै तिष्ठते दोऊ सूर्य तिनकै बीचि अंतराल हो है। इतनाही दूसरी बीथीका सूची व्यास हो है। ऐसैं अपना अभ्यंतरवर्ती पूर्वपूर्व व्यासविषै तिष्ठते दोऊ सूर्यनिकै बीचि अंतराल हो है। बहुरि—

" विक्खंभवग्गदहगुणकारिणी वट्टस्सपरिरहो होदि "

इस कारण सूत्रकरि अभ्यंतर परिधिका (सूची व्यास ९९६४० का परिधि बनाईये। तब तीन लाख पंद्रह हजार निवासी ३१५०८९

योजन प्रमाण होइ बहुरि यामें यामें दूना दिन गतिका प्रमाण $\frac{३४०}{६१}$ का परिधिका) प्रमाण विष्कंभ ३४० का वर्ग दश गुणा $\frac{११५६०००}{६१।६१}$ ताका वर्गमूल १०७५ ल्याइ अपना भाग हारका भागदिए सतरह योजन अर योजनका अठतीस इकसठि भाग होइ सो मिलाए तीन लाख पंद्रह हजार एकसौ छह योजन अर योजनका अठतीस इकसठिवां भाग प्रमाण ३१५१०६ । $\frac{३८}{६१}$ द्वितीय वीथीका परिधि हो है । ऐसे ही दूणा गतिका परिधिका प्रमाण पूर्व पूर्व वीथीका परिधिविषैं जोडै उत्तर उत्तर वीथीका परिधि हो है । इस प्रकार करि दिन गतिके मिलावनेतैं अर दूणादिन गतिका परिधिके मिलावनेतें क्रमतैं मेरुगिरि सूर्यके वीचि अंतराल अर वीथीनिका परिधि साधिए हैं ॥ ३७८ ॥

आगैं ऐसै कह्या जु परिधि तिहविषैं भ्रमण करता सूर्य ताके दिन रात्रिको कारणपनैं अर तिन दिन रात्रनिका प्रमाण मार्गनिकी अपेक्षा करि कहे हैं—

> सूरादोदिणरत्ती अट्ठारस बारसा मुहुत्ताणं ॥
> अब्भन्तरम्हि एदं विवरीय बाहिरम्हि हवे ॥३७९ ॥
> सूर्यात् दिनरात्री अष्टादश द्वादश मुहूर्तानाम् ॥
> अभ्यन्तरे एतत् विपरीतम् बाह्ये भवेत् ॥ ३७९ ॥

अर्थ — सूर्यतैं दिन रात्र अठारह मुहूर्त प्रमाण अभ्यंतर परिधिविषैं हो है । यहु ही विपरीत उलटा बाह्य परिधिविषै हो है । भावार्थ —जंबूद्वीपकी वेदीतैं उरैं एकसौ अस्सी योजन जो अभ्यंतर परिधि है तिहविषैं सूर्य भ्रमण करै तिह दिन अठारह मुहूर्तका तो दिन हो है । अर बारह मुहूर्तकी रात्र हो है । बहुरि लवण समुद्रविषैं सूर्य बिंब प्रमाण करि अधिक तीनसै दस योजन परैं जो बाह्य परिधि तिहि

विषैं सूर्य भ्रमण करै तिह दिन बारह मुहूर्तका दिन हो है । अठारह मुहूर्तकी रात्रि हो है ॥ ३७९ ॥

आगें सूर्यका अवस्थिति स्वरूप अर दिन रात्रिविषैं हानिचय कहै हैं ।

ककडमयरे सव्वब्भन्तरबाहिरपहट्ठि ओहोदि ॥
मुहभूमीण विसेसे वीथीणंतरहिदेय य चयं ॥ ३८० ॥
कर्कटमकरे सर्वाभ्यन्तर बाह्य पथस्थितो भवति ॥
मुखभूम्योः विशेषे वीथीनामान्तरहिते च चयः ॥३८०॥

अर्थः—कर्कट अरमकरविषैं सर्व अभ्यन्तर बाह्यपथविषैं तिष्ठतो सूर्य है । भावार्थ—कर्कराशिविषैं सूर्य प्राप्त होई तब अभ्यंतर वीथी विषैं भ्रमण करैं हैं । बहुरि मकरराशीविषैं सूर्य प्राप्त होय तब बाह्य वीथीविषैं भ्रमण करै है । बहुरि तिस राशिकी समाप्ततापर्यंत दिनरात्रीका प्रमाण तितनाही रहै हैं कि विशेष है । तहां कहिए हैं दिन दिन प्रति हानिचय हैं । कैसे? मुखतो बारह मुहूर्तक. दिन अर भूमि अठारह मुहूर्तका दिन तहां विशेषे कहिए भूमिमैंस्यौं मुख घटाए अवशेष छह रहे इनको वीथी एकसौ चौरासी तिनकै बीचि अन्तराल एकसौ तियासी सो इतनै दिननिविषैं जो छह मुहूर्त होई तौ एक अंतराल विषै कितना मुहूर्त होइ । ऐसे किएं छहका तीनसौ तिया सिवां भाग हो है । तहां तीन करि अपवर्तन कीए दोय मुहूर्तका इकसठिवां भाग प्रमाण दिन दिन प्रतिहानि चय होय है ।

भावार्थः—अभ्यन्तर वीथी विषैं सूर्य जिह दिन भ्रमण करै तिह दिन अठारह मुहूर्तका दिन हो है । बहुरि तातैं परैं दूसरी वीथी विषैं जिह दिन प्रमाण करै तिह दिन अठारह मुहूर्तमैंस्यौं दोय मुहूर्तका इकसठिवां भाग घटाइए इतने प्रमाण दिन हो है । ऐसेही दिन दिन प्रति घटता घटता बाह्यविषैं सूर्य भ्रमैं तिह दिन बारह मुहूर्तका दिन

हो है। बहुरि तिसतैं उरैं मार्गविषैं सूर्य आवै तिह दिन बारह मुहूर्तवि-षैं दोई मुहूर्तका इकसठिवां भाग मिलाइए इतना दिन हो है। ऐसैं हानि चय जानना। बहुरि तिस मुहूर्तका अहोरात्र है तामैं जितनें प्रमाण दिन होय सो घटाए अवशेष तहां रात्रिका प्रमाण जानना ॥ ३८० ॥

ऐसैं कहे जु दिन रात्रि तिनविषैं तौ ताप अर तमको वर्तमान काल है। दिनविषैं तौ ताप कहिए तावडा वर्तै है रात्रिविषैं तमकों कहिए अंधकार वर्तै है। तातैं तम तापका क्षेत्र प्रमाण निरूपण करत संता आचार्य श्रवण माह मासादिकनिकैं दक्षिणायन उत्तरायणकों निरूपै है—

सावणमाघे सव्वब्भन्तरबाहिरपहट्ठिदो होदि ॥
सूरद्दयमासस्स य तावतमा सव्वपरिहीसु ॥ ३८१ ॥
श्रावणमाघे सर्वाभ्यंतर बाह्यपथस्थितो भवति ॥
सूर्यस्थितमासस्य च तापतमसी सर्वपरिधिषु ॥ ३८१ ॥

अर्थः-श्रावण मासविषैं तौ सूर्य अभ्यन्तर मार्ग विषैं तिष्ठै है। माघमास विषैं सूर्य सर्व तैं बाह्यमार्गविषैं तिष्ठै है। तिस सूर्य तिष्ठनेकौं जु मास तिन विषैं ताप अर तमके वर्तनेका प्रमाण सर्व परिधिनिविषैं ल्यावना। तहां छह महिनाके एकसौतियासी दिन होय तौ श्रावण आदि एक आदिक महिनाके केते दिन होइ। ऐसैं कीए श्रावण मधं साढातीस, भादवा मधं एकसठि असोज मधं साढा इक्याणवै कार्तिक मधं एक सौ बाईस मार्गशीर्ष मधं एकसौ साढाबावन पौष मधं एकसौ तियासी दिन हो हैं सो एतौ दक्षिणायनके दिन है। बहुरि माघ मधं इकसठि चैत्र मधं साढाइक्याणवै, वैशाख मधं एकसौ बाईस ज्येष्ठ मधं एकसौ साढाबावन, आषाढ मधं एक सौ तियासी ए उत्तरायणके दिन हैं ॥ ३८१ ॥

आगें सर्व परिधिनि विषैं तापतमके प्रमाणल्यावनैंका विधान कहै हैं—

गिरिअब्भतरमज्झिमबाहिरजलछट्ठभागपरिहिं तु ॥
सट्ठिहिदेसूरट्ठियमुहुत्तगुणिदे दु तावतमा ॥ ३८२ ॥
गिर्यभ्यंतरमध्यमबाह्यजलषष्ठभागपरिधिं तु ॥
षष्ठिहृते सूर्यस्थितमुहूर्तगुणिते तु तापतमसी ॥ ३८२ ॥

अर्थः-मेरुगिर अर अभ्यंतर वीथी अर जल विषैं लवण समुद्राका व्यासका छट्ठा भाग वैं जो जो परिधिका प्रमाण होइ ताकौं साठिका भाग दीजिए अर सूर्य जिस मास विषैं तिष्ठै तिस मास विषैं जो दिन रात्रिका मुहूर्तनिका प्रमाण तीहकरि गुंणिए तब ए तब तीहमास विषैं जो दिन रात्रिका प्रमाण तीहकरि गुणिए तब तीह मास विषैं तापतमका विषयभूतक्षेत्रका प्रमाण आवैं है ।

तहां मेरुगिरिका व्यास तौ दस हजार योजन है । बहुरि जंबूद्वीप का व्यास १००००० विषैं दीपका चार क्षेत्र १८० कौं दोऊ पार्श्वनिका ग्रहणके अर्थि दूणांकरि ३६० घटाइए तब अभ्यंतर वीथीका सूची व्यास निन्याणवै हजार छसै चालीस योजन हो है ९९६४० बहुरि चार क्षेत्रका प्रमाण ५१० कौं आधाकरि २५५ यामें द्वीपसंबंधी चार क्षेत्र १८० घटाइ अवशेष ७५ कौं दोऊ पार्श्वनिका ग्रहणके अर्थि दूणा १५० करि जंबूद्वीपका व्यास १००००० विषैं मिलाएं एक लाख एकसौ पचास योजन प्रमाण मध्यम वीथीका सूची व्यास हो है ।

बहुरि लवण समुद्र संबंधी चार क्षेत्र ३३० कौं दोऊ पार्श्वनिका ग्रहणकै अर्थि दूणा ६६० करि जंबू द्वीपका व्यास १००००० विषैं मिलाएं एक लाख छसै साठि योजन प्रमाण बाह्य वीथीका सूची व्यास होहै बहुरि लवण समुद्रका व्यास २००००० कौ छहका भाग देइ

लवणराशि ३३३३३$\frac{२}{६}$ कों दोऊ पार्श्वनिकों ग्रहणके अर्थि दूणा करि ६६६६६$\frac{४}{६}$ जंबूद्वीपके व्यास १०००१० विर्षे मिलाए एक लाख छासठि हजार छसै छासठि योजन अर अपवर्तन किए दोयका तीसा भाग प्रमाण जल षष्ठ भागका व्यास हो है।

अब इन पांचौ व्यासनिकौं— " विक्खं भवग्गदहगुणकरिणीवट्टस परिहियं होदि " इस करणसूत्रकरि परिधिका प्रमाण ल्याइये तब मेरु-गिरिका परिधि इकतीस हजार छसै बाईस योजन ३१६२२ अभ्यंतर वीथीका परिधि तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजन, मध्यम वीथीका परिधि तीन लाख सोलह हजार सातसै योजन, बाह्य वीथीका परिधि तीन लाख अठारह हजार तीनसै चौदह योजन, जल षष्ठ भागका परिधि पांच लाख सताईस हजार छियालीस योजन प्रमाण है ऐसैं परिधिका प्रमाण ल्याइ इन परिधिनिविषैं जो विवक्षित परिधि होइ ताकौं साठिका भाग दिएं पांचसै सताईस योजन अर एकका तीसवां भाग प्रमाण होइ।

बहुरि जिस मास विषैं सूर्य तिष्ठै तिस मास संबंधी दिन रात्रिके मुहूर्तनिका अठारहकौं लगाय बारहपर्यंत प्रमाण १८। १७। १६। १५। १४। १३। १२ तिहकर गुणिए। जैसैं पूर्वोक्त प्रमाण ५२$\frac{७१}{३०}$ कों अठारह करि गुणें चौराणवैसै छियासी योजन अर अठारहका तीसवां भागकों छहकरि अपवर्तन किए तिनका पांचवा भाग प्रमाण होइ ९४८६ ऐसैं किएं जो जो प्रमाण आवैं सो ताप तमका विषयभूत क्षेत्र जानना।

भावार्थ—मेरुगिरिका परिधि इकतीस हजार छसै बाईस योजन है ३१६२२ तीहविषैं श्रावण मासि विषैं जहां अठारह मुहूर्तकी रात्रि

हो है तहां चौराणवैसै छियासी योजन अर योजनका तीन पांचवां भागविषें तौ एक सूर्यके निमित्तें तावडा है। अर तिनके बीचि अंतरालविषें तरेसठिसै तेईस योजन अर दोयका पंचम भागविखें अंधकार है, अर ताके सन्मुख दूसरा अंतरालविषें इतनाही अन्धकार है, अर ताके सन्मुख दूसरा अंतरालविषें इतनाही अंधकार है इन सबनिको जोडें ९४८३ । $\frac{३}{५}$ ॥ ६३२४ । $\frac{२}{५}$ । ९४८६ । $\frac{३}{५}$ ॥ ६३२४ ॥ $\frac{२}{५}$ ॥ इकतीस हजार छसै बावीस योजन प्रमाण परिधि हो है। ऐसेंही अन्य परिधिनिविषें जानना।

बहुरि विवक्षित परिधिकों साठिका भाग देइ एक मुहूर्त करि गुणें जो प्रमाण आवैं तितना मासपति तापतमका घटती बधती क्षेत्रका प्रमाणरूप हानिचय जानना तहां विवक्षित मेरुगिरिका परिधिकों साठिका भाग देइ एक मुहूर्त करि गुणें पांचसै सताइस योजन अर एकका तीसवां भाग प्रमाण हानिचय होइ। एक मुहूर्त रात्रिदिन कैसें घटै बधै सो कहिए है। एक दिनविषें दोय एकसठिवां भाग प्रमाण हानिचय होय तौ साढा तीस दिनविषें कितना हानिचय होइ ऐसें करतें अपवर्तनकिए एक मुहूर्त एक मासविषें आवै है। बहुरि साठि मुहूर्तविषें सर्व परिधि प्रमाणविषें गमन करै तो एक मुहूर्तविषें कितना क्षेत्रविषें गमन करै ऐसें परिधिका साठिवां भाग प्रमाण एकमुहूर्तविषें गमन क्षेत्रका

भावार्थ।—मेरुगिरिका परिधि इकतीस हजार छसै बाईस योजन दिन है ३१६२२ तीहविषें श्रावणमासविषें जहां अठारह मुहूर्तका बारह मुहूर्तकी रात्रि हो है तहां चौराणवैसै छियासी योजन अर योजनका तीन पांचवां भागविषें तौ एक सूर्यके निमित्तें तावडा पाइए हैं। अर ताके सन्मुख इतनाही दूसरे सूर्यके निमित्तें तावडा है। अर तिनके बीचि अंतरालविषें तरेसठिसै तेईस योजन अर दोयका पंचम भागविषें अंधकार है, अर ताके सन्मुख

दूसरा अंतरालविषै इतनाहीं अंधकार है इन सबनिको जोडें

९४८३ । $\frac{३}{५}$ ॥ ६३२४ । $\frac{२}{५}$ ॥ ९४८६ । $\frac{३}{५}$ ॥ ६३२४ । $\frac{२}{५}$ ॥

इकतीस हजार छसै बाईस योजन प्रमाण परिधि होइहै । ऐसें ही अन्य परिधिनिविषैं जानना । बहुरि विवक्षित परिधिकौं साठिका भाग देइ एक मुहूर्तकरि गुणें जो प्रमाण आवै तितना मास प्रति तापतमका घटती बधती क्षेत्रका प्रमाणरूप हानिचय जानना तहां विवक्षित मेरुगिरिका परिधिकौं साठिका भाग देइ एक मुहूर्त करि गुणें पांचसै सताईस योजन अर एकका तीसवां भाग प्रमाण हानिचय होइ । एक मासविषैं एक मुहूर्त रात्रिदिन कैसैं घटैं बधै सो कहिए हैं । एक दिनविषैं दोय इकसठिवां भाग प्रमाण हानिचय होय तौ साढा तीस दिनविषैं हानिचय होइ ऐसैं करतें अपवर्तन किएं एक मुहूर्त एक मासविषैं आवै है ।

बहुरि साठि मुहूर्तविषैं सर्व परिधि प्रमाण विषैं गमन करै तौ एक मुहूर्तविषैं कितना क्षेत्रविषैं गमन करै ऐसैं परिधिका साठवां भाग प्रमाण एक मुहूर्तविषैं गमन क्षेत्रका प्रमाण आवै है ।

भावार्थः—मेरुगिरिका परिधिविषैं श्रावणमासतैं भाद्रपमासविषैं पांचसै सताईस योजन अर एकका तीसवां भाग प्रमाण तापक्षेत्र घटता है तम क्षेत्र बधता पाइए है । तहां एक सूर्यसंबंधी तापक्षेत्र नितासीसैं गुणसठि योजन अर सताइ तीसवां भाग अर इतनाही दूसरा सूर्य संबंधी । बहुरि एक अंतराल विषैं तम क्षेत्र अडसठिसैं इक्यावन योजन अर ग्यारह सताइ वां भाग अर इतनाही दूसरा अंतरालविषैं ऐसें सर्व मिलि मेरुगिरिका परिधिप्रमाण हो है । ऐसैंही पूष मास पर्यंत दक्षिणायन विषैं तौ मास मास पर्यंत पांचसै सताईस योजन अर एकका तीसवां भाग प्रमाण आताप क्षेत्र तौ घटता घटता अर तम क्षेत्र बधता जानना ।

बहुरि माघतैं फाल्गुनादिक आषाढ पर्यंत उत्तरायण विषैं मास मास पर्यंत तितनांही ताप क्षेत्र बधता बधता अर तम क्षेत्र घटता घटता जानना। ऐसैं ही सर्व परिधिनि विषैं तापतम क्षेत्रका प्रमाण विवक्षित मास विषैं ल्यावना। बहुरि इहां पांच परिधि विषैं मास मासनिकी अपेक्षा वर्णन किया है इस ही प्रकार विवक्षित क्षेत्र का परिधिविषैं विवक्षित दिन अपेक्षा ताप तम क्षेत्रका प्रमाण ल्यावना। बहुरि इहां जंबूद्वीप संबंधी सूर्यनिका लवणसमुद्रके व्यासका छठा भाग पर्यंत प्रकास है तातैं तहां पर्यंत ग्रहण किया है। बहुरि जिस क्षेत्र विषैं ताप है तहां दिन जानना जहां तम है तहां रात्रि जाननी ॥ ३८२ ॥

आगैं ऐसैं ल्याया जु ताप तमका क्षेत्र ताका प्रवर्तनको कहै हैं—

परिहिम्हि जम्हि चिट्ठदि सूरो तस्सेव तावमाणदलं ॥
बिंब पुरदो पसप्पदि पच्छाभागे य सेसद्धं ॥ ३८३ ॥
परिधौ यस्मिन् तिष्ठति सूर्यः तस्यैव तापमानदलम् ॥
बिंबपुरतः प्रसर्पति पश्चाद्भागे च शेषार्धम् ॥ ३८३ ॥

अर्थ—जिस परिधिविषैं सूर्य तिष्ठै हैं तिस परिधिहीका तापका जो प्रमाण ताका आधा तौ सूर्यके बिंबतैं आगैं फैलै है, अर शेष आधा पीछैं फैलै है।

भावार्थः—परिधिविषैं जो तापका प्रमाण कह्या तिहविषै जहां सूर्यका बिंब पाइए तिह क्षेत्रकै आगैं तिस प्रमाणतैं आधा ताप फैलै है, अर आधा पीछैं फैलै है।

इहां प्रश्न—जो मेरुगिरिकी परिधीनै आदि देकरि जिन परिधिनिविषैं सूर्यका गमन नाहीं तहां ताप कैसे फैलै है? ताका समाधान—सूर्य बिंबतैं सूधासन्मुख जो तिस विवक्षित परिधि विषैं क्षेत्र तातैं आगैं पीछैं आधा ताप फैलै है। बहुरि ऐसा जानना जैसैं चिराककैं आगैं

पीछैं प्रकाश हो है। बहुरि जैसें जैसें चिराक आगानें चालै तैसें तैसें आगानै तौ प्रकाश होता जाय पीछेतैं अंधकार होता आवै तैसें ही सूर्य बिंब जैसें जैसें आगें चलै तैसें तैसें आगें ताप फैलता जाय पीछैं पीछैं तम होता आवै है ॥ ३८३ ॥

अब ताप तमकी हानि वृद्धिकों कहै हैं—

पणपरिधीयो भजिदे दसगुण सूरंतरेण जह्लद्धं ॥
साहोदि हाणिवड्ढी दिवसे दिवसे च तावतमे ॥ ३८४ ॥
पंच परिधिषु भक्तेषु दशगुण सूर्यांतरेण यल्लब्धं ॥
सा भवति हानिवृद्धिर्दिवसे दिवसे च तापतमसा ॥३८४॥

अर्थ -पांचो परिधिविषैं दशगुणां सूर्यके अंतरालनिका भाग दियें जो लब्धिराशि होइ सो दिन दिन विषैं तापतमकी हानि वृद्धीका प्रमाण जाननां। तहां पंच परिधिनिविषैं विवक्षित मेरुगिरि परिधि तहां साठि मुहूर्तनिविषैं इकतीस हजार छहसै बाईस योजन प्रमाण क्षेत्रविषैं गमन करै तौ दोय मुहूर्तका इकसठिवां भागमात्र दिनका वृद्धिहानिका जो प्रमाण तामैं कितनां गमन करै ऐसैं तिस परिधिप्रमाणकौं साठिका भाग दिएं दोयका इकसठि भाग करि गुणें दोय करि अपवर्तन किएं सत्रह योजन अर पांच सौ बारहका अठारहसै तीसवां भाग प्रमाण आवै सोई सूर्यके गमन मार्गनिका अंतराल एकसौ तियासी ताकों दसगुणां किएं अठारहसै तीस ताका भाग विवक्षित मेरुगिरिके परिधि प्रमाणकौं दीएं प्रमाण आवै तातैं ऐसा विचारि आचार्यनैं ऐसा कह्या कि विवक्षित परिधिकौं दशगुणां सूर्यांतरालका भाग दिएं ताप तमका वृद्धिहानिका प्रमाण आवै है। ऐसैं सत्रह योजन अर पांचसै बारहका योजन अर पांचसै बारहका अठारहसै तीसवां भाग प्रमाण दिन दिन प्रति उत्तरायण विषैं ताप बधै है तम घटै है, दक्षिणायन विषैं तम बधै

है ताप घटै है । याही प्रकार अन्य परिधिनिविषैं दिन दिन प्रति ताप क्रमका घटनां वधनां ल्यावनां ॥ ३८४ ॥

आगैं पांचौं परिधिनिके सिद्ध भए अंकनिकौं दोय गाथानिकरि कहै हैं—

वावीस सोल तिण्णिय उणणउदीपण्णमेकतीसं च ॥
दुखसत्तट्ठिगितीसं चोद्दस तेसीदि इगितीसं ॥ ३८५ ॥
द्वाविंशतिः षोडश त्रीणि एकोननवतिपंचाशदेकत्रिंशच ॥
द्विख सप्तषष्ट्येकत्रिंशत् चतुर्दशत्र्यशीतिरेकत्रिंशत् ॥३८५॥

अर्थः—वाईस सोला तीन ३ १६ २२ इन अंक क्रम करि इकतीस हजार छसै वाईस योजन प्रमाण मेरुगिरिका परिधि है बहुरि निवासी पचास इकतीस ३१५०८९ इन अंक क्रमकरि तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजन प्रमाण अभ्यंतर वीथीका परिधि है। बहुरि दोय बिंदी सदसठि इकतीस ३१६७०२ इन अंक क्रमकरि तीन लाख सोलह हजार सातसै दोय योजन प्रमाण मध्य वीथीका परिधि है। बहुरि चौदह तियासी इकतीस ३१८३१४ इन अंक क्रमकरि तीन लाख अठारह हजार तीनसौ चौदह योजन बाह्य वीथीका परिधि है ॥ ३८५ ॥

छादालसुण्णसत्तयवावण्णं होंति मेरुपहुदीणं ॥
पंचण्हं परिधीओ कमेण अंककमेणेव ॥ ३८६ ॥
षट्चत्वारिंशच्छून्यसप्तकद्विपंचाशत् भवंति मेरुप्रभृतीनां ॥
पंचानां परिधयः क्रमेण अंकक्रमेणैव ॥ ३८६ ॥

अर्थः—छियालीस शून्य सात बावन ५२७०४६ इन अंक क्रमकरि पांच लाख सताईस हजार छियालीस योजन प्रमाण जल षष्ठ-भागका परिधि है। ऐसैं मेरु आदि जे पंचनिका परिधि है सो क्रमकरि अंकनिका अनुक्रमकरि जाननां ॥ ३८६ ॥

आगैं जिनका प्रमाण समान नाहीं ऐसी जु अभ्यन्तरादि परिधि तिनकौं समान कालकरि कैसैं समाप्त करै हैं सो कहैं हैं—

णीयंता सिग्घगदी पविसंता रविससी दु मन्दगदी ॥
विसमाणि परिरयाणि दु साहंति पमाणकालेन ॥ ३८६ ॥
निर्यांतौ शीघ्रगती प्रविशंतौ रविशशिनौ तु मंदगती ॥
विषमान् परिधीस्तु साधयतः समानकालेन ॥ ३८७ ॥

अर्थ—सूर्य अर चद्रमा ए निकसते हुए ज्यों ज्यों अगली परिधिकौं प्राप्त हुए त्यों त्यों शीघ्र गमनरूप हो हैं उतावले चले हैं। बहुरि पैसते हुए ज्यों ज्यों माहिली परिधिनिकौं प्राप्त होइ त्यों त्यों मंद गमनरूप हो है धीर चलै हैं। ऐसैं होइ समानकालकरि विषम प्रमाणकौं लिएं जु अभ्यंतरादि परिधि तिनकौं समाप्त करै हैं गमनकरि साधै हैं ॥३८६॥

आगैं तिन सूर्य चंद्रमानिका गमन विधान दृष्टांत मुखकरि कहै हैं—

गय हय केसरि गमणं पढमं मज्झंतिमे य सूरस्स ॥
पडिपरिहिं रविससिणो मुहुत्तगदिखेत्तमाणिज्जो ॥३८८॥
गजहरिकेसरि गमनं प्रथमे मध्ये अंतिमे च सूर्यस्य ॥
प्रतिपरिधि रविशशिनोः मुहूर्तगतिक्षेत्रमानेयम् ॥ ३८८ ॥

अर्थ—गज घोटक केशरी गमन प्रथम मध्य अंतविषैं सूर्य चंद्रमाके होहै। भावार्थ—सूर्य चंद्रमा अभ्यंतर परिधिविषैं हस्तीवत् मंद गमन करै हैं, बहुरि मध्य परिधिविषै घोटकवत् तातैं शीघ्र करै हैं। बहुरि बाह्य परिधिविषैं सिंहवत अति शीघ्र गमन करै है।

बहुरि अब सूर्य चंद्रमानिकै परिधि परिधि प्रति एक मुहूर्तविषैं गमनका प्रमाण ल्यावनां। कैसैं सो कहिए हैं—तहां सूर्यका परिधिविषैं भ्रमणकी समाप्तताकी काल साठि मुहूर्त है। बहुरि अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजन है सो सूर्यके साठ मुहूर्त-

निका गमन क्षेत्र तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजन होइ तौ एक मुहूर्तका कितना होइ । ऐसैं परिधि प्रमाणकौं साठिका भाग दिए पांच हजार दोयसौ इक्यावन योजन अर गुणतीसका साठिवा भाग मात्र सूर्यका अभ्यंतर परिधिविषैं एक मुहूर्त करि गमन क्षेत्रका प्रमाण होई । ऐसैं ही अन्य विवक्षित परिधिके प्रमाणकौं साठिका भाग दिएं सूर्यका विवक्षित परिधिविषैं एक मुहूर्त करि गमन क्षेत्रका प्रमाण साधना । बहुरि ऐसेंही चद्रमाका भी त्रैराशिक विधानकरि ल्यावनां । तहां चंद्रमांका परिधिविषैं भ्रमणकी समाप्त ताका काल बासठि मुहूर्त अर तेईसका दोयसै इकईसवा भाग प्रमाण ६२।२३/२२१

याका विधान आगैं "अट्ठट्ठोसतरस" इत्यादि सूत्रकरि कहेंगे ॥ याकौं समच्छेदकरि मिलाए तेरह हजार सातसै पचीसका दोयसै इकईसवा भाग मात्र भया सो इतने कालविषै अभ्यतर परिधिका प्रमाण तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजनप्रमाण गमन क्षेत्र होइ तौ एक मुहूर्तविषैं कितना होइ । प्रमाण १३७२५/२२१ फल ३१५०८९ इच्छा मु १ ऐसैं करि लब्धि राशि पांचहजार तहेत्तरि योजन अर सात हजार सातसै चवालीसका तेरह हजार सातसै पच्चीसवा भाग मात्र ५०७३ । ७७४४/१३७२५ चंद्रमाका अभ्यंतर परिधिविषैं एक मुहूर्तका गमन क्षेत्रका प्रमाण आया । ऐसैं ही अन्य विवक्षित परिधिके प्रमाणको बासठि अर तेईसका दोयसै इकईसवां भागका भाग दिएं विवक्षित परिधिविषै एक मुहूर्तका गमन क्षेत्रका प्रमाण आवै है ॥ ३८८ ॥

आगैं अभ्यंतर वीथीविषैं तिष्ठता जु सूर्य ताका चक्षु स्पर्शस्थान जो दृष्टि विषैं आवनेका मार्ग ताकौं तीन गाथानिकरि कहै है —

सट्ठिहिदपढमपरिहिं णवगुणिदे चक्खुफासअद्धाणं ॥
तेणूणं णिसहाचलचावद्धं जं पमाणमिणं ॥ ३८९ ॥
षष्ठिहितप्रथमपरिधौ नवगुणिते चक्षुःस्पर्शाध्वा ॥
तेनोनं निषधाचलचापार्धं यत् प्रमाणमिदम् ॥ ३८९ ॥

अर्थः—प्रथम परिधिका प्रमाणकौं साठिका भाग देइ नवकरि गुणिए इतनां चक्षुस्पर्शअध्वान है। तहां साठि मुहूर्तनिका प्रथम परिधि तीन लाख पंद्रह हजार निवासी योजन प्रमाण गमन क्षेत्र होइ तौ नव मुहूर्तनिका कितना गमन क्षेत्र होइ ऐसैं प्रथम परिधिकौं साठिका भाग ही नवका गुणाकार भया। इनकौं तीन करि अपवर्तन किए वीसका भागहार तीनका गुणाकार हो है। तहां प्रथम परिधिकौं ३१५०८९ वीसका भाग देइ ३१५०८९ तीनकरि गुणिए
२०
९४५२६७ तब अब्धराशि सैंतालीस हजार दोयसैतरेसठि योजन अर सातका वीसवां भाग मात्र चक्षुस्पर्शाध्वान हो है।

भावार्थः—अयोध्या नाम नगरकावासी महंत पुरुषनिकरि उत्कृष्टपनै सैंतालीस हजार दोयसै तरेसठि योजन अर सातका वीसवां भाग मात्र क्षेत्रका अंतराल होतैं सूर्य देखिए हैं इतना ही चक्षु इंद्रीका उत्कृष्ट विषय है याहीका नाम चक्षुस्पर्शाध्वान है।

बहुरि इहां अठारह मुहूर्तका जु दिन ताका आधा भएं मध्यान्हविषैं सूर्य अयोध्याकी बरोबरी आवै अर इहां उदय होता सूर्यका ग्रहण है तातैं नवका गुणकार किया है। अर परिधिविषैं भ्रमणकाल साठि मुहूर्त है तातैं साठिका भागहार किया है।

बहुरि निषध नामा कुलाचल ताका चापका प्रमाण एक लाख तेईस हजार सातसै अडसठि योजन अर अठारह उगणीसवां भाग ताका आधा इकसठि हजार आठसै चौरासी योजन अर नवका उगणीसवां

भाग तामैं पूर्वोक्त चक्षु स्पर्शाध्वानका प्रमाण ४७२६३ $\frac{७}{२०}$ घटाइए अब शेष जो प्रमाण रहै ॥ ३८९ ॥

सो आगली गाथाविषैं कहैं हैं.—

इगिवीस छदालयसं साहिय मागम्म णिसहउवरिमिणो ॥
दिस्सदि अउज्झमज्झे ते णूणो णिसहपासभुजो ॥ ३९० ॥
एकविंशतिषट्चत्वारिंशच्छतं साधिकं आगत्य निषधोपरि इनः
दृश्यते अयोध्यामध्ये ते नोनः निषधपार्श्वभुजः ॥ ३९० ॥

अर्थः—इक्वीस एकसौ छियालीस अंक क्रमकरि चौदह हजार छसै इकइस सौ योजन अर साधिक कहिए किछू अधिक कितनां? चक्षु-स्पर्शाध्वानका अवशेष सा८का विसवां भागकों निषध चापका अब शेष नवका उगणीसवां भागविषै समछेद विधानकरि $\frac{१३३१८०}{२००३८०}$ घटाएं सैंतालीसका तीनसै असीवां भाग $\frac{४७}{३८०}$ मात्र अधिक जाननां। सो निषध कुलाचलकै ऊपरि इतनै १४६२१ । $\frac{४७}{३८०}$ उरैं आइ करि सूर्य है सो अयोध्याकै मध्य महंत पुरुषनिकरि देखिए हैं।

भावार्थ—प्रथम वीथीविषैं भ्रमण करता सूर्य सो निषध कुलाचल-का उत्तर तटतैं चौदह हजार छसै इकईस योजन अर सैंतालीस तीनसै अस्सीवां भाग उरैं आवै तब भरत क्षेत्रविषै उदय हो है। अयोध्याके वासी महंत पुरुषनिकरि देखिए हैं। बहुरि निषधकी पार्श्वभुजा बीस हजार एकसै छिनवै योजन प्रमाण तामैं निषध उरैं आइ सूर्य देखनेंका जो प्रमाण कह्या १४६२१ । $\frac{४७}{३८०}$ ताकौ घटाइएं ॥ ३९० ॥

आगैं कहिए है सो है:—

णिसहुवरिं गंतव्वं पणसगवण्णास पंचदेसूणा ॥
तेत्तियमेत्तं गत्ता णिसहे अत्थं च जादि रवी ॥ ३९१ ॥
निषधोपरि गंतव्यं पंचसप्तपंचाशत् पंचदेशोना ॥
तावन्मात्रं गत्वा निषधे अस्तं च याति रविः ॥ ३९१ ॥

अर्थ:—निषधकै ऊपरि जानां पांच सतावन पांच इन अंक क्रमकरि पांच हजार पांचसै पिचहत्तरि योजन देशोन कहिए किछूघाटि इतना निषध पर्वत ऊपरि जाइ सूर्य अस्तपनैंकौं प्राप्त होहै।

भावार्थ:—परिधिविषैं भ्रमण करतां सूर्य जब निषधपर्वतका दक्षिण तटतैं पैं किछूघाटि पचावनसै पिचहत्तरी योजन जाईं तब अस्त हो है। *अयोध्यादिक भरतक्षेत्रके वासिनी करि न देखिए ॥ ३९१ ॥*

अब जाका प्रयोजन तिस चापकै ल्यावनैंकौं तिसके बाण ल्यावनैंका विधान कहै हैं, चापादिकका वर्णन तौ आगैं होइगा इहां प्रयोजनमात्र वर्णन करिए है—

जंबूचारधरूणो हरिवस्ससरो य णिसहवाणो य ॥
इह वाणावट्टं पुण अब्भंतरवीहि वित्थारो ॥ ३९२ ॥
जंबूचारधरोनः हरिवर्षशरः च निषधबाणश्च ॥
इह बाणवृत्तं पुनः अभ्यंतरवीथीविस्तारः ॥ ३९२ ॥

अर्थ:—धनुषाकार क्षेत्रविषैं जैसैं धनुषका पीठ हो है तैसैं जो होइ ताका नाम धनुष है वा ताका नाम चाप भी है। बहुरि जैसैं धनुषकै डोरी है तैसैं जो होइ ताका नाम जीवा है। बहुरि जैसैं तिस धनुषका मध्यतैं जीवाका मध्य पर्यंत तीरका क्षेत्र हो है तैसै जो होई ताका नाम बाण है। सो इहां जंबूद्वीपकी वेदी अर हरि क्षेत्र वा निषध पर्वतकै बीचि जो क्षेत्र सो धनुषाकार क्षेत्र हो है। तहां हरि क्षेत्र वा निषध

पर्वततैं लगाय वेदी पर्यंत अंतराल क्षेत्र सो बाण कहिए वेदी ताका प्रमाण ल्याइए हैं तहां भरत क्षेत्रकी एक शलाका हिमवन् पर्वतकी दोय इत्यादि विदेह पर्यंत दूणी दूणी पीछैं आधी २ शलाका जोडैं सर्व जंबुद्वीपविषैं एकसौ निवै शलाका कहिए विसवा हो हैं।

तहां भरतक्षेत्रतैं लगाय हरिवर्ष पर्यंत जोड इकतीस शलाका होहैं। कैसैं ?– " अंतधणं गुण गुणिय आदि विहीणं रूऊणुत्तर भजियं। " इस सूत्रकरि अंतविषैं हरिवर्षकी शलाका सोलह ताकौं भरतादिकतैं दोयका गुणकार है। तातैं गुणकार दोय करि गुणैं बतीस तामें आदि भरत क्षेत्रकी शलाका एकसौ घटाएं इकतीस, याकौं एक घाटि गुणकार एक ताका भाग दीएं भी, ऐसैं हरि वर्ष शलाका इकतीस है। बहुरि याही प्रकार निषधशलाका तेसठि होहै। बहुरि एकसौ निवै शलाकानिका एक लाख योजन क्षेत्र होइ तौ इकतीस वा तेसठि शलाकानिका केता होइ ऐसैं किए हरि वर्षका बाण तौ तीन लाख दश हजारका उगणीसवां भाग प्रमाण हो है।

बहुरि निषधका बाण छह लाख तीस हजारका उगणीसवां भाग प्रमाण हो है। वेदीके अर हरिवर्ष वा निषधकी बीचि इतनां अंतराल है। बहुरि यहां चक्षु स्पर्शाध्वान क्षेत्र कहनां। तहां अभ्यंतर वीथी अर हरि क्षेत्र वा निषध पर्वतके बीचि जो धनुषाकार क्षेत्र तहां वीथी की परिधि सो तो धनुष है। बहुरि वीथी अर हरि क्षेत्र वा निषधका पूर्वपश्चिमकी तरफ लंबाईका प्रमाण सो जीवा है। तहां पूर्वैं जो हरिवर्ष वा निषध पर्वतका बाणका प्रमाण कह्या तामैं जंबूद्वीपसंबंधी चार क्षेत्र एकसौ असी योजन ताकौं उगणीसका भागहार करि समच्छेद किएं चौतीससै बीसका उगणीसवां भाग भया। सो इतनां घटाएं चक्षु स्पर्शाध्वान क्षेत्र ल्यावनें विषैं तीन लाख छह हजार पांचसै असीका उगणीसवां

भाग प्रमाण निषधका बाण हो है ३०६५८०/१९ ६२६५८०/१९ अब इन-का वृत्तविष्कंभ जो ऐसा क्षेत्र गोल होइ तब चौडाईका प्रमाण सो कहिए है—

तहां जबूद्वीपका वृत्तविष्कंभ एक लाख योजन तामैं द्वीपसंबंधी चार क्षेत्र एकसो असी ताकों दोऊ पार्श्वनिका ग्रहण अर्थि दूणाकरि ३६० घटाएं अभ्यंतर वीथीका सुचि व्यास निन्याणवे हजार छसै चालीस योजन हो है ९९६४०। याकों समच्छेद करनेके अर्थि उगणीसका भाग दीए अठारह लाख तेरणवै हजार एकसौ साठका उगणीसवां भाग होइ.

बहुरि इहां प्रथम हरिक्षेत्रविषै कहिए है।

" इसुहीण विक्खंभ चउगुणिदिसुणा हेदु हु जीव कदी। बाण कदि छह गुणिद तत्थ जुदे धणु कदी होदि ॥ १ ॥ ऐसा करण सूत्र आगैं कहैंगे ताकरि बाणका प्रमाण ३०६४८०/१० कों विष्कंभका प्रमाण १८९३१६०/११ मैं घटाइए १५८६५८० बहुरि बाणका जो प्रमाण ३०६४८०/१९ ताकौ चौगुणां किएं १२२६३२० जो प्रमाण होइ तीह करि गुणिए—१९४५६५४७८५६००/३६१ तब जीवकी कृति होइ।

याका वर्गमूल किएं जीवाका प्रमाण हो बहुरि बाण हो जु प्रमाण ३०६५८० ताका वर्ग करिऐ ९३९९१२९६९६४०० बहुरि याकौं छह गुणां करिए ५६३ ९४७७७८ ४००/३६१ बहुरि याकौं जीवाकी कृति

कही तिसविषैं जोडिए $\frac{२५०९६०२५६४००}{३६१}$ ऐसैं किएं धनुपकी कृति होई, याका वर्गमूल ग्रहण किएं $\frac{१५८१४१७२}{१}$ अपना भागहारका भाग दिएं तियासी हजार तीनसै सतहत्तरि योजन अर नव उगणीसवां भाग प्रमाण हरि क्षेत्रका चापहो है $\frac{८३३७७९}{१९}$ । बहुरि निषधपर्वतका कहिए है । " इसुहीणं विक्खंभं० " इत्यादि सूत्रकरि निषधका बाणकौ $\frac{६२६५८०}{१९}$ पूर्वोक्त वृत्तविष्कंभ $\frac{१८९३१६०}{१९}$ मैंस्यौं घटाइये अवशेष रहैं $\frac{१२६६५८०}{१९}$ तावौं चौगुणां बाणका प्रमाण $\frac{२५०६३२०}{१९}$ करि गुणिए $\frac{३१७४४५४७८५६००}{३६१}$ तब निषधका जीवाकी कृति होहै । याका वर्गमूल प्रमाण निषधकी जीवा है ।

बहुरि निषधका बाणकी जो कृति $\frac{३९२६०२४९६४००}{३६१}$ ताकौ छह गुणां कहिए $\frac{२३५५६१४९७८४००}{३६१}$ याकौं जीवाकी कृति जो कही तिस विषैं जोडिए $\frac{५५३०६९७६४०००}{३६१}$ तब धनु कृति होइ । याका वर्गमूल ग्रहण करि $\frac{२३५१६१०}{१९}$ अपना भाग-

हारका भाग दिए एक लाख तेईस हजार सातसै अडसठि योजन अर अठारह उगणीसवां भाग प्रमाण $१२३७६८\frac{१८}{१९}$ निषध कुलाचलका चाप हो है इस चापका अयोध्याके पासि अर्धपणां है तातैं इस चापकौं आधा किया। बहुरि अयोध्यातैं चक्षुःस्पर्शाध्वान प्रमाणक्षेत्रपरैं सूर्यदीसै ताकौं तिस आधा प्रमाणमैंस्यौं घटाएं अवशेष जो रह्या तितनैं निषधचापविषैं उत्तर तटतैं उरैं आइ सूर्य भरत क्षेत्र विषैं उदय हो है ऐसा भावार्थ जानना ॥ ३९२ ॥

ऐसैस्थाए जु हरि क्षेत्र निषध पर्वतके चाप तिनका कह्या करनां सो कहै हैं—

> हरिगिरिधणुसेसद्धं पासभुजो सत्तमगतिदेमीदी ॥
> हरिवस्से णिसहधणू अडछस्सगतीसबारं च ॥ ३९३ ॥
> हरिगिरिधनुः शेषार्धं पार्श्वभुजः सप्तमतत्रिःयशीतिः ॥
> हरिवर्षे निषधधनुः अष्टषट्सप्तत्रिंशद् द्वादश च ॥ ३९३ ॥

अर्थः—निषधपर्वतका चापविषैं हरिक्षेत्रका चाप घटाई ताका आधा करिए इतना निषध पर्वतकी पार्श्व भुजा है। दक्षिण तटतैं उत्तर तटपर्यंत चापका जो प्रमाण ताका नाम इहां पार्श्व भुजा जाननां। तहां निषध पर्वतका धनुः १२३७६८ । $\frac{१८}{१९}$ विषैं हरिक्षेत्रका धनुः ८३३७७ । $\frac{९}{१९}$ घटाइए तब अब शेष चालीस हजार तीनसै इक्याणवै योजन अर नव उगणीसवां भाग प्रमाण होइ ४०३९१ । $\frac{९}{१९}$ याका आधा करना तहां योजन प्रमाणमैंस्यौं एक घटाइ आधा करिए तब बीस हजार एक सौ विच्याणवै योजन होइ। बहुरि जो एक घटाया था

ताका आधा $\frac{१}{२}$ अर नव उगणीसवां भागका आधा $\frac{९}{१९।२}$ इनकौं सम-च्छेद करि जोडें २८ दोयका अपवर्तन किएं चौदह उगणीसवां भाग भए। सो याकौं किछू घाटि एक योजन मानि जोडैं किछू घाटि वीस हजार एकसौ छिनवै योजन प्रमाण निषध पर्वतकी पार्श्व भुजा हो है। सो इहां पार्श्वभुजाविषैं उत्तर तटतैं चौदह हजार छसै इकईस योजन उरें यावत् सूर्य है तावत् भरतक्षेत्रवाले वासीनीकौं दीसै पीछै न दीसैं तातैं पार्श्व भुजाविषैं इतना घटाइ अव शेष किछू घाटि पचावनसैं पिचहत्तरि योजन दक्षिण तटतैं निषधकै उपरि चार विषैं परैं जाइ सूर्य अस्त होहै ऐसा भावार्थ जांनना

अब हरिक्षेके निषध पर्वतके धनुषके सिद्ध भए अंक कहे हैं। तहां सातसात तीन तियासी इन अंकनके क्रमकरि ८३३७७ तियासी हजार तीनसै सतहत्तरि योजन तौ हरि बर्षका धनुः है। बहुरि आठ छह सैंतीस बारा इन इन अंकनिके क्रमकरि १२३७६८ एक लाख तेईस हजार सातसै अडसठि योजनका निषधका धनुष है॥ ३९३॥

आगैं कहे जु दोऊनिकै धनुषका प्रमाण तहां अब शेष अधिकका प्रमाण वा पार्श्वभुजाके अंक तिनकौं कहे हैं—

> माहवचंदुद्धरिया णवयकला ण य पद्प्पमाणगुणा ॥
> पासभुजो चोद्दसकदि वीससहस्सं च देसूणा ॥ ३९४ ॥
> माधवचंद्रोद्धृता नवककला नयपदप्रमाणगुणाः ॥
> पार्श्वभुजः चतुर्दशकृतिः विंशसहस्रं च देशोनानि ॥३९४॥

अर्थ—इहां पदार्थ नामकी संज्ञाकरि अंक कहे हैं सो माधवचंद्र कहिए उगणीस जातैं माधव जो नारायण सो नव है। अदृश्यमान चंद्र एक है। इन दोऊ अंकनिकरि उगणीस भए तिनकरि उद्धृत नवकला॥

भावार्थ—एक योजनकों उगणीसका भाग दीजिए। तहां नवभाग प्रमाण तौं हरि क्षेत्रका चापका प्रमाण पूर्वं कह्या तामैं अवशेष अधिक जानना।

बहुरि इहां नयस्थान कहिए नय नव हैं तातैं नवकी जायगा नव ताकौं प्रमाण कहिए प्रमाणका भेद दोय हैं सो दोयकरि गुणिए तब एक योजनका उगणीस भागविषैं अठारह भाग प्रमाण होइ। सो इतना निषध पर्वतका चापका प्रमाण पूर्वं योजनरूप कह्या तामैं इतना अवशेष अधिक जानना। बहुरि निषध पर्वतकी पार्श्वभुजा चौदहकी छती एकसौ छिनवै तिहकरि अधिक बीस हजार योजन २०१९६ प्रमाण है॥३९४

आगैं अयनविषैं विभागकौं न करि सामान्यपनैं चार क्षेत्र विषैं उदय प्रमाणका प्रतिपादनके अर्थि यहु सूत्र कहैं हैं—

> दिणगदिमाणं उदयो ते णिसहे णीलगे य तेसट्ठी ॥
> हरिरम्मगेसु दो दो सूरे णवदससयं लवणे ॥ ३९५ ॥
> दिनगतिमानं उदयः ते निषधे नीलके च त्रिषष्ठिः ॥
> हरिरम्यकयोः द्वौ द्वौ सूर्ये नवदशशतं लवणे ॥ ३९५ ॥

अर्थ—एक दिन विषैं चार क्षेत्रका व्यास विषैं सूर्यका गमनका प्रमाण एक सौ सत्तरिका इकसठिवां भाग प्रमाण कह्या था सो इतना दिन गति क्षेत्रविषैं जो एक उदय होइ तौ चारक्षेत्रका पांचसै दशयोजनविषैं केते उदय होइ। ऐसैं किएं लब्ध प्रमाण एकसै तियासी उदय आए।

बहुरि पर्यंत विषैं चारक्षेत्रविषैं अवशेष सूर्य बिंब करि रोक्याहुवा आठतालीस इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र तिहविषैं एक उदय है ऐसैं मिलि एकसौ चौरासी उदय हैं। जातैं एक एक वीथी प्रति एक एक उदय संभवै है। तहां निषध नीलविषैं प्रत्येक तरेसठि अर हरिरम्यक क्षेत्रविषैं दोय दोय अर लवण समुद्रविषैं एकसौ उगणीस उदय हैं।

भावार्थ—समस्त चारक्षेत्रविषैं सूर्यका उदय एकसौ चौरासी होहै। तहां भरत अपेक्षा तरेसठि तौ निषधपर्वतविषैं होय हरिक्षेत्रविषैं एकसौ उगणीस लवण समुद्रविषैं उदय स्थान है। अभ्यंतर वीथीतैं लगाय तेरसठिवीं वीथी पर्यंतविषैं तिष्ठता सूर्यनै निषध पर्वतकै ऊपरि उदय होहै। भरत क्षेत्रके वासीनिकरि देखिए हैं। बहुरि चौसठि पैंसठिवीं वीथी विषैं तिष्ठता सूर्य हरिक्षेत्र ऊपरि उदय होहै। बहुरि छयासठिवीतैं लगाय अंत पर्यंत वीथीविषैं तिष्ठता सूर्य लावण समुद्रकै ऊपरि उदय होहै। ऐसैंही ऐरावत अपेक्षा तरेसठि नील पर्वतविषैं दोय रम्यक क्षेत्रविषैं एकसौ उगणीस लवण समुद्रविषैं उदयस्थान जाननैं॥ ३९५ ॥

आगैं दक्षिणायविषैं चार क्षेत्रका द्वीप वेदिका समुद्रका विभागकरि उदय प्रमाणका प्ररूपणकै अर्थी त्रैराशिककी उत्पत्ति कहै हैं—

> दीऊवहिचारखित्ते वेदीए दिणगदीहिदे उदया ॥
> दीवे चउ चंदस्स य लवणसमुद्दम्हि दस उदया ॥ ३९६ ॥
> द्वीपोदधिचारक्षेत्रे वेद्यां दिनगतिहिते उदयाः ॥
> द्वीपे चतुः चंद्रस्य च लवणसमुद्रे दश उदयाः ॥ ३९६ ॥

अर्थः—द्वीपसमुद्र संबंधी चारक्षेत्र अर वेदी इनकौं दिनगति प्रमाका भाग दिए उदयनिका प्रमाण होहै। भावार्थः—चार क्षेत्रका व्यासविषैं वीथीनिविषैं सूर्यका जहां जहां जितने उदय पाइये है सो कहिए हैं। तहां जंबू द्वीप संबधी चार क्षेत्र एकसौ योजनमैंस्यौं जंबूद्वीपकी वेदीका व्यास चार योजन है सो दूरि किएं द्वीप चारक्षेत्र एकसौ छिहत्तरि योजन है।

बहुरि च्यारि योजन वेदी ऊपरि चारक्षेत्र हैं। बहुरि तीनसैं तीस योजन अठतालीस इकसठिवां भाग प्रमाण लवण समुद्र ऊपरि चारक्षेत्र हैं इनकौं दिन गतिका प्रमाण एकसौ सतरिका एकसठिवां भाग प-

भाग ताका भाग दिएं जितनां जितनां प्रमाण आवै तितनां उदय जाननें सो कहिए है । दिन गतिका प्रमाण एकसौ सत्तरिका इकसठिवां भाग $\frac{१७०}{६१}$ सो इतना क्षेत्रविषै एक उदय होय तौ वेदिका रहित द्वीप चार क्षेत्रविषैं केते उदय होहिं ऐसैं त्रैराशिक किएं तरेसठि उदय पाए । तिनविषैं अभ्यंतर वीथीका उदय पूर्वगत उत्तरायणविषैं गिनिए हैं तातैं बासठि उदय भए अर अवशेष छवीस एकसौ सत्तरिवां भाग प्रमाण उदयके अंश रहे । इहां द्वीप संबंधी अंतका सूर्य नर्यविषैं अंतरालपर्यंत आए ।

बहुरि अब शेष छवीस एकसौ सततरिवां भाग उदय अंश रहे थे तिनका योजन अंशरूप क्षेत्र करिये हैं । एक उदयका एकसौ सत्तरि योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र होइ तौ छवीस एकसौ सत्तरिवां भाग प्रमाण उदय अंशनिका केता क्षेत्र होइ । ऐसैं त्रैराशिककरि फल राशिकौं गुणें छवीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र भया । ए द्वीप संबंधी योजन अंश आगले बिंबकरि रोक्या हुआ क्षेत्रविषैं देना ।

बहुरि एकसौ सत्तरिका इकसठिवां भागविषै एक उदय होय तौ च्यारि योजन प्रमाण वेदिका क्षेत्रविषैं केता उदय होइ ऐसैं त्रैराशिक करि भागहारका भागहार इकसठिकरि च्यारिकौं गुणें दोयसैं चवालीस भए । इनकौं एकसौ सत्तरि भागहारका भाग दिएं एक उदय पाया अवशेष चहौत्तरिका एकसौ सत्तरिवां भाग प्रमाण उदय अंश रहे । इनकौं पूर्वोक्त न्यायकरि क्षेत्ररूप किए चहौत्तरि योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र भया इसविषैं बाईस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र मिहि पूर्वोक्त द्वीपका अंत अवशेष क्षेत्र छब्बीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण तिहविषैं मिलाएं । अठतालीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण सूर्यबिंबकरि रोक्या हुवा क्षेत्र संपूर्ण होहै ।

ऐसैं अभ्यंतर वीथी स्थित सूर्य बिंबतैं चौसठि वीथी स्थित सूर्यबिंबका व्यास छत्तीस इकसठिवां भाग तौ द्वीप चार क्षेत्रके अर बाईस इकसठिवां भाग वेदिका चार क्षेत्रको मिलिकरि सिद्ध होहै। इहां चौसठिवीं वीथी द्वीप अर वेदिकाकी संधिविषैं है ऐसा तात्पर्य जाननां। ताके आगै दोय योजनका अंतराल है, ताके आगैं सूर्यकरि रोक्या हुवा अठतालीस इकसठिवा भाग प्रमाण क्षेत्र है। तातैं परैं बावन योजनका इकसठिवा भाग प्रमाण क्षेत्र रह्या सो आगिला दोय योजनका अंतरालविषैं देना।

ऐसैं द्वीप वेदिका संधिविषैं प्राप्त जो सूर्य बिंबका व्यास ताकौ प्राप्त भया बाईस योजनका इकसठिवा भाग प्रमाण क्षेत्र तिहिस्यौं लगाइ वेदीकाका च्यारि योजन प्रमाण क्षेत्र समाप्त भया -बहुरि लवण समुद्र-विषै एक सौ सतरिका इकसठिवां भागविषैं एक उदय होइ तौ बिंब रहित समुद्र चार क्षेत्र तीनसै योजन तिहविषैं केते उदय होई ऐसैं त्रैराशिककरि पाए उदय एकसौ अठारह। बहुरि अवशेष उदय अंश सतरि एकसौ सतरिवां भाग प्रमाण इनका पूर्वोक्त प्रकार क्षेत्र किए सतरि योजनका इकसठिवा भाग प्रमाण क्षेत्र भया। इनिकौ वेदीका संबंधी अतरालविषैं प्राप्त बावन योजनका इकसठिवा भाग मिलाएं भागहार इकसठिका भाग दिए दोय योजन प्रमाण अंतराल संपूर्ण हो है।

बहुरि यातैं परैं रविबिंब सहित अंतर प्रमाणरूप दिनगति शलाका अंतका अंतराल पर्यंत एक सौ अठारह है ते सुगम है। तहां उदय भी एकसौ अठारह है। तातैं परैं बाह्य वीथीविषै तिष्ठता सूर्य बिंबका व्यासविषैं एक उदय है। ऐसैं सर्वमिलि लवण समुद्रविषैं एकसौ उगणीस उदय है। ऐसैं दक्षायण विषैं एकसौ तियासी उदय जाननें। इहा ऐसा भावार्थ जाननां—वीथी विषैं तिष्ठता हुवा सूर्यका बिंब प्रमाण जो क्षेत्र ताका नाम प्रक्षपथव्यास है सो अठताईस योजनका

इकसठिवाँ भाग प्रमाण है। अर वीथी वीथनिकै वीचि जितनां चार क्षेत्र विषैं अंतराल ताका नाम अंतर है सो दोय योजन प्रमाण है। तहां एकसौ छिहत्तरि योजन प्रमाण द्वीप संबंधी चार क्षेत्र विषैं प्रथम अभ्यंतर पथव्यास है ताकै आगैं प्रथम अतराल है। ताकै आगैं दूसरा पथव्यास है। ताकै आगैं दूसरा अंतराल है।

ऐसैंही क्रमतैं अतविषैं तेरसठिवा पथव्यास अर ताके आगैं तेरसठिवां अंतराल हो है। अर ताकै आगैं छब्बीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रह्या। बहुरि च्यारि योजन प्रमाण वेदिका सबंधी चार क्षेत्र है तामैं बाईस योजन इक-सठिवां भाग काढि तिस द्वीप संबधी अवशेष क्षेत्रविषैं जोड़ैं चौसठिवां पथव्यास हो है। चौसठिवीं वीथी द्वीप अर वेदिकाकी संधिविषैं है। बहुरि तिस पथव्यासकै आगै चौसठिवां अंतराल है ताके आगैं बावन योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्रवेदिका चार क्षेत्रविषै अवशेष रह्या बहुरि पथव्यास रहित समुद्र चार क्षेत्र तीनसै तीस योजन प्रमाण है। तामैं सत्तरि योजनका इकसठिवां भाग काढि वेदिका अवशेष क्षेत्र विषैं जे हैं पैंसठिवां अंतराल हो है। ताकैं आगैं पथव्यास है ताकै आगे अतर है।

ऐसैं ही क्रमतैं अंतविषैं एकसौ तियासीवां अतराल हो है। बहुरि ताकै आगैं पथव्यास प्रमाण अवशेष समुद्र चार क्षेत्रविषैं एकसौ चौरासीवां पथव्यास है। बहुरि इहां जहा पथ व्यास है तहा वीथी जाननी। एक एक वीथीविषै प्राप्त होइ सूर्यका दृष्टिविषैं आवनां ताका नाम उदय जाननां। ऐसैं एकसौ चौरासी वीथीनिविषैं एकसौ चौरासी उदय भए। तहां उत्तरायणमैंस्यौं आवता आवता सूर्य अभ्यंतर वीथीविषैं आवै सो वह उत्तरायणविषैं गिनि गिनि लिया अर रगता ही दूसरी-बार तहां उदय होइ नाहीं तातैं दक्षिणायनविषैं नाहीं गिना ऐसैं करि एकसौ तियासी उदय जानैं।

आगे उत्तरायणविषैं कहै हैं.—

लवण समुद्रविषैं रवि बिंबसहित चार क्षेत्र तीनसै तीस योजन अर अडतालीस इकसठिवां भाग प्रमाण है ताका समच्छेद करि जोडे बीस हजार एक सौ अठहत्तरिका इकसठिवां भाग प्रमाण होइ $\frac{20178}{61}$ बहुरि एक सौ सत्तरिका इकसठिवां भाग क्षेत्रकी एक दिनगति शलाका होई तौ बीस हजार एकसौ अठहत्तरिका इकसठिवां भागकी केती होइ ऐसैं त्रैराशिक किएं एक सौ अठारह दिनगति शलाका होइ। अर एकसौ सत्तरिवां भाग अवशेष रहैं इहां एक घाटि दिनगति शलाका प्रमाण उदय एक सौ सत्तरह है। काहेतै ? जातैं बाह्य पथ संबंधी उदय दक्षिणायन संबंधी है सो इहां न गिन्यां।

बहुरि अवशेष एकसौ अठारहका एकसौ सत्तरिवां भाग प्रमाण उदय अशनिका पूर्वोक्त प्रकार क्षेत्र किएं एक सौ अठारह योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रह्या, तिस विषै अठतालीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण तौ आगिला पथव्यासविषैं देना, तहां पथव्यासविषैं एक उदय है। अर पूर्वै एकसौ सतरह उदय मिलि उत्तरायणविषैं समस्त उदय लवणसमुद्रविषैं एक सौ अठारह हो है।

बहुरि अवशेष सत्तरि योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्रलवण समुद्रविषैं रह्या सो अगिला अतंविषैं दैनां ऐसैं समुद्र चार क्षेत्र समाप्त भया। बहुरि च्यारि योजन प्रमाण वेदिका क्षेत्रविषै पूर्वोक्त प्रकार त्रैराशिककरि स्थाय एक उदय हो है। और अवशेष चहौत्तरि योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र रहै है। तिहविषैं बावन योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्रकौं समुद्रका अवशेष क्षेत्रविषैं मिलाए दोय योजन प्रमाण अंतर संपूर्ण हो है। इस अंतरातैं आगैं एक दिनगति

विषैं एक उदय होइ आगैं अवशेष बाईस योजनका इकसठिवां भाग रह्या सो अगिला पथव्यास विषै देनां ।

ऐसैं च्यारि योजन प्रमाण वेदिका क्षेत्रभी सम स भया आगैं वेदिका रहित द्वीप चार क्षेत्र एक सौ छिहंत्तर योजन प्रमाण तामैं अभ्यंतर पथव्यास अठतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण समछेद करि घटाएं दश हजार छसै अठ्यासीका इकसठिवां भाग प्रमाण होइ $\frac{१०६८८}{६१}$ बहुरि एक सौ सत्तरिका इकसठिवां भाग क्षेत्रकी एक दिनगति शलाका होइ तौ दश हजार छसै अठयासीका इकसठिवां भागकी केती दिनगति शलाका होइ ऐसैं त्रैराशिक किए बासठि दिनगति शलाका पावै सो इतनाही उदय जाननां ।

अब अवशेष एकसौ अठतालीसका एकसौ सत्तरिवां भाग प्रमाण उदय अंश रहैं । इनका पूर्वोक्त प्रकार क्षेत्र किए एकसौ अठतालीस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण होइ तीहविषैं छबीस योजनका इकसठिवां भाग मात्र क्षेत्र तौ वेदिका अर द्वीपकी संधिविषैं पथव्यास है तहां देनां तब सा पथव्यास संपूर्ण होइ अवशेष एकसौ बाईसका इकसठिवां भागहार करि भाजिए तब दोय योजन पाए सो संधि पथव्यासकै आगै अंतरालविषैं देना । बहुरि तातैं परैं बासठि दिनगति शलाका हैं तहां तितनैं ही उदय है ।

आगैं अभ्यंतर पथव्यासविषैं एक एक उदय है ऐसैं वेदिका रहित द्वीप चार क्षेत्रविषैं संधि उदयसहित चौसठि उदय हो है । ऐसैं मिलिकरि उत्तरायणविषैं सूर्यकै एकसौ तियासी उदय जाननें । इहां ऐसा भावार्थ जाननां । अंतरका वा पथव्यासका स्वरूप प्रमाण पूर्वे कह्या था तहां लवण समुद्रका चार क्षेत्रविषैं प्रथम पथव्यास है । आगैं अंतराल है ताकै आगैं अंतराल है ताकै आगैं पथव्यास है । ऐसै ही क्रमतैं एकसौ

अठारहवां अंतरालकै आगैं एकसौ उगणीसवां पथव्यास है अवशेष सत्तरि योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र रहै है । बहुरि वेदिकाका चार क्षेत्रविषैं बावन योजनका इकसठिवां भाग ग्रहि तामैं मिलाएं समुद्र वेदिकाकी संधिविषैं एकसौ उगणीसवां अंतराल हो है, ताके आगैं एकसौ वीसवां पथव्यास है।

आगैं एकसौ वीसवां अंतराल है ताकै आगैं बाईस योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रहै हैं । बहुरि द्वीपचार क्षेत्रविषैं छव्वीस योजनका इकसठिवां भाग ग्रहि तामैं मिलाएं एकसौ इकईसवां पथव्यास होहै । ताकै आगैं एकसौ इकइसवां अंतर है ऐसैं क्रमतें अंतविषैं एकसौ तियासीवां अंतरकै आगैं एकसौ चौरासीवां पथव्यास है तहां एकसौ चौरासी पथव्यास प्रमाण उदयनिविषैं बाह्य वीथीका उदय पूर्वदक्षिणायणविषैं गिनिए हैं । अर लगता तहां उदय न होहै तातैं समुद्रका आदि उदय घटाए उत्तरायणविषैं सूर्यके उदय एकसौ तियासी ऐसैं जाननें ।

उदयादिकका स्वरूप पूर्वोक्त कह्या ही था । बहुरि चंद्रमाका भी अयन भेद किए बिना द्वीपचार क्षेत्र १८० विषैं पांच उदय अर समुद्र चारक्षेत्र ३३० $\frac{४८}{६१}$ विषैं दश उदय हैं मिलिकरि पंद्रह उदय होहैं । आगैं दक्षिणायणविषैं कहै हैं । अथवा "रापिंडहीणे" इत्यादि पूर्वोक्त सूत्रकरि चंद्रमाका दिनगति क्षेत्र पंद्रह हजार पांचसै इकावन योजनका च्यारिसैं सत्ताईसवां भाग प्रमाण है सो इतना $\frac{१५५१}{४२७}$ क्षेत्रविषैं जो एक उदय होय तौ एक सौ असी योजन प्रमाण द्वीप चार क्षेत्रविषैं कितने उदय होहि ऐसैं त्रैराशिक किएं चारि उदय पाए।

बहुरि अवशेष चौदह हजार छसै छप्पनका पंद्रह हजार पांचसै इकावनवां भाग प्रमाण उदय अंश रहै। बहुरि एक उदयका पंद्रह हजार पांचसै इकावनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र होइ चौदह हजार छसै छप्पनका पंद्रह हजार पांचसै इकावनवां भाग प्रमाण उदय अंशनिका केता क्षेत्र होइ ऐसें त्रैराशिक करि तिर्यंच फलराशिके भाज्य करि इच्छा राशिके भागका अपवर्तन किएं चौदह हजार छसै छप्पन योजनका च्यारिसैं सत्ताइसवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रह्या।

बहुरि चंद्रमाका पथव्यासका प्रमाण छप्पन योजनका इकसठिवां भाग ताका सात करि समच्छेद किए तीनसै बाणवै योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण भया सो इतनां तिस अवशेष क्षेत्रविषैं अहि अगिला पथव्यासविषैं दैनां। तहां उदय एक, ऐसें जंबूद्वीपविषैं पांचसै उदय हैं तिनविषैं अभ्यंतर पथका उदय उत्तरायण संबंधी है तातैं ताका न ग्रहण करनेतें द्वीपविषैं च्यारि उदय हैं। द्वीप चार क्षेत्रविषैं अवशेष चौदह हजार दोयसै चौसठिका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र रह्या। सो यहु भागाहारका भाग दिएं तेतीस योजनें अर एकसौ सहे-त्तरिका च्यारिसै सत्ताईसवां भागप्रमाण क्षेत्र है। सो याकौं आगले अंत-रालविषैं दैनां।

आगैं समुद्रविषैं चार क्षेत्र तीनसै तीस योजन अर अडतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण है। ताका समच्छेदकरि मिलाएं बीस हजार एकसौ अठहत्तरिका इकसठिवां भाग प्रमाण भया। सो पंद्रह हजार पांचसै इकावन योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्रविषैं एक उदय होइ तौ बीस हजार एकसौ अठहत्तरिका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र-विषैं कितने उदय होहिं।

ऐसें त्रैराशिक किएं इकसठिकरि अपवर्तनकरि सातकरि गुणें लब्धराशि एक लाख इकतालीस हजार दोयसै छियालीसका पंद्रह हजार

पांचसै इकावनवां भाग प्रमाण आया सो भागहारका भाग दिए नव उदय पाए अर अब शेष बारहसै सत्यासीका पंद्रह हजार पांचसै इकावनवां भाग प्रमाण उदय अंश रहे इनका पूर्वोक्तप्रकार क्षेत्रकिएं बारहसै सित्यासी योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रह्या।

यामैं सौ चंद्रबिंबका प्रमाण छप्पन योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण ताकों सातकरि समच्छेद किएं तीनसै बाणवैका च्यारिसै सत्ताइसवां भाग प्रमाण महि करि बाह्य पथविषैं देना। तहां एक उदय ऐसैं लवण समुद्रविषै दश उदय हैं। बहुरि अवशेष आठसै चिच्याणवै योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र रह्या सो अपनां भागहारका भाग दिएं दोय योजन अर इकतालीसका च्यारिसै सत्ताइसवां भाग प्रमाण क्षेत्र भया सो याकों द्वीपविषैं अवशेष तेतीस योजन अर एकसौ तहेत्तरिका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्रविषैं जोडैं पैंतीस योजन अर दोयसै चौदहका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण पांचवां अंतराल संपूर्ण हो है। ऐसैं चंद्रमाका दक्षिणायनविषै द्वीप समुद्रका मिलि चौदह उदय हो है।

इहां ऐसा भावार्थ जाननां—चंद्रमाका चार क्षेत्रविषैं पंद्रह वीथी है तिनविषैं चंद्रमाका दृष्टिविषैं आवना सोई उदय है। तहां वीथीनि. विषैं जहां चंद्रबिंब छप्पन योजनका इकसठिवां भाग प्रमाण क्षेत्र रोकै ताका नाम पथव्यास है। बहुरि वीथीनिके वीचि वीचि पैंतीस योजन अर दोयसै चौदहका च्यारिसै सत्ताईसवां भागप्रमाण जो अंतराल ताका नाम अंतर है। दोऊनिकों मिलाएं पंद्रह हजार पांचसै इकावनका च्यारिसै सत्ताइसवां भाग प्रमाण दिनगति क्षेत्र होहै। तहां द्वीप संबंधी एकसौ असी योजन प्रमाण चार क्षेत्रविषैं प्रथम अभ्यंतर वीथी है तहां पथव्यास प्रमाण क्षेत्र है। ताके आगैं प्रथम अंतर है ताके आगैं दूसरा पथव्यास है। ऐसैं क्रमतैं चौथा अंतरके आगैं पांचवां पथव्यास है ताके आगैं

द्वीप चार क्षेत्रविर्षे तेतीस योजन अर एकसौ तईचरिका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रहे हैं।

बहुरि लवण समुद्रका चार क्षेत्र तीनसै तीस योजन अर अठतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण तिहविर्षे दोय योजन अर दोयसै चौदहका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र द्वीप अवशेष क्षेत्रविर्षे जोडै। द्वीप अर समुद्रकी संधिविर्षे पांचवां अंतराल होहै। ताकै आगै छठा पथव्यास है। ताके आगैं छठा अंतराल है। ऐसे क्रमतें अंतविर्षे चौदहवां अंतरालके आगै पंद्रहवां बाह्य पथव्यास है। इन पंद्रह पथव्यासनिविर्षे जे पंद्रह उदय तिनविर्षे द्वीपचार क्षेत्रविर्षे पहला अभ्यंतर वीथीका उदय उत्तरायण संबंधी है। तातैं चंद्रमाके दक्षिणायनविर्षे ऐसें चौदह उदय जानने।

आगैं उत्तरायणविर्षे ऐसें कहै हैं। समुद्रका चार क्षेत्र तीनसैतीस योजन अर अठतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण है। तहां पूर्वोक्त प्रकारकरि इयएं नव उदय आए। अर अवशेष उदय असे बारहसै सित्यासीका पंद्रह हजार पांचसै इकावनवां भागप्रमाण रहे इनका पूर्वोक्त प्रकार क्षेत्र किए बारहसै सित्यासी योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण हो है। बहुरि यामैं चन्द्रबिंबका प्रमाण छप्पन योजनका इकसठिवां भाग मात्र ताका सातकरि समच्छेदकिएं तीनसैं बाणवैका च्यारिसै सत्ताईसवां भागप्रमाण हीकौ अधिककरि बाह्य पर्यंतै लगाय नवमां अंतरालकै आगैं जो पथव्यास तामैं देना वा तहां एक उदय ऐसे समुद्रविर्षे दस उदय भए इनविर्षे बाह्य पथका उदय दक्षिणायन संबंधी है। तातैं ताका ग्रहण न करना ऐसे नव उदय रहे, बहुरि समुद्र चार क्षेत्रविर्षे अवशेष दोय योजन अर इकतालीसका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र रह्या सो दशवां अंतरालविर्षे देना। ऐसे किएं समुद्रका चार क्षेत्र समाप्त भया।

आगैं द्वीप चार क्षेत्रविषैं पूर्वोक्तपनका पंद्रह हजार पांचसै इकावनवां भाग प्रमाण उदय अंश रहे इनका पूर्वोक्त प्रकार क्षेत्र किएं चौदह हजार छसै छप्पनका च्यारिसै सत्ताईस योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण होइ याने पचीस योजन अर एक सौ तहेत्तरिका च्यारिसै सत्ताईसवां भागका समच्छेद किएं चौदह हजार दोयसै चौसठिवां च्यारिसै सत्ताईसवां भाग होइ सो मिलिकरि दशवां अंतरालविषैं देना ऐसैं पैंतीसै योजन अर दोयसै चौदहका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण दशवां अंतराल संपूर्ण हो है।

बहुरि अवशेष तीनसै बाणवै योजनका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण रह्या। ताकौं सातकरि अपवर्तन किए छप्पनका इकसठिवां भाग प्रमाण होई सो यहु अभ्यंतर पथव्यासविषैं देना। इसविषैं चंद्रमाका उत्तरायणविषैं पांच उदय हैं। इहां ऐसा भावार्थ जाननां—चंद्रमाका पथव्यास अंतरादिकका स्वरूप प्रमाण तौ पूर्वोक्त जाननां। तहां लवण समुद्रका अर क्षेत्रविषैं प्रथम बाह्य पथव्यास है। ताकै अभ्यंतरवर्ती आगैं आगैं प्रथम अंतर है। ताकै आगैं द्वितीय पथव्यास है ताकै आगैं द्वितीय अंतर है। ऐसे क्रमतैं नवमां अंतरकै आगैं दशवां पथव्यास है। ताकै आगैं दोय योजन अर इकताळीसका च्यारिसै सत्ताईसवां भाग प्रमाण क्षेत्र अवशेष रह्या। बहुरि आगैं द्वीप चार क्षेत्रविषैं तेतीस योजन अर एकसौ तहेत्तरिका च्यारिसै सत्ताइसवां भाग प्रमाण क्षेत्र मिलि अर समुद्रका अवशेष क्षेत्र मिलि दशवां अंतरालकौं किएं समुद्र अर द्वीपकी संधि विषैं दशवां अंतराल संपूर्ण हो है। ताकै आगैं ग्यारहवां पथव्यास है ताकै आगैं ग्यारहवां अंतराल है। ऐसैं क्रमतैं अंतविषैं चौदहवां अंतकै आगैं पंद्रहवां अभ्यंतर पथव्यास है।

ऐसैं इन पंद्रह पथव्यासनिविषैं पंद्रह उदय हैं। तिनिविषैं समुद्र संबंधी प्रथम व्यास विषैं जो उदय है सो दक्षिणायन संबंधी ही है।

जातैं लगता दूसरीबार तहाँ उदय न हो है तातैं चंद्रमाका उत्तरायणविषैं नव समुद्रविषैं पांच द्वीपविषैं ऐसे चौदह उदय जानने बहुरि इहां सूर्य व चंद्रमाका उत्तरायणविषैं उदयका विभाग मूलसूत्र कर्तानैं कह्या। तथापि दक्षिणायनका उदयमार्गकरि टीकाकार विचार करि कह्या है ॥ ३९६ ॥

अब दक्षिण उत्तर उर्ध्व अध विषैं सूर्यके आतापका क्षेत्र विभाग कहे हैं—

> मन्दरगिरिमज्झादो जावय लवणुवहि छट्ठभागो दु ॥
> हेट्ठा अट्ठारसमया उवरि सयजोयणा ताओ ॥ ३९७ ॥
> मंदरगिरिमध्यात् यावत् लवणोदधि षष्ठभागस्तु ॥
> अधस्तनो अष्टदशशतानि उपरि शतयोजनानि तापः।३९७।

अर्थ.—मेरुगिरिके मध्यतैं लगाय यावत् लवण समुद्रका छठ्ठा भाग पर्यंत सूर्यका आताप फैलै है। ताका उदाहरण अभ्यंतर वीथी विषैं तिष्ठता सूर्यकी अपेक्षा कहिए हैं। जंबू द्वीपका आधा क्षेत्र पचास हजार योजन तामैं द्वीप चार क्षेत्र एकसौ अस्सी घटाएं गुणचास हजार आठसै वीस योजन प्रमाण तौ मेरुगिरिके मध्यतैं लगाय अभ्यंतर वीथी पर्यंत उत्तर दिशाविषैं आताप फैलै है। बहुरि लवण समुद्रका व्यास दोय लाख योजन ताका छठ्ठा भाग तेतीस हजार तीन्सै तेतीस योजन अर एकका तीसरा भाग प्रमाण यामैं द्वीप चार क्षेत्र एक सौ अस्सी योजन मिलाएं तेतीस हजार पांचसै तेरह योजन अर एकका तीसरा भाग प्रमाण अभ्यंतर वीथीतैं लगाय लवण समुद्रका छठ्ठा भाग पर्यंत दक्षिण दिशा विषैं आताप फैलै है। बहुरि ऐसैं ही अन्य वीथीनिविषैं भी जानना। बहुरि सूर्य बिंबतैं नीचे अठारहसै योजन पर्यंत अधः दिशाविषैं आताप फैलै है।

भावार्थः—सूर्यबिंबतै नीचें आठसै योजन तौ समभूमि है अर तातैं नीचैं हजार योजन पर्यंत चित्राभूमी है तहां पर्यंत सूर्यका आताप फैलै है। बहुरि सूर्यबिंबतैं उपरि सौ योजन पर्यंत ऊर्ध्व दिशाविषैं आताप फैलै है। विशेषार्थः—सूर्यबिंबतैं ऊपरि सौ १०० योजन पर्यंत ज्योतिर्लोक है तहां पर्यंत सूर्यका आताप फैलै है। ऐसे परिधिविषैं तौ आताप फैलनेका प्रमाण पूर्वे कह्या था इहां दक्षिण उत्तर ऊर्ध्व अधः दिशाविषैं आताप फैलनेका प्रमाण कह्या ॥ ३९७ ॥

आगैं चंद्रमा सूर्य ग्रह इनकै नक्षत्रभुक्तिके प्रतिपादन करनेंकौं चाहता आचार्य सो प्रथम एक एक नक्षत्र संबंधी मर्यादारूप गगनखण्डनिकौं कहै हैं।—

अभिजिस्स गगणखण्डा छस्सयतीसं च अवरमज्झवरे ॥
छप्पण्णरसे छक्के इगिदुतिगुणपणजुतसहस्सा ॥ ३९८ ॥
अभिजितः गगनखण्डानि पट्शतत्रिंशत् च अवरमध्यवराणि ॥
पट् पंचदशे पट्के एक द्वित्रिगुणपंचयुतसहस्राणि ॥३९८॥

अर्थः—अभिजित नक्षत्रके गगनखंड छसै तीस हैं। बहुरि जघन्य मध्य उत्कृष्ट नक्षत्र क्रमतैं छह प्रमाणकौं धरैं तिनकै एक दोय तीन गुणां पांच संयुक्त एक हजार प्रमाण गगनखण्ड हैं।

भावार्थः—परिधिरूप जो गगन कहिए आकाश ताके एक लाख नव हजार आठसै खण्ड करिए तामैं एक चंद्रमा संबंधी अभिजित नक्षत्रके छसै तीस गगनखण्ड है। छसै तीस खण्ड प्रमाण परिधिरूप आकाश क्षेत्रविषैं अभिजित नक्षत्रकी सीमा मर्यादा है। बहुरि ऐसैं ही छह जघन्य नक्षत्र तिन एक एकके एक हजार पांच गगनखण्ड हैं। बहुरि पंद्रह मध्य नक्षत्र तिन एक एकके दोय हजार दश गगनखण्ड हैं। बहुरि छह उत्कृष्ट नक्षत्र तिन एक एकके तीन हजार पंद्रह गगनखण्ड है। बहुरि छह उत्कृष्ट नक्षत्र तिन एक एकके तीन हजार पंद्रह

गगन खण्ड हैं। बहुरि इतनें इतनें ही दूसरा चंद्रमा संबंधी है। यहां नक्षत्रनिके जघन्य मध्य उत्कृष्टपना गगनखण्डनिका थोडा बहुत अति बहुतकी अपेक्षा कह्या है स्वरूपादिक अपेक्षा नाहीं कह्या है ॥३९८॥

आगैं तिन जघन्य मध्यम उत्कृष्ट नक्षत्रनिकौं दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

सदभिस भरणी अद्दा सादी असिलेस्स जेट्ठ मवरवरा ॥
रोहिणि विसाह पुणव्वसु तिउत्तरा मज्झिमा सेसा ॥ ३९९ ॥
शतभिषा भरणी आर्द्रा स्वातिः आश्लेषा ज्येष्ठा अवराणि वराणि
रोहणी विशाखा पुनर्वसुः त्र्युत्तराः मध्यमा शेषाः ॥ ३९९ ॥

अर्थ—शतभिषक कहिये शतभिषा १, भरणी २, आर्द्रा ३, स्वाति ४, आश्लेषा ५, ज्येष्ठा ६, ए छह जघन्य नक्षत्र हैं। बहुरि रोहिणी १, विशाखा २, पुनर्वसु ३, उत्तरा कहिए उत्तरा फाल्गुनी ४ उत्तराषाढा ५, उत्तरा भाद्रपदा ६ ये छह उत्कृष्ट नक्षत्र हैं। बहुरि अवशेष नक्षत्र मध्यम हैं ॥ ३९९ ॥

ते अवशेष कौन सो कहे हैं।—

अस्सिणि कित्तिय मिगसिर पुस्स महा हत्थ चित्त अणुहारा ॥
पुव्वतिय मूलसवणा सघणिट्ठा रेवदी य मज्झिमया ॥ ४०० ॥
अश्विनी कृत्तिका मृगशीर्षा पुष्यः मघा हस्तः चित्रा अनुराधा ॥
पूर्वत्रिका मूलं श्रवणे सधनिष्ठा रेवती च मध्यमाः ॥ ४०० ॥

अर्थः—अश्विनी १, कृत्तिका २, मृगशीर्षा ३, पुष्य ४, मघा ५, हस्त ६, चित्रा ७, अनुराधा ८, पूर्वत्रिका कहिए पूर्वा फाल्गुनी ९, पूर्वाषाढा १०, पूर्वाभद्रपदा ११, मूल १२, श्रवण १३, धनिष्ठा १४, रेवती १५ ए पंद्रह मध्यम नक्षत्र हैं ॥ ४०० ॥

आगे कहे जु ए गगनखण्ड तिनकों इकठेकरि चंद्रमा सूर्य नक्षत्रनिकी परिधिविर्षे भ्रमण कालका प्रमाण कहैं हैं।—

दो चंद्राणं मिलिदे अट्ठसयं णवसहस्समिगिलक्खं ॥
सगसगमुहुत्तगदि णमखण्डहिदे परिधिगमुहुत्ता ॥ ४०१ ॥
द्वि चन्द्रयोः मिलिते अष्टशतं नवसहस्रं एकलक्षं ॥
स्वक स्वक मुहूर्तगति नभःखण्डहिते परिधिमुहूर्ताः ॥ ४०१ ॥

अर्थ.— दोय चंद्रमानिके मिलाए आठसै सहित नव हजार अधिक एक लाख गगनखण्ड हो हैं। कैसैं ? जघन्य मध्य उत्कृष्ट नक्षत्रनिका गगनखण्ड क्रमतैं एक हजार पांच दो हजार दश तीन हजार पंद्रह इनकों अपने नक्षत्र प्रमाण छह पंद्रह छहकरि गुणें जघन्य नक्षत्रनिके छह हजार तीस मध्य नक्षत्रनिके तीस हजार एकसौ पचास, उत्कृष्ट नक्षत्रनिके अठारह हजार निवै गगनखण्ड होहैं। ए खण्ड अर छसै तीस अभिजितके खण्ड मिलाएं चौवन हजार नवसै भए।

बहुरि एक परिधिविर्षे दोय चंद्रमा हैं। तातैं तिनकों दूणांकरि मिलाइए तब एक लाख नव हजार आठसै गगनखण्ड परिधिविर्षे हो हैं। बहुरि इन गगनखण्डनिकों अपना अपना एक मुहूर्तविर्षे गमनप्रमाण जे गगनखण्ड तिनका भाग दिएं परिधिविर्षे भ्रमण कालका प्रमाण आवै है। कैसैं सो कहिए है—

चंद्रमा सतरहसै अडसठि गगनखण्डनिविर्षे एक मुहूर्तकरि गमन करै तौ एक लाख नव हजार आठसै गगनखण्डनिविर्षे केते मुहूर्तनिकरि गमन करै ऐसैं त्रैराशिक किएं चंद्रमाका परिधिविर्षे भ्रमण करनेंका काल बासठि मुहूर्त आएं, अर एकसौ चौरासीका सतरहसै अडसठिवां भागका आठ करि अपवर्तन किए तेइस मुहूर्तका दोयसै इकईसवां भाग आया। बहुरि याही प्रकार सूर्य अठारहसै तीस गगनखण्डविर्षे एक

मुहूर्त करि गमन करै तौ एक लाख नव हजार आठसै गगनखण्डविषैं केते मुहूर्तनिकरि गमन करै ऐसैं त्रैराशिक किएं सूर्यका परिधिविषैं भ्रमण करनेका काल साठि मुहूर्त आवै है।

बहुरि नक्षत्र अठारहसै पैंतीस गगनखण्डनिविषैं एक मुहूर्तकरि गमन करै तौ एक लाख नव हजार आठसै गगनखण्डनिविषैं केते मुहूर्तनिकरि गमन करै ऐसैं त्रैराशिक किए नक्षत्रनिका परिधिविषैं भ्रमण करनेका काल गुणसठि तौ मुहूर्त आए अर अवशेष पंद्रहसैं पैंतीसका अठारहसैं पैंतीसवां भाग ताका पाचकरि अपवर्तन किए तीनसै सात मुहूर्तनिका तीनसैं सतसठिवां भाग आया। या प्रकार एक बार संपूर्ण एक परिधिविषैं भ्रमण करनेका काल प्रमाण कह्या ॥ ४०१ ॥

आगैं सो एक मुहूर्तकरि अपनां अपना गगनखण्डनिविषैं गमन करनेका प्रमाण कहा सो कहै हैं—

> अट्ठट्ठी सत्तरसयमिंदू चारठ्ठि पंचअहियकमं ॥
> गच्छंति सूररिक्खा णभखण्डाणिगिमुहुत्तेण ॥ ४०२ ॥
> अष्टषष्ठिः सप्तदशशतं इंदुः द्वाषष्ठिः पंचाधिकक्रमाणि ॥
> गच्छन्ति सूर्यऋक्षाणि नभःखंडानि एकमुहूर्तेन ॥४०२॥

अर्थ—अडसठि अधिक सतरहसै १७६८ गगनखण्डनिकौं चंद्रमा एक मुहूर्तकरि गमन करै है। बहुरि तिनतैं बासठि अधिक ताका अठारहसै तीस गगनखण्डनिकौं सूर्य अर तिनतैं पाच अधिक ताका अठारहसै पैंतीस गगनखण्डनिकौं नक्षत्र एक मुहूर्तकरि गमन करै है ॥४०२॥

आगैं चंद्रमादि तारापर्यंत ज्योतिषीनिकै गमन विशेषका स्वरूप कहै हैं—

चंदो मंदो गमणे सूरो सिग्घो तदो गहा तत्तो ॥
तत्तो रिक्खा सिग्घा सिग्घयरा तारया तत्तो ॥ ४०३ ॥
चंदो मंदो गमने सूरः शीघ्रः ततो ग्रहाः ततः ॥
ततः ऋक्षाणि शीघ्राणि शीघ्रतराः तारकाः ततः ॥४०३॥

अर्थ—सर्वतैं गमनविषैं चंद्रमा मंद हैं मंद गमन करै है। तातैं सूर्य शीघ्र गमन करै हैं। तातैं ग्रह शीघ्र गमन करै हैं, ग्रह तातैं नक्षत्र शीघ्र गमन करै हैं। तातैं अतिशीघ्र तारे गमन करै हैं। ४०३।

आगैं अब चंद्रमा सूर्यकै नक्षत्र भुक्तिकौं कहै हैं।—

इंदुरवीदो रिक्खा सत्तट्ठी पंच गगणखण्डहिया ॥
अहियहिद रिक्खखण्डा रिक्खे इंदुरवि अत्थणमुहुत्ता ।४०४
इंदुरवितः ऋक्षाणि सप्तषष्टिः पंच गगनखण्डाधिकानि ॥
अधिकहित ऋक्षखण्डानि ऋक्षे इंदुरविअस्तमनमुहूर्ताः ॥४००

अर्थ.—चंद्रमा सूर्यकै गगनखण्डनितैं क्रमतैं सडसठि अर पांच गगन खण्ड अधिक नक्षत्रनिकैं एक मुहुर्तकरि गमन अपेक्षा गगनखण्ड है। सो इस अधिकका भाग अपनें अपनें नक्षत्र खण्डनिकौं दिएं नक्षत्र अर चंद्र वा सूर्यका आसन्न मुहूर्तनिका प्रमाण आवै है सो कहिये हैं।—

एक ही वार चंद्रमा अर नक्षत्र साथि गमनका प्रारंभ किया तहां एक मुहूर्तविषैं चंद्रमा तौ सतरहसै अडसठि गगनखण्डनिप्रति गमन किया अर नक्षत्र अठारहसै पैंतीस गगन खण्डनि प्रति गमन किया। तहां चंद्रमा नक्षत्रतैं सतसठि गगनखण्ड पीछै रह्या। तहां अभिजित नक्षत्र अर चंद्रमा दोऊ साथि गमनका प्रारंभकरि एक मुहूर्तविषैं अभित- तैं चंद्रमा सदसठि गगनखण्ड पीछैं रह्या, बहुरि दूसरा मुहूर्तविषैं और सतसठि गगनखण्ड पीछैं रह्या। ऐसैं पीछैं रहता रहता जितनैं कालकरि छसै तीस अभिजितके सर्व खण्डनिको छोडि पीछैं रहै तितनां काल

अभिजित नक्षत्र अर चंद्रमाका आसन्न मुहूर्त कहिए । सो अडसठि अधिक खण्डनिके पीछैं छोडनेंमें एक एक मुहूर्त होइ तौ छसै तीस अभिजित खण्डनिके पीछैं छोडनेमें केते मुहूर्त होइ । ऐसैं त्रैराशिककरि अधिक प्रमाण सतसठिका भाग अपनें छसै तीस खण्डनिकों दिएं लब्धराशि नव मुहूर्त सत्ताईसका सतसठिवां भाग मात्र अभिजित अर चंद्रमाका आसन्न मुहूर्तका प्रमाण आया ।

इतनें काल चद्रमा अभिजित संबंधी गगनखण्डनिके निकटवर्ती रहै है । तातैं आसन्न मुहूर्त कहिए । बहुरि इस आसन्न मुहूर्त काल ही विर्षे नक्षत्रभुक्ति कहिए । यावत्काल चंद्रमा अभिजित संबंधी गगनखण्डनिके समीपवर्ती रहै तावत्काल चंद्रमाकै अभिजित नक्षत्रका भोगवना कहिए । बहुरि इसही कालविषैं योग कहिए यावत्काल चंद्रमा अर अभिजित संबंधी गगनखण्डनिका संयोग रहै तावत्काल चंद्रमा अर अभिजितका योग कहिए । बहुरि याही प्रकार अधिक प्रमाण सतसठिका भाग जघन्य मध्यम उत्कृष्ट नक्षत्रनिके क्रमतैं एक हजार पांच दोय हजार दस तीन हजार पंद्रह गगनखण्डनिकों दिएं जघन्य नक्षत्रनिका पंद्रह मुहूर्त मध्य नक्षत्रनिका तीस मुहूर्त उत्कृष्टनिका पैंतालीस मुहूर्त मात्र आसन्नमुहूर्त होहै ।

बहुरि तीस मुहूर्तका एक दिन होइ तौ पंद्रह आदि मुहूर्तनिका केता होइ ऐसैं करि पंद्रहका अपवर्तन किएं जघन्य नक्षत्रनिका आधा दिन $\frac{1}{2}$ मध्यम नक्षत्रनिका एक दिन उत्कृष्ट नक्षत्रनिका ड्योढ दिन $\frac{3}{2}$ प्रमाण चंद्रमाको नक्षत्रभुक्ति काल हो है । बहुरि याही प्रकार अधिक प्रमाण पांचका भाग अपनें अपनें नक्षत्र संबंधी गगनखण्डनिकों दिएं दिनादिक किएं सूर्यकै अभिजितका च्यारि दिन छह मुहूर्त जघन्य नक्षत्रका छह दिन इकईस मुहूर्त मध्यम नक्षत्रका तेरह दिन बारह मुहूर्त उत्कृष्ट नक्षत्रका बीस दिन तीन मुहूर्त प्रमाण नक्षत्रभुक्तिका काल जानना ॥ ४०४ ॥

आगैं राहुका गगनखण्ड कहिकरि ताके नक्षत्रभुक्ति कहे हैं—

> रविखण्डादो बारसभागूणं वज्जदे जदो राहू ॥
> तम्हा तत्तो रिक्खा बारहिहिदिगिसट्ठिखण्डहियो ॥ ४०५॥
> रविखण्डतः द्वादशभागोनं व्रजति यतो राहु ॥
> तस्मात्ततः ऋक्षाणि द्वादशहितैकषष्टिखण्डाधिकानि ॥४०५

अर्थः— जातैं सूर्यके खण्डनितै एकका बारहवां भाग घाटि राहु गमन करे है। सूर्यका अठारहसे तीस गगनखण्डनविषै एकका बारहवां भाग घटाए अठारहसै गुणतीस गगनखण्ड अर ग्यारहका बारहवां भाग माग राहुकैं एक मुहूर्त विषैं गमन करनेका प्रमाण हो है। इनतैं इकसठिका बारहवां भाग अधिक नक्षत्रनिकैं गमन करनेका प्रमाण हो है। कैसैं इतनां अधिक होहै? राहुका गगनखण्ड १८२९ $\frac{११}{१२}$ नक्षत्रका गगनखण्ड १८३५ मैंस्यौं घटाएं ग्यारहका बारहवां भाग घटाएं इकसठिका बारहवां भाग अधिकका प्रमाण हो है। बहुरि "अहियहिदरिक्खखंडे" इस सूत्रके न्यायकरि अधिकका भाग अपनें अपनें नक्षत्रखण्डनिकौं दीए राहुके नक्षत्र भुक्तिका काल आवै है।

तहां इकसठिका बारहवां भाग छोडनेंविषैं एक मुहूर्त होइ तौ छसै तीस अभिजित खण्डनिके छोडनेंविषैं केते मुहूर्त होइ ऐसैं छसै तीसकौं इकसठिका बारहवां भागका भाग देनां तहां भागहारका भागहार बारह ताकौं छसै तीसका गुणकारकरि ताकौं इकसठिका भाग देनां ६३० । $\frac{१२}{६१}$ बहुरि इनकौं तीस सहित छहकरि अपवर्तन करनां $\frac{१२६}{६१}$ । २ याकौं अपनें गुणकार करि गुणें २५२ भागहारका भाग दिएं च्यारि

दिन अर आठका इकसठिवां भाग प्रमाण राहुके अभिजित नक्षत्रका भुक्तिका काल है।

या ही प्रकार राहूके जघन्य नक्षत्रका छह दिन अर छचीसका इक-
सठिवां भाग मध्य नक्षत्रका तेरह दिन अर ग्यारहका इकसठिवां भाग उत्कृष्ट नक्षत्रका उगणीस दिन अर सैंतालीसका इकसठिवां भाग प्रमाण भुक्तिकाल जाननां ॥ ४०५ ॥

आगैं अन्य प्रकारकरि राहुके नक्षत्र भुक्तिकौं कहै हैं।—

णक्खत्त सूरजोगज मुहुत्तरासिं दुवेहि संगुणिय ॥
एकट्ठिहिदे दिवसा हवंति णक्खत्तराहुजोगस्स ॥ ४०६ ॥
नक्षत्र सूर्ययोगज मुहूर्तराशिं द्वाभ्यां संगुण्य ॥
एकषष्ठिहिते दिवसा भवंति नक्षत्रराहुयोगस्य ॥ ४०६ ॥

अर्थः—नक्षत्र अर सूर्यका योग करि उत्पन्न जो मुहूर्तनिका प्रमाणरूप राशि ताकौं दोय करि गुणि इकसठिका भाग दीएं जो प्रमाण आवै तितनैं नक्षत्र अर राहूके योगविषैं दिननिका प्रमाण जाननां। तहां सूर्यकै अभिजित नक्षत्रका भुक्तिकाल च्यारि दिन छह मुहूर्त है। दिननिकौं तीस गुणांकरि मुहूर्त किएं सर्व एकसौ छवीस मुहूर्त भए। इनकौं दोय करि गुणें दोयसै बावन भए। इनकौं इकसठिका भाग दिएं च्यारि अर आठका इकसठिवां भाग आया। सोई राहुकै अभि-जित नक्षत्रका भुक्तिकाल च्यारि दिन अर आठका इकसठीवां भाग प्रमाण है। ऐसैंही अन्य नक्षत्रनिका भी विधान करनां ॥ ४०६ ।

आगैं एक अयनविषैं नक्षत्र भुक्ति सहित वा रहित जे दिन तिनकौं कहै हैं—

अभिजादि तिसीदिसयं उत्तरअयणस्स होंति दिवसाणि ॥
अधिकदिणाणि तिणि य गददिवसा होंति इगि अयणे ॥४०७॥

अभिजिदादिच्यशीतिशतं उत्तरायणस्य भवंति दिवसानि ॥
अधिकदिनानां त्रीणि च गतदिवसानि भवंति एकस्मिन् अयने ॥

अर्थः—अभिजितकों आदि दै करि पुष्य पर्यंत जे जघन्य मध्य उत्कृष्ट नक्षत्र तिनके एकसौ तियासी दिन उत्तरायणके हो हैं। बहुरि इनतैं अधिक दिन तीन एक अयनविषैं गत दिवस हो हैं। ४०७।

आगैं अधिक दिननिकी उत्पत्ति कौं कहैं हैं—

एकपहलंघणपडि जदि दिवसिगिसट्ठिमागमुवलद्धं ॥
किं तेसीदिसदस्सिदि गुणिदि ते होंति अहियदिणा ।४०८।
एकपथलंघनप्रति यदि दिवसैकषष्ठिभागं उपलब्धं ॥
किं त्र्यशीतिशतस्येति गुणिते ते भवंति अधिक दिनानि ।४०८।

अर्थः—वीथीरूप एक सूर्यका मार्ग ताका उलंघनप्रति जो एक दिनका इकसठिवां भाग पावै तौ एकसौ तियासि मार्गनिका उलंघनप्रति केते दिवस पावै ऐसैं त्रैराशिक करि तहं इकसठि करि अपवर्तन करि गुणें अधिक दिन तीन होहे। बहुरि एक अयनविषैं एकसौ तिआसी दिन कैसैं हैं सो कहिए हैं।

एक मुहूर्त विषैं गमन योग्य सूर्यके अठारहसै तीस खण्ड अर नक्षत्रके अठारहसै पैंतीस खण्ड तातैं सूर्यके नक्षत्रतैं पांच खण्ड छोडनैं विषैं एक मुहूर्त होइ तौ अभिजित नक्षत्रके छसै तीस खण्ड छोडनैं विषैं केते मुहूर्त होइ ऐसैं मुहूर्त करि $\frac{६३०}{५}$ ताकौं तीसका भाग देइ दिन करने $\frac{६३०}{५३०}$ बहुरि भाज्य भाजककौं तीस करि अपवर्तन किएं इकईस दिनका पांचवां भाग प्रमाण अभिजितका भुक्तिकाल आया। ऐसैं ही जघन्य मध्य उत्कृष्ट नक्षत्र श्रवण आदि पुनर्वसु पर्यंत तिनके त्रैराशिक

विधिकरि मुहूर्त वा दिनकरि क्रमतैं पंद्रह तीस पंद्रहकरि अपवर्तनकरि जो जो पावैं सो सो तिस तिस नक्षत्रविषैं स्थापन करनां ॥ ४०८ ॥

आगै पुष्यविषैं विशेष हैं ताके प्रतिपादनकै अर्थि कहैं हैं ।—

सतिपंचमचउदिवसे पुस्से गमियुत्तरायणसमत्ती ॥
सेसे दक्खिणआदी सावणपडिवदि रविस्स पढमपहे ॥ ४०९ ॥
सत्रिपंचमचतुर्दिवसान् पुष्ये गत्वा उत्तरायणसमाप्तिः ॥
शेषान् दक्षिणादिः श्रावणप्रतिपदि रवेः प्रथमपथे ॥ ४०९ ॥

*अर्थः—तीन दिनका पंचवा भाग सहित च्यारि दिन पुष्य नक्षत्र*का भुक्तिकालविषैं जाइकरि उत्तरायणकी समाप्तता हो है । ऐसैं करि पूर्वोक्त प्रकार पुष्य नक्षत्र भुक्तिका कालकौं सडसठि दिनका पांचवां *प्रमाण ल्याइ तामैं तीनका पांचवां भाग सहित च्यारि दिनका* समछेद किएं तेईस दिनका पांचवां भाग भया सो ग्रहिकरि उत्तरायणकी समाप्ततावीषैं देनां अवशेष चवालीस दिनका पांचवां भाग रह्या तामैं कोष्ट पूरण करनेकै अर्थि तितना ही तेईस दिनका पांचवां भाग ग्रहि करि दक्षिणायनका प्रथम कोष्टविषैं दिएं यहु ही श्रावण मासविषैं पडिवाके दिन सूर्यका प्रथम मार्गविषैं दक्षिणायनका आदि हो है । अवशेष इकईस दिनका पांचवां भाग द्वितीय कोष्ट विषैं देनां । बहुरि ऐसैंही पूर्वोक्त प्रकार आश्लेषा आदि उत्तराषाढा पर्यंत नक्षत्रनिकी सूर्यके भुक्तिका काल ल्याइ तिहतिह नक्षत्रविषैं स्थापन करनां ।

भावार्थः—सूर्यका उत्तरायणविषैं प्रथम अभिजित नक्षत्रकी भुक्ति हो है ताका काल पूर्वोक्त प्रकार किएं इकईस दिनका पांचवां भाग प्रमाण है । पीछे क्रमतैं श्रवण १ धनिष्ठा शतभिखा १ पूर्वाभाद्रपदा १ रेवती १ अश्विनी १ भरणी १ कृत्तिका १ रोहिणी १ मृगशीर्षा १ आर्द्रा १ पुनर्वसु १ इनकी भुक्ति हो है । तहां शतभिषा १ भरणी १ *आर्द्रा* १ ए तीन जघन्य नक्षत्र हैं तिनका तौ एक एकका भुक्तिकाल

सडसठि दिनका दशवां भाग प्रमाण है। बहुरि श्रवण १ धनिष्ठा १ पूर्वाभाद्रपदा १ रेवती १ अश्विनी १ कृत्तिका मृगशीर्षा ए सात मध्य नक्षत्र हैं सो इनका एक एकका भुक्तिकाल सतसठि दिनका पांचवां भाग प्रमाण है।

बहुरि उत्तराभाद्रपदा रोहिणी पुनर्वसु ए तीन उत्कृष्ट नक्षत्र हैं सो इनका एक एकका भुक्तिका दोयसै एक दिनका दशवां भाग प्रमाण है बहुरि पीछैं पुष्य नक्षत्रका भुक्तिकाल सडसठि दिनका पांचवां भाग प्रमाण तामैं तेईस दिनका पांचवां भाग मात्र काल पर्यंत पुष्य नक्षत्रकी भुक्ति इस अयनविषैं हो है। ऐसैं सर्व कालकौं समच्छेद करि होहैं सूर्यके उत्तरायणविषैं एकसौ तियासी दिन हो है। बहुरि दक्षिणायनका प्रारंभ श्रावण कृष्णकी पडिवाके दिन हो है। तहां प्रथम पुष्य नक्षत्र भोगिए हैं। पुष्य नक्षत्रका भुक्तिकाल सडसठि दिनका पांचवा भागविषैं तेईस दिनका पांचवां भाग तौ उत्तरायणविषैं भए थे अवशेष चौवालीस दिनका पांचवा भाग इस अयनकी आदिविषैं भोगिए हैं। तहां उत्तरायण समान कोठे पूर्ण करनेंकौं प्रथम कोठाविषैं तौ तेईसका पांचवां भाग देना। दूसरा कोठाविषैं अभिजितकी जायगा। इकईसका पांचवां भाग देना।

ऐसैं प्रथम पुष्य नक्षत्रका भुक्तिकाल भएं पीछे क्रमतैं आश्लेषा १ मघा १ पूर्वा १ फाल्गुनी १ उत्तरा फाल्गुनी १ हस्त १ चित्रा १ स्वाति १ विशाखा १ अनुराधा १ ज्येष्ठा १ मूल १ पूर्वाषाढा १ उत्तराषाढा इन नक्षत्रनिकौं भोगवै है। तहां आश्लेषा १ स्वाति १ ज्येष्ठा १ ये तीन जघन्य नक्षत्र हैं सो इनका तौ एक एक एकका भुक्तिकाल सतसठि दिनका दशवां भाग प्रमाण है। बहुरि मघा, पूर्वा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढा ये सात मध्य नक्षत्र हैं। सो इन एक एकका भुक्तिकाल सतसठि दिनका पांचवां भाग

प्रमाण है। बहुरि उत्तरा फाल्गुनी, विशाखा, उत्तराषाढा ये तीन उत्कृष्ट नक्षत्र हैं। सो इन सर्व भुक्तिकालनिकों जोड़े सूर्यके दक्षिणायनविषै एकसौ तियासी दिन होहैं।

बहुरि अब चंद्रमाका कहिए हैं। पूर्वोक्त प्रकार चंद्रमाका भुक्तिकाल इकईस दिनका सतसठिवां भाग प्रमाण ल्याई तिस चंद्रमाहीके जघन्य मध्य उत्कृष्ट नक्षत्रनिका भुक्तिकालविषैं श्रवण आदि पुनर्वसु पर्यंत नक्षत्रनिकी पूर्वोक्त प्रकार भुक्तिल्याइ तिहविषैं सर्वत्र सदसठिकों भाजक करि भाज्यका अपवर्तन करि बहुरि भाजक तीस अर भाज्यका जघन्य उत्कृष्ट नक्षत्रनिका पंद्रहकरि अपवर्तनकरि अर मध्यमनिकै तीसकै अपवर्तनकरि जो जो पावै सो सो तिस तिस नक्षत्रविषैं स्थापन करनां। बहुरि पुष्यविषैं सूर्यके भुक्ति सतसठि दिनका पांचवां भाग मात्रविषैं चंद्रमाके भुक्ति एक दिन प्रमाण होइ तौ पुष्यविषैं सूर्यकै तेईस दिनका पांचवां भागविषैं चंद्रमाकै केती होइ ऐसैं त्रैराशिक करि आई जो तेईसका सतसठिवां भाग भाग प्रमाण भुक्ति सो उत्तरायणकी समासताविषैं दैनी ऐसेही दक्षिणायनविषैं विधान करना।

भावार्थ–चंद्रमाकै उत्तरायणविषैं पहले अभिजितकी भुक्ति होहै। ताका काल इकईस दिनका सतसठिवां भाग मात्र है। पीछै श्रवण आदि पुनर्वसु पर्यंत नक्षत्र क्रमतैं भोगिए हैं। तहां तीन जघन्य नक्षत्रनिविषैं एक एकका भुक्तिकाल अर्ध दिन है सात मध्य नक्षत्रनिविषैं एक एकका भुक्तिकाल एक दिन है। तीन उत्कृष्ट नक्षत्रनिविषैं एक एकका भुक्तिकाल ड्योढ दिन है। बहुरि तहां पीछैं पुष्य नक्षत्रका भुक्तिकाल एक दिनविषैं तेईस दिनका सतसठिवां भाग कालप्रमाण पुष्य नक्षत्र भोगिए हैं। ऐसैं सर्वकाल जोड़ें चंद्रमाका उत्तरायणविषैं तेरह दिन अर चवालीसके सडसठिवां भाग मात्र काल होहै।

बहुरि दक्षिणायनविषैं पहलें पुष्य नक्षत्र भोगिए हैं तहां पुष्य

नक्षत्रका भुक्तिकाल एक दिन विषै तेईस दिनका सतसठिवां भाग मात्र काल उत्तरायणविषै गया अब शेष चवालीसका सड़सठिवां भाग प्रमाण काल इहां भोगिए हैं । बहुरि आश्लेषा आदि उत्तराषाढा पर्यंत नक्षत्र क्रमतैं भोगिए हैं । तहां तीन जघन्य नक्षत्र सात मध्य नक्षत्र तीन उत्कृष्ट नक्षत्रनिका भुक्तिकाल क्रमतैं एक एकका आधा दिन एक दिन ड्योढ दिन जाननां । सर्वकाल मिलाएं चंद्रमाका दक्षिणायन विषै तेरह दिन अर चवालीसका सड़सठिवां भाग प्रमाण काल हो है।

अब राहुका कहिए हैं राहुकै अभिजित आदि पुनर्वसु पर्यंत नक्षत्रनिकी भुक्तिस्थाई तिस तिस नक्षत्रविषैं स्थापना करनां । बहुरि पुष्यविषै सूर्यके सतसठि दिनका पांचवां भाग प्रमाण भुक्ति होतैं राहुकै आठसैं च्यारिसैका इकसठिवां भाग प्रमाण भुक्ति होइ तौ सूर्यके तेईस दिनका पांचवां भाग प्रमाण भुक्ति होतै राहूकै केती भुक्ति होइ ऐसैं-स्थाइ अपवर्तन करैं दोयसै छिहंतरि दिनका इकसठिवां भाग प्रमाण भुक्ति उत्तरायणकी समाप्तिविषैं पुष्यकी स्थापना करनी बहुरि पूर्ववत दक्षिणायन विषै विधान करनां।

भावार्थ — राहुकै उत्तरायणविषै प्रथम अभिजितकी भुक्ति हो है ताका काल दोयसै बावन दिनका इकसठिवां भाग मात्र है पीछे श्रवणादि पुनर्वसु पर्यंत नक्षत्रनिकी भुक्ति क्रमतैं होहै । तिनविषै तीन जघन्य सात मध्य तीन उत्कृष्ट नक्षत्रनिका भुक्तिकाल क्रमतैं च्यारिसै दोयका इकसठिवां भाग बारहसै छैका इकसठिवां भाग प्रमाण होहै । पीछै पुष्यकी भुक्ति होहै ताका काल आठसैच्यारि दिनका इकसठिवां भागविषै दोयसै छिहंतरि दिनका ईकसठिवां भाग मात्र पुष्यकी भुक्तिका काल होहैं । ऐसैं सर्वकाल मिलि राहूकै उत्तरायणविषैं एकसौ असी दिन होहैं ।

। बहुरि राहु दक्षिणायनविषें प्रथम पुष्यका भुक्तिकालविषें अवशेष पांचसै अठाईस दिनका इकसठिवां भाग प्रमाण काल पर्यंत तौ पुष्यकी भुक्ति होहै । पीछे आश्लेषादि उत्तराषाढ पर्यंत नक्षत्रनिकी भुक्ति क्रमतैं होहै । तहां तीन जघन्य सात मध्य तीन उत्कृष्ट नक्षत्रनिका भुक्तिकाल क्रमतैं च्यारिसै दोयका इकसठिवां भाग आठसै च्यारिका इकसठिवां भाग बारहसै छैका इकसठिवां भाग मात्र है । ऐसैं सर्वकाल मिलि राहुकै दक्षिणायनविषैं एकसौ असी दिन होहै । याप्रकार नक्षत्र भुक्तिकौ समच्छेद करि जोडैं चंद्रमाके अयनके दिन तेरह अर चवालीसका सतसठिवां भाग होहै । बहुरि दोऊ अयन मिलाएं वर्षके दिन सताईस इकवीसका ईकसठिवां भाग होहै । बहुरि सूर्यकै अयन दिन एकसौ तियासी वर्ष दिन तीनसै छयासठि होहै । बहुरि राहुके अयनदिन एकसौ असी वर्ष दिन तीनसैं साठि होहैं ॥ ४०९ ॥

आगैं अधिक मासका प्रतिपादनकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

इगिमासे दिणवड्ढि वस्से बारह दुवस्सगेसदले ॥
अहिओ मासो पंचयवासप्पजुगे दुमासहिया ॥ ४१० ॥
एकस्मिन् मासे दिनवृद्धि र्वर्षे द्वादश द्विवर्षके सदले ॥
अधिको मासः पंचवर्षात्मकयुगे द्विमासौ अधिकौ ॥४१०॥

अर्थः— एक मासविषैं एक दिनकी वृद्धि होइ अढाई वर्षविषैं एक मास अधिक होइ । पंच वर्षका समुदाय सोई है स्वरूप जाका ऐसा युग तिहविषैं बारह दिन बधै तौ अढाई वर्षविषैं कितने दिन बधै ऐसैं किएं लब्धराशि तीस दिन होइ । ऐसैं ही युगविषैं भी त्रैराशिक करना ।

भावार्थ.—एक वर्षके बारह मास एक मासके तीस दिन तहां इकसठिवैं दिन एक तिथि घटे तातैं वर्षके तीनसै चौवन दिन होइ । अर सूर्यके तीनसै छासठि दिन है । सो बारह दिन एक वर्षविषैं

बधती भए सो अढाई वर्ष व्यतीत भएं एक अधिक मास होइ तब तेरह मासका वर्ष होइ । बहुरि ऐसें ही अढाई वर्ष और भए एक मास अधिक होइ । या प्रकार पांच वर्ष प्रमाण जो युग तिहविषैं दोय अधिक मास होइ ॥ ४१० ॥

अब पूर्व गाथाका जु अर्थ ताहीकों आठ गाथानिकरि वर्णन करै है ।--

आसाढपुण्णमीए जुगणिप्पत्ती दु सावणे किण्हे ॥
अभिजिम्हि चंदजोगे पाडिवदिवसम्हि पारंभो ॥ ४११ ॥
आषाढपूर्णिमायां युगनिष्पत्तिः तु श्रावणे कृष्णपक्षे ॥
अभिजिति चंद्रयोगे प्रतिपद्दिवसे प्रारंभो ॥४११ ॥

अर्थ.--आषाढ मासविषैं पून्यौंके दिन उपरान्त समय उत्तरायण-की समाप्तता होतैं पंच वर्ष स्वरूप युगकी निष्पत्ति कहिए संपूर्णता सो हो है । बहुरि श्रावण मास कृष्ण पक्षविषैं अभिजित नक्षत्र अर चंद्रमा-का योग होतैं पडिवाकैं दिन दक्षिणायनका प्रारंभ हो है ।

भावार्थ --आषाढ सुदि पून्यों अपराह्णविषैं तौ पूर्व युगकी समा-प्तता भइ । बहुरि श्रावण वदि एकै दिनं जहां चंद्रमाकैं अभिजित नक्षत्र-का भुक्तिकाल होइ तहां सूर्यका दक्षिणायनका आरंभ हो है । सोंई नवीन पांच वर्ष स्वरूप जो युग ताका प्रारंभ जानना ॥ ४११ ॥

आगैं किस वीथीविषैं किस अयनका प्रारंभ हो है सो कहै हैं--

पढमंतिमवीहीदो दक्खिणउत्तरदिगयणपारंभो ॥
आउट्टी एगादीदुगुत्तरा दक्खिणाउट्टी ॥ ४१२ ॥
प्रथमांतिमवीथीतः दक्षिणोत्तरदिगयनप्रारंभ ॥
आवृत्तिः एकादिद्विकोत्तरा दक्षिणावृत्तिः ॥ ४१२ ॥

अर्थ-प्रथम अंतिम वीथीतैं दक्षिण उत्तर दिशाका अयनका प्रारंभ होहै। भावार्थ:-एकसौ चौरासी वीथिनिविषैं प्रथम अभ्यंतर वीथीविषैं तिष्ठता सूर्यकै दक्षिण अयनका प्रारंभ होहै। अंतर बाह्य वीथीविषैं तिष्ठता सूर्यकै उत्तर अयनका प्रारंभ होहै। बहुरि सोई दक्षिणायन अर उत्तरायणकी प्रथम आवृत्ति है। पूर्व अयनकौं समाप्तकरि नवीन अयनका ग्रहण ताका नाम आवृत्ति जाननां। तहां एककौं आदि देकरि दुगुत्तर कहिए दोय वृद्धि प्रमाणलिएं दक्षिण आवृत्ति होहै ॥ ४१२ ॥

उत्तरायणकी आवृत्ति कैसे है सो कहते हैं-

उत्तरगा य दुआदि दुचया उभयत्थ पंचयं गच्छो ॥
विदिआउट्टी दु हवे तेरसि किण्हेसु मियसीसे ॥ ४१३ ॥
उत्तरगा च द्व्यादिः द्विचया उभयत्र पंचकं गच्छः ॥
द्वितीयावृत्तिः तु भवेत् त्रयोदश्यां कृष्णेषु मृगशीर्षायाम् ॥४१३

अर्थः—उत्तरायण संबंधी आवृत्ति सो दोयकौं आदि देकरि द्विचयाः कहिए दोयवृद्धि प्रमाण लिए हैं। बहुरि उभयत्र कहिए दोउ जायगा दक्षिणायन उत्तरायणविषैं गच्छ कहिए स्थान प्रमाण सो पांच जाननां॥ भावार्थ पूर्व अयनकौं समाप्तकरि नवीन अयनका ग्रहण होतैं अयनकी जो पलटनी ताका नाम आवृत्ति है। सो पंच वर्ष प्रमाण एक युगविषैं दश बार आवृत्ति हो है। तहां पहली तीसरी पांचवीं सातवीं नवमी आवृत्ति तौ दक्षिणायन संबंधी है। जातैं तहां उत्तरायणकौं समाप्त करि दक्षिणायनका ग्रहण कीजिए है। बहुरि दूसरी चौथी छट्ठीं आठवी दशमी आवृत्ति उत्तरायण संबंधी है। जातै तहां दक्षिणायनकौं समाप्तकरि उत्तरायणका ग्रहण कीजिये है तहां दक्षिणायन संबंधी आवृत्ति श्रावण मासविषैं हो है। सो प्रथम आवृत्ति तौ पूर्वं कही थी, बहुरि दूसरी आवृत्ति कृष्णपक्षविषैं तेरसिके दिन चंद्रमाकै मृगशीर्ष नक्षत्रका भुक्तिकालविषैं हो है ॥ ४१३ ॥

तीसरी आदि आवृत्ति कब होत है सो कहै हैं।—

सुक्कदसमीविसाहे तदिया सत्तमिगकिण्हरेवदिए ॥
तुरिया दु पंचमी पुण सुक्कचउत्थीए पुव्वफग्गुणिये ॥ ४१४
शुक्लदशमीविशाखे तृतीया सप्तमी कृष्णरेवत्याम् ॥
तुरिया तु पंचमी पुनः शुक्लचतुर्थ्यां पूर्वफाल्गुन्याम् ॥४१४

अर्थः—शुक्ल पक्ष दशमी तिथिविषैं विशाखा नक्षत्रका योग होतैं तीसरी आवृत्ति हो है। बहुरि कृष्ण पक्षकी सप्तमी तिथिविषैं रेवती नक्षत्रका योग होतैं चौथी आवृत्ति हो है। बहुरि शुक्लपक्षकी चौथी तिथिविषैं पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रका योग होतैं पांचवी आवृत्ति हो है ॥ ४१४ ॥

इन करि कहा हो है सो कहैं हैं।—

दक्खिणअयणे पंचसु सावणमासेसु पंचवस्सेसु ॥
एदाओ भणिदाओ पंचणियट्टीउ सूरस्स ॥४१५ ॥
दक्षिणायने पंचसु श्रावणमासेसु पंचवर्षेषु ॥
एताः भणिताः पंचनिर्वृत्तयः सूर्यस्य ॥४१५ ॥

अर्थः—दक्षिणायनविषैं पांच जे श्रावण मास पांच वर्षनिविषैं होइ तिनविषैं ए पांच आवृत्ति सूर्यकी कही हैं ॥ ४१५ ॥

उत्तरायणविषैं आवृत्ति कैसें है सो कहैं हैं।—

माघे सत्तमि किण्हे हत्थे विणिवित्तिमेदि दक्खिणदो ॥
विदिया सदभिससुक्के चोत्थीए होदि तदिया दु ॥४१६॥
माघे सप्तम्यां कृष्णे हस्ते विनिवृत्तिं एति दक्षिणतः ॥
द्वितीया शतभिशुक्ले चतुर्थ्यां भवति तृतीया तु ॥ ४१६ ॥

अर्थः—माघमासविषैं उत्तर आवृत्ति हो है तहां कृष्ण पक्षकी सप्तमी तिथिविषैं चंद्रमाके हस्त नक्षत्रकी भुक्ति होतैं अयनतैं पलटै है

अर्थ-प्रथम अंतिम वीथीतैं दक्षिण उत्तर दिशाका अयनका प्रारंभ होहै। भावार्थ:-एकसौ चौरासी वीथिनिविषैं प्रथम अभ्यंतर वीथीविषैं तिष्ठता सूर्यकै दक्षिण अयनका प्रारंभ होहै। अंतर बाह्य वीथीविषैं तिष्ठता सूर्यकै उत्तर अयनका प्रारंभ होहै। बहुरि सोई दक्षिणायन अर उत्तरायणकी प्रथम आवृत्ति है। पूर्व अयनकों समाप्तकरि नवीन अयनका ग्रहण ताका नाम आवृत्ति जाननां। तहां एककों आदि देकरि दुगुणा कहिए दोय वृद्धि प्रमाणलिएं दक्षिण आवृत्ति होहै ॥ ४१२ ॥

उत्तरायणकी आवृत्ति कैसे है सो कहते हैं—

उत्तरगा य दुआदि दुचया उभयत्थ पंचयं गच्छो ॥
बिदिआउट्टी दु हवे तेरसि किण्हेसु मियसीसे ॥ ४१३ ॥
उत्तरगा च द्व्यादिः द्विचया उभयत्र पंचकं गच्छः ॥
द्वितीयावृत्तिः तु भवेत् त्रयोदश्यां कृष्णेषु मृगशीर्षायाम् ॥४१३

अर्थः—उत्तरायण संबंधी आवृत्ति सो दोयकों आदि देकरि द्विचयाः कहिए दोयवृद्धि प्रमाण लिए हैं। बहुरि उभयत्र कहिए दोऊ जायगा दक्षिणायन उत्तरायणविषैं गच्छ कहिए स्थान प्रमाण सो पांच जाननां॥ भावार्थ पूर्व अयनकों समाप्तकरि नवीन अयनका ग्रहण होतैं अयनकी जो पलटनी ताका नाम आवृत्ति है। सो पंच वर्ष प्रमाण एक युगविषैं दश बार आवृत्ति हो है। तहां पहली तीसरी पांचवीं सातवीं नवमी आवृत्ति तौ दक्षिणायन संबंधी है। जातैं तहां उत्तरायणकों समाप्त करि दक्षिणायनका ग्रहण कीजिए है। बहुरि दूसरी चौथी छट्ठी आठवी दशमी आवृत्ति उत्तरायण संबंधी है। जातै तहां दक्षिणायनकों समाप्त-करि उत्तरायणका ग्रहण कीजिये हैं तहां दक्षिणायन संबंधी आवृत्ति श्रावण मासविषैं हो है। सो प्रथम आवृत्ति तौ पूर्वैं कही थी, बहुरि दूसरी आवृत्ति कृष्णपक्षविषैं तेरसिके दिन चंद्रमाकै मृगशीर्षा नक्षत्रका भुक्तिकालविषैं हो है ॥ ४१३ ॥

तीसरी आदि आवृत्ति कब होत है सो कहै हैं।—

सुक्कदसमीविसाहे तदिया सत्तमिगकिण्हरेवदिए ॥
तुरिया दु पंचमी पुण सुक्कचउत्थीए पुव्वफग्गुणिये ॥ ४१४
शुक्लदशमीविशाखे तृतीया सप्तमी कृष्णरेवत्याम् ॥
तुरिया तु पचमी पुनः शुक्लचतुर्थ्यां पूर्वफाल्गुन्याम् ॥४१४

अर्थ.—शुक्ल पक्ष दशमी तिथिविषैं विशाखा नक्षत्रका योग होतैं तीसरी आवृत्ति हो है। बहुरि कृष्ण पक्षकी सप्तमी तिथिविषैं रेवती नक्षत्रका योग होतैं चौथी आवृत्ति हो है। बहुरि शुक्लपक्षकी चौथी तिथिविषैं पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रका योग होतैं पाचवी आवृत्ति हो है॥ ४१४ ॥

इन करि कहा हो है सो कहै हैं।—

दक्खिणअयणे पंचसु सावणमासेसु पचवस्सेसु ॥
एदाओ भणिदाओ पचणियट्टीउ सूरस्स ॥४१५ ॥
दक्षिणायने पचसु श्रावणमासेषु पंचवर्षेषु ॥
एताः भणिताः पंचनिर्वृत्तयः सूर्यस्य ॥४१५ ॥

अर्थ—दक्षिणायनविषैं पांच जे श्रावण मास पाच वर्षनिविषैं होइ तिनविषैं ए पांच आवृत्ति सूर्यकी कही हैं॥ ४१५ ॥

उत्तरायणविषैं आवृत्ति कैसैं है सो कहैं हैं।—

माघे सत्तमि किण्हे हत्थे विणिवित्तिमेदि दक्खिणदो ॥
विदिया सदभिससुक्के चोत्थीए होदि तदिया दु ॥४१६॥
माघे सप्तम्यां कृष्णे हस्ते विनिवृत्तिं एति दक्षिणतः ॥
द्वितीया शतभिशुक्ले चतुर्थ्यां भवति तृतीया तु ॥ ४१६ ॥

अर्थ—माघमासविषैं उत्तर आवृत्ति हो है तहां कृष्ण पक्षकी सप्तमी तिथिविषैं चंद्रमाके हस्त नक्षत्रकी भुक्ति होतैं सप्ततैं पहलै है

पक्षकी पंद्रह शुक्ल पक्षकी अंतविर्षें एक घटाएं तीन कार्तिकके कृष्ण पक्षकी मिलाएं इकतीस तिथी हो हैं। ऐसें ही कार्तिकविर्षें बारह कृष्णकी पंद्रह शुक्लकी च्यारि कृष्णकी मार्गशीर्षविर्षें ग्यारह कृष्णकी पंद्रह शुक्लकी पांच कृष्णकी पौषविर्षें दश कृष्णकी पंद्रह शुक्लकी छह कृष्णकी तिथि मिलें इकतीस तिथि होई।

-बहुरि उत्तरायणविर्षें माघवदी सातैं तें नव कृष्णकी इत्यादि रचना किएं बहुरि दक्षिणायनविर्षें द्वितीय श्रावणमास विर्षें श्रावण वदी त्रयोदशीतें लगाय तीन कृष्णकी पंद्रह शुक्लकी तेरह कृष्णकी तिथि हो हैं। बहुरि भाद्रपदादिकविर्षें रचना करानी। ऐसें रचना किएं मासविर्षें अयनविर्षें अधिक दिन आवै है। इस क्रमकरि पंचवर्षात्मक युगविर्षें दोय अधिक मास हो हैं। ॥ ४१८ ॥

आगैं दक्षिणायन और उत्तरायणके प्रारंभ विर्षें नक्षत्र ल्यावनेंका विधान कहैं हैं।—

> रूऊणाउट्टिगुणं इगिसीदिसदं तु सहिद इगिवीसं ॥
> तिघणहिदे अवसेसा अस्सिणि पहुदीणि रिक्खाणि ।४१९।
> रूपोनावृत्तिगुणं एकाशीतिशतं तु सहितं एकविंशत्या ॥
> त्रिघनहृते अवशेषाणि आश्विनी प्रभृतीनि ऋक्षाणि ।४१९।

अर्थः—रूपोनावृत्ति कहिए जेथवीं आवृत्ति होइ तामें एक घटाएं जो प्रमाण होइ तिहकरि गुण्या हुवा एकसौ इक्यासी तामें इकईस जोडिए अर ताकों तीनका घन जो सताईस ताका भाग दिएं जेता अवशेष रहै तेथवां नक्षत्र अश्विनी आदितें जानना। उदाहरण—जैसे विवक्षित आवृत्ति प्रथम तामें एक घटाएं शून्य अवशेष रहै तीहकरि एकसौ इक्यासीकों गुणिए सो शून्य करि गुण्या हुवा अंक शून्य ही होइ तातें गुणें भी शून्य ही पाया। तीह विधिविर्षें इकईस जोडैं इकईस ही भए।

बहुरि इहां सत्ताईस तैं अधिक होय तौ सत्ताईसका भाग देते तातैं इकईस ही रहे सो अश्विनी भरणी कृत्तिका आदि अनुक्रमतैं गिणैं अश्विनी तैं लगाय जो इकईसवां नक्षत्र होइ सोई प्रथम आवृत्तिविषैं नक्षत्र होइ सो अश्विनीतैं लगाय इकईसवां नक्षत्र उत्तराषाढा है। परंतु इहां अभिजितका ग्रहण करना। काहेतै सो कहिए हैं। यद्यपि नक्षत्र अठ्ठाइस है। तथापि जहां नक्षत्रनिकी गणनादिक करिए हैं तहां सत्ताईस नक्षत्रनिहीका ग्रहण कीजिए हैं। अभिजित नक्षत्रका ग्रहण न कीजिए हैं जातैं याका साधन सूक्ष्म है तातैं इहां प्रथम आवृत्तिविषैं स्थूलपनै साधन किए उत्तराषाढ आवै परंतु सूक्ष्मपनैं साधन किए अभिजित नक्षत्र जाननां। आगैंभी अश्विनी आदिकतैं वा कार्तिक आदिकतैं नक्षत्र गणनाविषैं अभिजित नक्षत्रका ग्रहण करना नाहीं।

या प्रकार दक्षिणायनका प्रारंभविषैं प्रथम श्रावण मासविषैं नक्षत्र ल्यावनेका विधान कह्या। अब दूसरा उदाहरण कहिए हैं। विवक्षित दूसरी आवृत्ति तामैं एक घटाएं एक रह्या तीह करि एकसौ इक्यासीकौं गुणें एकसौ इक्यासीही हुवा इनमें इकईस मिलाएं दोयसैं दोय भए इनकौं सत्ताईसका भाग दिएं अवशेष तेरह रहे सो अश्विनी नक्षत्रतैं तेरहवां नक्षत्र हस्त सो उत्तरायणका प्रारंभविषैं प्रथम माघ मासविषैं हस्त नक्षत्र पाईए हैं। ऐसेही तीसरी पांचवी सातवी नवमीं आवृत्तिविषैं दक्षिणायनका प्रारंभ श्रावण मासविषैं होहै। तहां अर चौथी छठी आठवीं दशवीं आवृत्तिविषैं उत्तरायणका प्रारंभ माघ मासविषैं होहैं। तहां नक्षत्र साधन करनां ॥ ४१९ ॥

आगैं दक्षिणायन उत्तरायणके पर्व वा तिथि ल्यावनेविषैं सूत्र कहे हैं—

वेगाउद्दिगुणं तेसीदिसदं सहिद तिगुणगुणरूवे ॥
पण्णरसजिदे पव्वा सेसा तिहिमाणमयणस्स ॥ ४२० ॥
व्येकावृत्तिगुणं त्र्यशीतिशतं सहितं त्रिगुणगुणरूपेण ॥
पंचदशभक्ते पर्वाणि शेषं तिथिमानं अयनस्य ॥ ४२० ॥

अर्थ.—व्येका वृत्ति कहिए जेथवी विवक्षित आवृत्ति होइ तामैं एक घटाएं जो प्रमाण रहै तिहकरि एक सौ तियासीकौं गुणिए, बहुरि जितनें गुणकारकं एकसौ तियासीकौं गुणकरि ताकौं तिगुणांकरि तामैं जोडिएं। बहुरि एक और जोडिए जो प्रमाण होइ ताकौ पंद्रहका भाग दीजिए जो लब्ध प्रमाण आवै तितनें तौ पर्व जाननें अवशेष रहै सो तिथि प्रमाण जाननां। दक्षिणायन वा उत्तरायणका ऐसैंही जानना उदाहरण विवक्षित आवृत्ति प्रथम तामैं एक घटाएं बिंदीही तिहकरि एकसौ तियासी-कौं गुणों बिंदी करि गुणें बिंदीही होइ इस न्यायकरि बिंदीही आई।

बहुरि इहां गुणकार बिंदी ताकौं तिगुणां किएंभी बिंदीविषैं बिंदी जोडैं बिंदी ही भई। बहुरि तामैं एक जोडैं एक भया याकौ पंद्रहका भाग लागै नहीं तातैं पर्वका तौ अभाव जाननां। अर अवशेष एक रह्या सौ तिथिका प्रमाण जानना ऐसैं प्रथम आवृत्ति दक्षिणायनका प्रारंभविषैं प्रथम श्रावण मासविषैं पर्वका तौ अभाव आया पक्षकी पूर्णतामएं पूर्णमां वा अमावस्या जो होइ ताका नाम पर्व है। सो युगका प्रारंभ भएं पीछैं जेते पर्व व्यतीत होइ सोई इहां पर्वनिकी संख्या जाननी। सो प्रथम आवृत्तिविषैं कोऊ भी पर्व व्यतीत भया तातैं पर्वका अभाव जाननां। अर तिथिका प्रमाण एक जाननां।

बहुरि दूसरा उदाहरण विवक्षित आवृत्ति दूसरी तामैं एक घटाएं एक रह्या तीहकरि एकसौ तियासीकौं गुणें एकसौ तियासी भए। बहुरि गुणकारका प्रमाण एक ताकौ तिगुणा किए तीनसौ मिलाय एकसौ छियासी भये। बहुरि तामैं एक और जोडैं एकसौ सित्यासी भए।

बहुरि तामैं एक और जोडै एकसौ सित्यासी भए । इनकों पंद्रहका भाग दिएं बारह पाएं सो बारह सौ पर्वका प्रमाण भया । युगका प्रारंभतैं बारह पर्व व्यतीत भएं पीछैं दूसरी आवृत्ति हो है । अर अवशेष सात रहे सो सात तिथि जाननी । ऐसें दूसरी आवृत्ति उत्तरायणका प्रारंभ होतैं प्रथम माघमासविषैं होई तहां युगके आरंभतैं बारह सौ पर्व व्यतीत भए जाननें अर सातैं तिथि जाननी । याही प्रकार अन्य आवृत्तिनिविषैं भी पर्व वा तिथीका प्रमाण ल्यावनां ॥ ४२० ॥

आगै दिन वा रात्रिका प्रमाण जिहिकालविषैं समान होइ ताका नाम विषुप है तिह विषुपविषैं पर्व वा तिथि वा नक्षत्रनिकों छह गाथानिकरि युगके दश अयननिविषैं कहै हैं:—

छम्मासद्धगयाणं जोइसयाणं समाणदिणरत्ती ॥
तं इसुपं पढमं छसु पव्वसु तीदेसु तदिय रोहिणिए ॥४२०॥
षण्मासार्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री ॥
तत् विषुवं प्रथमं षट्सु पर्वसु अतीतेषु तृतीया रोहिण्याम् ॥

अर्थः—छह मासका अर्द्ध ज्योतिषीनिके भएं समान रात्रि हो है सोई विषुप है । भावार्थः—एक अयन छह मासका हो है । तहां आधा अयन भएं दिन अर रात्रिका प्रमाण समान हो है । सो जिस कालविषैं दिन रात्रि होइ ताका नाम विषुप है । सो पंच वर्ष प्रमाण युगविषैं दश विषुप हो हैं । पांच तौ दक्षिणायनका अर्द्धकालविषैं अर पांच उत्तरायणका अर्द्धकालविषैं हो है तहां पहला विषुप दक्षिणायनका अर्धकालविषैं दूसरा उत्तरायणका अर्धकालविषैं ऐसैं क्रमतें जाननें । तहां प्रथम विषुप युगके आरंभतैं छह पर्व व्यतीत भएं तृतीय तिथिविषैं रोहिणी भुक्ति चंद्रमाकै होत होत सो हो संतें हो है ॥ ४२१ ॥

वेगाउद्दिगुणं वेसीदिसदं सहिद तिगुणगुणरूवे ॥
पण्णरभजिदे पव्वा सेसा तिहिमाणमयणस्स ॥ ४२० ॥
व्येकावृत्तिगुणं त्र्यशीतिशतं सहितं त्रिगुणगुणरूपेण ॥
पंचदशभक्ते पर्वाणि शेषं तिथिमानं अयनस्य ॥ ४२० ॥

अर्थ —व्येका वृत्ति कहिए जेथवी विवक्षित आवृत्ति होइ तामें एक घटाएं जो प्रमाण रहै तिहकरि एक सौ तियासीकों गुणिए, बहुरि जितनें गुणकारक एकसौं तियासीकौं गुणकरि ताकौ तिगुणाकरि तामें जोडिए। बहुरि एक और जोडिए जो प्रमाण होइ ताकौ पंद्रहका भाग दीजिए जो लब्ध प्रमाण आवै तितनें तौ पर्व जाननें अवशेष रहे सो तिथि प्रमाण जाननां। दक्षिणायन वा उत्तरायणका ऐसैंही जाननां उदाहरण विवक्षित आवृत्ति प्रथम तामें एक घटाएं बिंदीही तिहकरि एकसौ तियासीकों गुणें बिंदी करि गुणें बिंदीही होइ इस न्यायकरि बिंदीही आई।

बहुरि इहां गुणकार बिंदी ताकौं तिगुणा किएंभी बिंदीविषें बिंदी जोडें बिंदी ही भई। बहुरि तामें एक जोडें एक भया याकौ पंद्रहका भाग लागै नहीं तातैं पर्वका तौ अभाव जाननां। अर अवशेष एक रह्या सो तिथिका प्रमाण जानना ऐसें प्रथम आवृति दक्षिणायनका प्रारंभविषें प्रथम श्रावण मासविषें पर्वका तौ अभाव आया पक्षकी पूर्णताभई पूर्णमां वा अमावस्या जो होइ ताका नाम पर्व है। सो युगका आरंभ भए पीछें जेते पर्व व्यतीत होइ सोई इहां पर्वनिकी संख्या जाननी। सो प्रथम आवृत्तिविषें कोऊ भी पर्व व्यतीत भया तातैं पर्वका अभाव जाननां। अर तिथिका प्रमाण एकैं जाननां।

बहुरि दूसरा उदाहरण विवक्षित आवृत्ति दूसरी तामें एक घटाएं एक रह्या तीहकरि एकसौ तियासीकौं गुणें एकसौ तियासी भए। बहुरि गुणकारका प्रमाण एक ताकौ तिगुणा किए तीनसौ मिलाय एकसौ छियासी भये। बहुरि तामें एक और जोडें एकसौ सित्यासी भए।

बहुरि तामैं एक और जोडे एकसौ सित्यासी भए । इनकौं पंद्रहका भाग दिए बारह पाएं सो बारह तौ पर्वका प्रमाण भया । युगका प्रारंभतैं बारह पर्व व्यतीत भएं पीछैं दूसरी आवृत्ति हो है । अर अवशेष सात रहे सो सात तिथि जाननी । ऐसैं दूसरी आवृत्ति उत्तरायणका प्रारंभ होतैं प्रथम माघमासविषैं होई तहां युगके आरंभतैं बारह तौ पर्व व्यतीत भए जाननें अर सातैं तिथि जाननी । याही प्रकार अन्य आवृत्तिनिविषै भी पर्व वा तिथीका प्रमाण ल्यावनां ॥ ४२० ॥

आगै दिन वा रात्रिका प्रमाण जिहिंकालविषैं समान होइ ताका नाम विषुप है तिह विषुपविषैं पर्व वा तिथि वा नक्षत्रनिकौं छह गाथानिकरि युगके दश अयनिविषैं कहै हैं:—

छम्मासद्धगयाणं जोइसयाणं समाणदिणरत्ती ॥
तं इसुप पढमं छसु पव्वसु तीदेसु तदिय रोहिणिए ॥४२०॥
षण्मासार्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री ॥
तत् विषुवं प्रथमं षट्सु पर्वसु अतीतेषु तृतीया रोहिण्याम् ॥

अर्थ —छह मासका अर्द्ध ज्योतिषीनिके भए समान रात्रि हो है सोई विषुप है । भावार्थ —एक अयन छह मासका हो है । तहां आधा अयन भएं दिन अर रात्रिका प्रमाण समान हो है । सो जिस कालविषैं दिन रात्रि होइ ताका नाम विषुप है । सौ पंच वर्ष प्रमाण युगविषैं दश विषुप हो हैं । पांच तौ दक्षिणायनका अर्द्धकालविषैं अर पांच उत्तरायणका अर्द्धकालविषै हो है तहां पहला विषुप दक्षिणायनका अर्धकालविषैं दूसरा उत्तरायणका अर्धकालविषैं ऐसैं क्रमतैं जाननें । तहां प्रथम विषुप मृगके आरंभतैं छह पर्व व्यतीत भएं तृतीय तिथिविषैं रोहिणी भुक्ति चद्रमाकै होत होत सो हो संतै हो है ॥ ४२१ ॥

विगुणणवपव्वऽतीदे णवमीए विदियगं धणिट्ठाए ॥
इगितीसगदे तदिय सादीए पण्णरसमम्हि ॥ ४२२ ॥
द्विगुणनवपर्वातीतेषु नवम्यां द्वितीयकं धनिष्ठायाम् ॥
एकत्रिंशगते तृतीयं स्वातौ पंचदशाम् ॥ ४२२ ॥

अर्थ —दुगुण नव जो युगके आरंभ पीछैं अठारह पर्व व्यतीतभएं नवमी तिथिविषैं धनिष्ठा नक्षत्रका योग चंद्रमाके होतैं दुतीय विषुप होहै। बहुरि इकतीस पर्व व्यतीत भएं तीसरा विषुप स्वाति नक्षत्र सन्तै पंचदशी तिथिविषैं होयहै। सो कृष्णपक्ष पक्ष पनैतैं अर्थतैं अमावास्या विषय होहै ॥ ४२२ ॥

तेदालगदे तुरियं छट्ठिपुणव्वसुगयं तु पंचमयं ॥
पणवण्णपव्वतीदे बारसिए उत्तराभद्दे ॥ ४२३ ॥
त्रिचत्वारिंशद्गतेषु तुरीयं षष्ठीपुनर्वसुगतं तु पचमयं ॥
पंचपंचाशत्पर्वातीतेषु द्वादश्यां उत्तराभाद्रे ॥ ४२३ ॥

अर्थः—तियालीस पर्व व्यतीत भए चौथा विषुप षष्ठीविषैं पुनर्वसु नक्षत्रकौं प्राप्त भएं हो है। बहुरि पाचवा विषय पचावन पर्व व्यतीत भएं द्वादशी तिथिविषैं उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र होत संतैं हो है ॥४२३॥

अडसट्ठिगदे तदिए मित्ते छट्टं असीदिपव्वगदे ॥
णवमिमघाए सत्तममिह तेणउदिगदे दु अट्ठमयं ॥ ४२४ ॥
अष्टषष्ठिगतेषु तृतीयायां मैत्रे षष्ठं अशीतिपर्वगतेषु ॥
नवमीमघायां सप्तमं इह त्रिनवतिगतेषु तु अष्टमम् ॥४२४॥

अर्थ—अडसठि पर्व गए तृतीय तिथिविषैं मैत्र जो अनुराधा नक्षत्र ताकौं होत संतैं छठा विषुप हो है। बहुरि असी पर्व गएं नवमी तिथिविषैं मघा नक्षत्र होतैं सातवां विषुप हो है। बहुरि इहां तेराणवै पर्व गए आठवां विषुप हो है ॥ ४२४ ॥

अस्सिणि पुण्णे पव्वे णवमं पुण पंचजुद सए पव्वे ॥
तीदे छट्ठि तिहीए णक्खत्ते उत्तरासाढे ॥ ४२५ ॥
अश्विनी पूर्णे पर्वणि नवमं पुनः पंचयुत शतेषु पर्वेषु ॥
अतितेषु षष्ठी तिथौ नक्षत्रे उत्तराषाढे ॥४२५ ॥

अर्थः—सो आठवां विषुव अश्विनी नक्षत्र होतें पूर्ण जो अमावस्या तिहविषैं हो है। बहुरि नवमां विषुव एकसौ पांच वर्ष व्यतीत भएं षष्ठी तिथिविषैं उत्तराषाढ नक्षत्र होतें हो है॥ ४२५ ॥

चरिमं दसमं विसुवं सत्तरहसुत्तर सएसु पव्वेसु ॥
तीदेसु वारसीए जायदि उत्तरफग्गुणिए ॥ ४२६ ॥
चरमं दशमं विषुवं सप्तदशोत्तर शतेषु पर्वेषु ॥
अतीतेषु द्वादश्यां जायते उत्तराफाल्गुन्याम् ॥ ४२६ ॥

अर्थः— अंतका दशवां विषुव एकसौ सतरह पर्व व्यतीत भएं द्वादशी तिथिविषैं उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र होतें हो है॥ ४२६ ॥

आगैं विषुवविषैं पर्व वा तिथि ल्यावनेकौं सूत्र कहै है।—

विगुणे सगिट्ठइसुपे रूऊणे छग्गुणे हवे पव्वं ॥
तप्पव्वदलं तु तिथी पवट्टमाणस्स इसुपस्स ॥ ४२७ ॥
द्विगुणे स्वकेष्टविषुपे रूपोने षड्गुणे भवेत् पर्व ॥
तत्पर्वदलं तु तिथिः प्रवर्तमानस्य विषुपस्य ॥ ४२७ ॥

अर्थ.—अपना इष्ट विषुव जेथवां होइ तीह प्रमाणकौं दूणाकरिएं तामैं एक घटाइए बहुरि अवशेषकौं छह गुणा किएं पर्वनिका प्रमाण आवै है। बहुरि तिस पर्व प्रमाणका आधा सो प्रवर्तमान विवक्षित विषुवका तिथि प्रमाण हो है। तीह पर्वका आधा प्रमाण पंद्रहतैं अधिक होइ तो पंद्रहका भाग दिएं जो लब्ध प्रमाण होइ सो तो पर्व संख्याविषैं जोडिए अर अवशेष रहै सो तिथिका प्रमाण हो है। इहां उदाहरण—इष्ट

विपुव पहला ताकौं दूणां किएं दोय तामैं एक घटाएं अवशेष एक ताकौं छह गुणां किएं छहसो प्रथम विपुवविषैं युग आरंभतैं व्यतीत पर्वनिका प्रमाण छह है। बहुरि तीह पूर्व प्रमाणका आधा तीनसो प्रथम विपुवविषैं तिथि तृतीया है। दूसरा उदाहरण—इष्ट विपुव दशवां ताकौं दूणा किएं वीस तामैं एक घटाएं उगणीस ताकौं छह गुणा किएं एक सौ चौदह सो पर्व प्रमाण ताका आधा सत्तावन ताकौं पंद्रहका भाग भाग दिएं तीन पाए सा पर्व्व संख्याविषैं मिलाएं अंत विपुवविषैं एकसौ सत्तरह तौ पर्वनिका प्रमाण है। अर अवशेष बारह रहे सो तिथि द्वादशी। ऐसे अन्य विपुवनिविषैं भी जाननां ॥ ४२७ ॥

आगैं आवृत्ति अर विपुवविषै तिथि संख्याकौं कहैं हैं,—

वेगपद छग्गुणं इगितिजुदं आउडिइसुपतिहिसंखा ॥
विसमतिहीए किण्हो समतिथिमाणो हवे सुक्को ॥ ४२८ ॥
व्येकपदं पड्गुणं एकत्रियुतं आवृत्तिविपुपतिथिसंख्या ॥
विषमतिथौ कृष्णः समतिथिमानो भवेत् शुक्लः ॥ ४२८ ॥

अर्थ—इष्ट भूत जेथवीं आवृत्ति होइ तिस आवृत्ति स्थानकमैंस्यों एक घटाइए अवशेष छह गुणाकरि दोय जायगा स्थापिए तहां एक जायगा एक और मिलाइए एक जायगा तीन और मिलाइए तब क्रमतैं आवृत्ति अर विपुवविषैं तिथिको संख्या हो है तिनिविषैं जो एक तृतीया पंचमी आदि विषम गणनारूप तिथि होइ तौ तहां कृष्ण पक्ष है। बहुरि द्वितीया चतुर्थी षष्ठी आदि समतिथि हैं तौ तहां शुक्ल पक्ष है। उदाहरण इष्ट आवृत्ति प्रथम तामैं एक घटाएं शून्य ताकौं छह गुणा किएं भी शून्य होइ ताकौं दोय जायगा स्थापि तातैं एक जायगा एक जोडें एक होइ सो प्रथम आवृत्ति विषैं तिथि एक है सो यहु विषम तिथि है तातैं इहां कृष्ण पक्ष जाननां। बहुरि दूसरी जायगा तीन जोडैं तीन होइ सो प्रथम आवृत्ति संबंधी

प्रथम विषुपविषैं तिथिका तृतीया है । यहुभी विषम तिथि है तातैं इहां भी कृष्ण पक्ष ही जाननां ।

बहुरि दूसरा उदाहरण—इहां आवृत्ति दशमी तामैं एक घटाए नव ताकौं छह गुणा किएं चौवन तिनकौं दोय जायगा स्थापि एक जायगा एक और मिलाएं पचावन होई ताकौं पंद्रहका भाग दिएं अवशेष दश रहे सोई दशवीं आवृत्तिविषैं दशमी तिथि है । इहां शुक्ल पक्ष जाननां । बहुरि दूसरी जायगा तीन और मिलाएं सतावन होइ ताकौं पंद्रहका भाग दिएं अवशेष बारह रहे सोई दशवां विषुपविषैं तिथि द्वादशी है । यहु भी सम तिथि हैं । तातैं इहां भी शुक्ल पक्ष जाननां । ऐसेही अन्य आवृत्ति वा विषुपविषैं साधन करनां ॥४२८॥

आगैं विषुपविषैं नक्षत्रनिका वा सर्व तिथि स्थापनैका विधान कहै हैं;—

> आउट्टिलद्धरिक्खं दहजुद छट्ठट्ठदसमगेणूणम् ॥
> इसुपे रिक्खा पण्णरगुणपव्वाजुदतिही दिवसा ॥ ४२९ ॥
> आवृत्तिलब्धऋक्षं दशयुतं षष्ठाष्टदशमके एकोनं ॥
> विषुवे ऋक्षाणि पंचदशगुणपर्वयुततिथयः दिवसानि ॥४२९

अर्थ—आवृत्तिविषैं जो नक्षत्र पाया ताका आगला नक्षत्रसौं लगाय जो दशवां नक्षत्र होइ सो तीह आवृत्ति संबंधी नक्षत्र जाननां । तहां छठा आठवां दशवां विषुपविषैं एक घटावनां जो नवमां ही नक्षत्र होइ सो तीह विषुपविषैं जाननां । उदाहरण-दूसरी आवृत्ति विषैं हस्त नक्षत्र है । तातैं आगैं चित्रातैं लगाय दशवां नक्षत्र धनिष्ठा है । सोई दूसरा विषुपविषैं नक्षत्र जाननां । बहुरि दूसरा उदाहरण छठी आवृत्तिविषैं पुष्य नक्षत्र है । तातैं अगिला आश्लेषातैं लगाय नवमां नक्षत्र रोहिणी है सोई छठा विषुपविषैं नक्षत्र जाननां इहां छठा आठवां

अभिजिन्नवस्वातिः पूर्वोत्तरा च चद्रस्य प्रथममार्गे ॥
तृतीये मघा पुनर्वसु सप्तमे रोहिणी चित्राः ॥ ४३७ ॥

अर्थ —अभिजित आदि नव सो अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी, भरणी, अर ए नव स्वाति, पूर्वाफाल्गुनि, उत्तराफाल्गुनि ए बारह तौ चद्रमाके प्रथम मार्ग विषैं विचरे हैं। चद्रमाका प्रथम अभ्यतर वीथीरूप परिधि तीहविषैं भ्रमण करे हैं। ऐसे ही तीसरा मार्गविषैं मघा पुनर्वसु ए दोय नक्षत्र विचरै हैं। सातवा मार्गविषैं रोहिणी चित्रा ए दोय नक्षत्र विचरैं हैं ॥ ४३७ ॥

छट्ठट्ठमदसमेयारसमे किचिय विसाह अणुराहा ॥
जेट्ठा कमेण सेसा पण्णारसमम्हि अट्ठेव ॥ ४३८ ॥
षष्ठाष्टमदशमैकादशे कृत्तिका विशाखा अनुराधा ॥
ज्येष्ठा क्रमेण शेषाणि पचदशे अष्टैव ॥ ४३८ ॥

अर्थ — छट्ठा मार्गविषैं कृत्तिका आठवाविषैं विशाखा दशवाविषैं अनुराधा ग्यारवाविषैं ज्येष्ठा क्रमकरि विचरैं हैं। अवशेष आठ नक्षत्र पद्रहवा अतका मार्गके ऊपरि विचरैं हैं ॥ ४३८ ॥

ते शेष आठ नक्षत्र कौन सो कहैं हैं —

हत्थ मूलतिय विय मिगसिरदुग पुस्सदोण्णि अट्ठेव ॥
अट्ठपहेणक्खत्ता तिट्ठंतिहु बारसादीया ॥ ४३९ ॥
हस्तः मूलत्रय अपि मृगशीर्षादिक पुष्यद्वयं अष्टैव ॥
अष्टपथे नक्षत्राणि तिष्ठति हि द्वादशादीनि ॥ ४३९ ॥

अर्थ —हस्त, मूल त्रय कहिए—मूल पूर्वाषाढ, उत्तराषाढा, मृगशीर्षा द्विक कहिए—मृगशीर्षा, आर्द्रा, पुष्यद्वय कहिए—पुष्य, आश्लेषा

ए आठ अवशेष जानने । ऐसैं प्रथमादिक पथनिविषैं आदि नक्षत्र चंद्रमाके आठ पथनिके ऊपरि तिष्ठै हैं ॥ ४३९ ॥

आगैं नक्षत्रनिके तारानिकी संख्या दोय गाथानिकरि कहै हैं ।—

किंत्तिय पहुदिसु तारा छप्पणतियएक्कछत्तिछक्कचऊ ॥
दो द्दो पंचेक्कक्क चउछत्तियणवचउक्कचऊ ॥ ४४० ॥
कृत्तिका प्रभृतिषु ताराः षट्पचत्रिसः एकषट्त्रिषट्चतु ॥
द्वे द्वे पच एकैका चतुः षट्त्रिकनवचतुष्काः चतस्रः ॥४४०॥

अर्थ —कृत्तिका आदि नक्षत्रनिके तारे अनुक्रमकरि छह पाच तीन एक छह तीन छह च्यारि दोय दोय पाच एक एक च्यारि छह तीन नव च्यारि, च्यारि ॥ ४४० ॥

तिय तिय पंचेक्कारसहियसय दो द्दो कमेण वत्तीसा ॥
पंच य तिण्णि य तारा अट्ठावीसाण रिक्खाण ॥ ४४१ ॥
तिस्रः तिस्रः पचकादशाधिकशतद्वे द्वे क्रमेण द्वात्रिंशत् ॥
पंच च तिस्रः च तारा अष्टाविंशाना ऋक्षाणां ॥ ४४१ ॥

अर्थ —तीन तीन पाच ग्यारह अधिक एक सौ दोय दोय बत्तीस पाच तीन ऐसैं ए तारा क्रमकरि अट्ठाईस नक्षत्रनिके है ॥ ४४१ ॥

आगैं तिन तारानिका आकार विशेषकों तीन गाथनिकरि कहैं हैं,—

बीयणसअलुद्धिए मियसिरदीवे य तोरणं छत्ते ॥
वम्मियगोमुत्ते विय सरजुगहत्थुप्पले दीवे ॥ ४४२ ॥
बीजनशकटाद्धिका मृगशिरदीपे च तरणं छत्रे ॥
वल्मीकगोमूत्र अपि शरयुगहस्तोत्पले दीपे ॥ ४४२ ॥

अर्थः—कृत्तिका नक्षत्रकै छह तारे हैं तिनका आकार बीजनासदृश है। ऐसहि रोहिणी आदि नक्षत्रके तारानिका आकार क्रमतैं गाडेकी

ऊद्विका, हिरणका मस्तक, दीपक, तोरण, छत्र, वंमई, गऊका मूत्र, शरकायुगल, हाथ, कमळ, दीपक ॥ ४४२ ॥

अहिसरणे वरहारे वीणासिंगे य विच्छिए सरिसा ॥
दुक्कयवावीहरिगजकुंभे मुरवे पलंतपक्खीए ॥
अधिकरणे वरहारे वीणाश्रृंगे च वृश्चिकेन सदृशाः ॥
दुष्कृतवापीहरिगजकुम्भेन मुरजेन पतत्पक्षिणा ॥ ४४३ ॥

अर्थः—अहिरिणी, उत्कृष्टहार, वीणाका श्रृंग, वीछू जीर्ण बावड़ी, सिंहका कुंभस्थल, मृदंग, पडतापंखी ॥ ४४३ ॥

सेणागयपुव्वावरगत्ते णावाहयस्स सिरसरिसा ॥
चुल्लीपासाणणिमा कित्तिय आदीणि रिक्खाणि ॥४४४॥
सेनागजपूर्वावरगात्रे नावाहयस्य शिरसाः सदृशाः ॥
चुल्लीपाषाणनिभाः कृत्तिकादीनि ऋक्षाणि ॥ ४४४ ॥

अर्थः—सेना, हस्तीका आगिला शरीर, हस्तीका पाछिला शरीर, नाव, घोडेका मस्तक, चुल्हाका पाषाण समान आकारकौं धरैं हैं तारे जिनके ऐसे कृत्तिकादि नक्षत्र जाननें ॥ ४४४ ॥

आगैं कृत्तिकादि नक्षत्रनिके परिवाररूप तारानिकों कहैं हैं;—

एकारसयसहस्सं सगसगतारापमाणसंगुणिदं ॥
परिवारतारसंखा कित्तियणक्खत्तपहुदीणं ॥ ४४५ ॥
एकादशशतसहस्रं स्वकस्वकताराप्रमाणसंगुणितम् ॥
परिवारतारा संख्या कृत्तिका नक्षत्रप्रभृतीनाम् ॥ ४४५ ॥

अर्थ—ग्यारह अधिक एकसौ सहित एक हजारकौं अपनें अपनें तारानिका प्रमाणकरि गुणें जो प्रमाण होइ सो कृत्तिका नक्षत्र आदि नक्षत्रनिको परिवाररूप तारेनिकी संख्या जाननी ।

उदाहरण—कृत्तिका नक्षत्रके मूलतारे छह हैं इनिकौं ग्यारहसै ग्यारहकरि गुणे छह हजार छहसै छासठि तारे कृत्तिका नक्षत्रके परिवार के हैं। ऐसें ही रोहिणी आदिके भी जाननें नक्षत्रनिके जे आधिदेवता तिनिके अनुसारी इनिविर्षे वसै है ॥ ४४५ ॥

आगें पंच प्रकार ज्योतिषी देवनिकी आयु प्रमाण कहैं हैं;—

इंदिणसुक्कगुरिदरेलक्खसहस्सासयं च सहपल्लं ॥
पल्लंदलं तु तारे वरावरं पादपादद्धं ॥ ४४६ ॥
इंद्विनशुक्रगुर्वितरेषुलक्षलं सहस्रंशतं च सहपल्यम् ॥
पल्यंदलं तु तारा सुवरमवरं पादपादार्धम् ॥ ४४६ ॥

अर्थः—चंद्रमा सूर्य शुक्र बृहस्पति इतर इनविर्षे क्रमतैं लाख हजारसौ वर्षसहित पल्य अर्द्धपल्य प्रमाण आयु है। भावार्थः-चंद्रमाका आयु लाख वर्ष सहित पल्य प्रमाण है। सूर्यका आयु हजार वर्षसहित पल्य प्रमाण है। शुक्रका आयु सौ वर्षसहित पल्य प्रमाण है बृहस्पतिका आयु पल्य प्रमाण है। इतर बुध मंगल शनैश्चरादिकका आयु आध पल्य प्रमाण है। बहुरि तारे कहिए तारा अर नक्षत्र इनका आयु उत्कृष्ट तौ पाव कहिए पल्यका चौथा भाग प्रमाण है। अर जघन्य पदार्थ कहिए पल्यका आठवां भाग प्रमाण है ॥ ४४६ ॥

आगें चंद्रमा सूर्यनिकी देवांगनानिकौं दोय गाथानिकरि कहै हैं—

चंदाभा य सुसीमापहंकरा अच्चिमालिणी चंदे ॥
सूरेदुदिसूरपहापहंकराअच्चिमालिणी देवी ॥ ४४७ ॥
चंद्राभा च सुसीमाप्रभंकरा अर्चिमालिनी चंद्रे ॥
सूर्ये द्युतिः सूर्यप्रभा प्रभंकरा आर्चिमालिनी देव्यः ॥४४७॥

अर्थ—चंद्राभा, सुसीमा, प्रभंकरा, अर्चिमालिनी ए च्यारि चंद्रमाकै पट्ट देवांगना हैं। बहुरि सूर्यके द्युति, सूर्यप्रभा, प्रभंकरा, अर्चिमालिनी ए च्यारि पट्टदेवी हैं ॥ ४४७ ॥

अर्थ— " उन्मार्गचारी " कहिए जिनमततैं विपरीत धर्मके आचरनवाले, बहुरि " सनिदानाः " कहिए निदानजिननें किया होइ। बहुरि " अनलादिमृता " कहिए अग्नि जल झंपापात आदिकतैं मूए, बहुरि " अकामनिर्जरिणः " कहिए विना अभिलाष बंधादिकके निमित्ततैं परीषह सहनादि करि जिनकै निर्जरा भई बहुरि " कुतपसः " कहिए पंचाग्नि आदि खोटे तपके करनेवाले बहुरि " शबल चारित्राः " कहिए सदोष चारित्रके धरनहारे जे जीव हैं ते भवत्रय जो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी तिनविषैं जाय उपजै हैं ॥ ४५० ॥

ऐसें ज्योतिर्लोकका अधिकार समाप्त भया।

इति श्री नेमिचंद्राचार्य विरचित त्रिलोकसारमें चौथा ज्योतिर्लोकका अधिकार समाप्त भया ॥ ४ ॥

निर्माल्यसंबंधी ध्यानमें रखनेयोग्य श्लोक.

पुत्तकलत्तविहीणो दारिद्दो पंगुमूकबहिरंधो ।
चाण्डालाइकुजादो पूजादाणाइ दव्वहरो ॥ ३२ ॥
(कुंदकुंदाचार्यकृत रयणसार)

" देवतानिवेद्यानिवेद्यग्रहणम् ॥
(श्रीअकलंकाचार्यकृत राजवार्तिक)

प्रमादाद्देवतादत्तनैवेद्यग्रहणं तथा ॥
+ + + इत्येवमंतरायस्य भवन्त्यास्रवहेतवः ॥
(श्रीअमृतचंद्रसूरिकृत तत्त्वार्थसार)

देवशास्त्रगुरूणां भो निर्माल्यं स्वीकरोति यः ॥
वंशच्छेदं परिप्राप्य स पश्चाद्दुर्गतिं भजेत् ॥ ६३ ॥
(श्रीसकलकीर्तिकृत सुभाषितावलि)

इत्यादिवर्णनोपेत नरकेऽर्चानिषेधकाः ।
लभंते च महादुःखं पूजाद्रव्यापहारिणः ॥ ८० ॥
निर्माल्यभक्षका ये च मानवा मदमोहिताः ।
तेऽपि तत्र महादुःखमाजिनः स्युर्न संशयः ॥ ८३ ॥
(श्रीसकलभूषणकृत–उपदेशरत्नमाला)

देवार्चकश्च निर्माल्यभोक्ता जीवविनाशकः ॥
* * * इत्यादिदुष्टसंसर्गं संत्यजेत्पंक्तिभोजने ॥
(पं० सोमसेनकृत त्रिवर्णाचार)

परस्त्रीगमने नूनं देवद्रव्यस्य भक्षणे ।
सप्तम नरकं यान्ति प्राणिनो नात्र संशयः ॥
सोमकीर्तिसूरिकृत–प्रद्युम्नचरित्र)

जो ण य भक्खेदि सयं तस्सण अण्णस्स जुज्जदे दाउं ॥
भुत्तस्स भोज्जस्सहि णत्थि विसेसो तदो कोवि ॥ ७९ ॥
(स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा)